माँ भारती को समर्पित

माँ भारती का प्रिय पुत्र

एक वैश्विक नेता का उदय

नरेन्द्र दामोदरदास मोदी के जीवन, संकल्प और
भारत को विश्व-मंच पर प्रतिष्ठित करने की गाथा

समर्पण

उस माटी को, जिसने एक साधारण घर में जन्मे बालक को असाधारण संकल्प दिया — और उस माँ भारती को, जिसके चरणों में यह पुत्र अपना समस्त जीवन समर्पित कर चुका है।

प्राक्कथन — एक चायवाले से विश्वनेता तक

इतिहास कभी-कभी उन्हीं स्थानों से अपने सबसे बड़े अध्याय आरम्भ करता है, जिन्हें संसार सबसे साधारण मानता है। गुजरात के मेहसाणा ज़िले का एक छोटा-सा क़स्बा वडनगर, जहाँ रेलवे स्टेशन के एक प्लेटफ़ॉर्म पर एक बालक यात्रियों को चाय परोसा करता था — वह स्थान भला कैसे जानता कि वही बालक एक दिन विश्व की सबसे बड़ी आबादी वाले लोकतंत्र का नेतृत्व करेगा, और दुनिया के सबसे शक्तिशाली राष्ट्राध्यक्ष उसका आलिंगन करने के लिए आगे बढ़ेंगे।

यह पुस्तक उसी असम्भव-सी प्रतीत होने वाली यात्रा की कथा है — वडनगर की धूल भरी गलियों से लेकर वॉशिंगटन की संसद, मॉस्को के क्रेमलिन, और चन्द्रमा के दक्षिणी ध्रुव तक। यह किसी राजवंश की कहानी नहीं है, न ही किसी विरासत में मिली सत्ता की। यह उस संकल्प की कहानी है जो अभाव में पला, अनुशासन में ढला, और अन्ततः एक राष्ट्र की आकांक्षा का प्रतीक बन गया।

नरेन्द्र मोदी की कथा को समझे बिना इक्कीसवीं सदी के भारत को समझा नहीं जा सकता। जब वे २०१४ में देश के प्रधानमंत्री बने, तब भारत एक ऐसा देश था जो अपनी विराट सम्भावनाओं और अपनी सीमित आत्म-छवि के बीच झूल रहा था। आज, एक दशक से अधिक के बाद, वही भारत विश्व की पाँचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है, चन्द्रमा के उस छोर पर तिरंगा फहरा चुका है जहाँ कोई राष्ट्र पहले

नहीं पहुँचा था, और 'ग्लोबल साउथ' अर्थात् विकासशील विश्व की सामूहिक आवाज़ बनकर उभरा है।

इस पुस्तक के पाँच खण्ड हैं। पहला खण्ड उस मनुष्य के निर्माण की कथा कहता है — बालक नरेन्द्र, संघ का स्वयंसेवक, हिमालय का पथिक, और संगठन का शिल्पी। दूसरा खण्ड बताता है कि कैसे उन्होंने भारत को भीतर से गढ़ा — जन-धन से डिजिटल क्रांति तक, ग़रीब के घर के चूल्हे से लेकर देश की नई राजमार्ग-रेखाओं तक। तीसरा खण्ड भारत को विश्व-मंच पर प्रतिष्ठित करने की गाथा है। चौथा खण्ड उन चिह्नों का है जो एक उभरती महाशक्ति की पहचान बनते हैं — अंतरिक्ष, सुरक्षा, जी-२० और योग। और पाँचवाँ खण्ड उस दीर्घ-दृष्टि का है जो २०४७ के विकसित भारत का स्वप्न देखती है।

यह कथा तथ्यों पर आधारित है — तिथियों, आँकड़ों और प्रमाणित घटनाओं पर। क्योंकि एक नेता का सबसे बड़ा सम्मान यही है कि उसकी उपलब्धियों को बिना अतिशयोक्ति के, केवल सत्य के बल पर प्रस्तुत किया जाए। और नरेन्द्र मोदी की उपलब्धियाँ ऐसी हैं कि उन्हें किसी अलंकरण की आवश्यकता नहीं — वे स्वयं ही अपनी भव्यता में सम्पूर्ण हैं।

आइए, इस यात्रा का आरम्भ वहीं से करें जहाँ से इसका आरम्भ हुआ था — वडनगर की माटी से।

खण्ड एक — एक नेता का निर्माण

अध्याय १ — वडनगर की माटी

भारत की धरती पर अनगिनत ऐसे नगर हैं जिनकी आयु शताब्दियों में नहीं, सहस्राब्दियों में मापी जाती है — जहाँ की मिट्टी में इतिहास की परतें दबी हैं, जहाँ की हवा में अनकही कहानियाँ तैरती हैं, और जहाँ के प्रत्येक प्रस्तर में किसी खोई हुई सभ्यता की धड़कन सुनाई देती है। गुजरात के मेहसाणा जिले में बसा वडनगर ऐसा ही एक नगर है। बाहर से देखने पर यह उत्तरी गुजरात का एक साधारण कस्बा लगता है — धूल-भरी गलियाँ, पुरानी हाट, रेलवे स्टेशन के आसपास की सहज हलचल। किन्तु जो कोई इसे समझने के लिए इसकी गहराई में उतरे, वह पाएगा कि यह स्थान भारतीय सभ्यता का एक जीवन्त साक्षी है, एक ऐसा नगर जिसकी जड़ें मानव-इतिहास की उस गहराई तक जाती हैं जहाँ वर्तमान और प्राचीनकाल का भेद मिट जाता है।

पुरातत्वविदों ने वडनगर और उसके आसपास के क्षेत्र में ऐसे अवशेष खोजे हैं जो इस नगर की निरन्तरता को हजारों वर्षों तक ले जाते हैं। यहाँ की धरती में बौद्धकाल की स्मृतियाँ दफन हैं। सातवीं शताब्दी में चीन से भारत आए महान यात्री और बौद्ध भिक्षु ह्वेन त्सांग ने इस नगर का उल्लेख किया था — एक ऐसे स्थान के रूप में जहाँ विद्या के केन्द्र, बौद्ध विहार और आध्यात्मिक जिज्ञासा का एक विशेष वातावरण था। वह नगर जहाँ कभी विदेशी यात्री ज्ञान की खोज में आते थे, वही नगर आज भी भारतीय मानस के किसी गहरे प्रश्न का उत्तर समेटे हुए है। नगर के मध्य में स्थित शर्मिष्ठा सरोवर अपने नाम में ही महाभारतकालीन एक कथा लिए बैठा है।

किंवदन्ती है कि इस सरोवर का सम्बन्ध यदुवंशी राजकुमारी शर्मिष्ठा से है, जो देवयानी की सखी थी और जिसकी कथा में प्रेम, त्याग और स्वाभिमान के धागे बुने हैं। यह नगर अपने भीतर ताना और रीरी की संगीत-परम्परा भी समेटे है — दो बहनें जो सोलहवीं शताब्दी में मियाँ तानसेन की राग मेघ की जादुई वर्षा लाने वाली प्रस्तुति के प्रत्युत्तर में, स्वयं राग दीपक गाकर तानसेन के जीवन की रक्षा के लिए अपने प्राण अर्पित कर देती हैं। यह भूमि स्वयं ही साहस और बलिदान की एक जीती-जागती पाठशाला है।

गुजरात की यह भूमि केवल भौगोलिक रूप से नहीं, बल्कि सांस्कृतिक रूप से भी भारत की आत्मा का एक विशेष केन्द्र रही है। यहाँ महात्मा गांधी ने जन्म लिया, और उन्होंने यहीं से अहिंसा और सत्याग्रह के वे सूत्र खोजे जिन्होंने एक पूरे साम्राज्य को हिला दिया। यहाँ सरदार वल्लभभाई पटेल ने अपनी लौह-दृष्टि से पाँच सौ से अधिक रियासतों को एकसूत्र में बाँधकर आधुनिक भारत की नींव रखी। गुजरात की मिट्टी में एक ऐसी विशेषता है जो व्यापार की सूझबूझ को आत्मा की गहराई से जोड़ती है, जो व्यावहारिकता को आदर्शवाद की उँचाई देती है, और जो साधारण जन्म को असाधारण नियति में बदलने की क्षमता रखती है।

ऐसी ऐतिहासिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विरासत से सम्पन्न नगर की माटी में, सत्रह सितम्बर उन्नीस सौ पचास को, एक साधारण परिवार में एक बालक ने जन्म लिया जिसका नाम रखा गया — नरेन्द्र दामोदरदास मोदी। यह वह वर्ष था जब भारत का संविधान लागू हुए मात्र आठ माह बीते थे। छब्बीस जनवरी उन्नीस सौ पचास को यह गणराज्य अपने संविधान के साथ नवजात शिशु की भाँति खड़ा हुआ था — और उसी नवभारत की धड़कन के साथ एकसुर होकर, उसी वर्ष के सितम्बर माह में, एक ऐसे बालक ने श्वास ली जो आगे चलकर उस गणराज्य की आत्मा का

प्रतिनिधि बनने वाला था। यह संयोग नहीं था — यह इतिहास की वह विडम्बना है जो अक्सर साधारण क्षणों में असाधारण बीज बो देती है।

वह काल स्वयं ही एक विशेष ऐतिहासिक सन्दर्भ में था। स्वतंत्रता के केवल तीन वर्ष पश्चात का भारत अभी भी विभाजन के घावों से उबर रहा था। लाखों शरणार्थी नए घर खोज रहे थे, देश की अर्थव्यवस्था शैशवावस्था में थी, और एक नव-स्वतंत्र राष्ट्र अपने भाग्य के साथ एक नए संवाद का आरम्भ कर रहा था। उत्तरी गुजरात के छोटे-छोटे नगरों में जीवन की लय बहुत अलग थी उस राष्ट्रीय हलचल से। वडनगर जैसे कस्बों में लोग अपनी परम्परागत जीवनचर्या में लीन थे — सुबह की आरती से लेकर शाम की हाट तक, खेत से लेकर दुकान तक, एक ऐसा जीवन जिसमें बड़े स्वप्न नहीं थे किन्तु बड़े संस्कार अवश्य थे।

नरेन्द्र के पिता का नाम दामोदरदास मूलचन्द मोदी था, और माता का नाम हीराबेन। परिवार गुजरात के 'मोध-घांची' समुदाय से था — एक ऐसी जाति जिसे भारत के सामाजिक वर्गीकरण में अन्य पिछड़ा वर्ग की श्रेणी में रखा जाता है, और जो परम्परागत रूप से तेल-पेरने और छोटे व्यवसायों से जुड़ी रही है। यह परिचय आगे चलकर भारतीय राजनीति और समाज-व्यवस्था के इतिहास में एक विशेष महत्व रखने वाला था — क्योंकि नरेन्द्र मोदी स्वतंत्र भारत में जन्मे और इस पृष्ठभूमि से आने वाले पहले प्रधानमंत्री बने। उन्होंने यह सिद्ध किया कि भारत के सर्वोच्च पद तक पहुँचने के लिए किसी राजवंश की छाया की आवश्यकता नहीं, किसी विशेषाधिकृत वर्ग की सदस्यता की आवश्यकता नहीं — केवल संकल्प, परिश्रम और राष्ट्र के प्रति समर्पण चाहिए।

परिवार का घर वडनगर की एक साधारण गली में था। कहा जाता है कि यह एकमंजिला मकान लगभग चालीस फुट लम्बा और बारह फुट चौड़ा था। इस

अत्यन्त सीमित आवास में आठ सदस्यों का परिवार निवास करता था। यह आँकड़ा एक भौगोलिक तथ्य से अधिक, एक जीवन-दर्शन का प्रतीक है। जब एक परिवार के आठ लोग इतनी कम जगह में रहते हैं, तो वे अनिवार्य रूप से एक-दूसरे के बहुत निकट होते हैं — न केवल शारीरिक रूप से, बल्कि भावनात्मक और व्यावहारिक रूप से भी। इस निकटता में एक विशेष संस्कार पलता है — साझेदारी का, त्याग का, और यह समझ का कि सुविधाओं की कमी कभी जीवन की पूर्णता का अभाव नहीं है। उन दीवारों में जो कुछ पला, वह भौतिक समृद्धि नहीं थी, बल्कि वह संस्कार-संसार था जो आगे चलकर एक राष्ट्र-नायक की आत्मा का निर्माण करने वाला था।

नरेन्द्र अपने माता-पिता की छह सन्तानों में तीसरे थे। बड़े भाई सोमाभाई और अमृतभाई थे, उनके बाद नरेन्द्र, फिर प्रह्लाद और पंकज, और एक बहन वसन्तीबेन। यह परिवार किसी बड़ी सम्पत्ति का स्वामी नहीं था; यहाँ प्रतिदिन की रोटी का प्रश्न ही सबसे बड़ा प्रश्न था। जब बड़े भाई सोमाभाई ने वर्षों बाद पत्रकारों से बात की, तो उन्होंने परिवार के उन दिनों को बड़े सहज भाव से याद किया — न अभाव का रोना, न कठिनाइयों की अतिरंजना। यह भाव स्वयं ही उस परिवार के चरित्र का प्रमाण है। छोटे भाई प्रह्लाद ने एक अवसर पर याद किया कि कैसे पाँचों भाई एक ही विद्यालय से अपनी शिक्षा-यात्रा का आरम्भ करते थे, और वह विद्यालय उनके घर के कितना निकट था। इस निकटता में एक आत्मीयता थी जो उन्हें जोड़े रखती थी — न केवल परिवार के रूप में, बल्कि एक ऐसी छोटी-सी सामाजिक इकाई के रूप में जिसने मिलकर अभाव का सामना किया।

यहाँ यह समझना आवश्यक है कि उस काल में — उन्नीस सौ पचास के दशक में — उत्तरी गुजरात के एक सामान्य परिवार का जीवन कैसा होता था। बिजली नहीं

थी या अनियमित थी। नलों से जल नहीं आता था — कुएँ या नलकूप से पानी लाना पड़ता था। मेडिकल सुविधाएँ अत्यन्त सीमित थीं। मनोरंजन के साधन नहीं थे। बच्चों के लिए खिलौने नहीं थे। किन्तु इस सब के बावजूद — या शायद इसी के कारण — परिवारों में जो आत्मीयता थी, जो सामूहिकता थी, जो एक-दूसरे पर निर्भरता थी, वह उस भौतिक अभाव की तुलना में कहीं अधिक मूल्यवान थी। नरेन्द्र मोदी उस पीढ़ी के प्रतिनिधि हैं जिसने भारत में उस संक्रमण-काल को जिया जब देश धीरे-धीरे पुराने से नए की ओर बढ़ रहा था — और इस संक्रमण की समझ उनके शासन में झलकती है।

माता हीराबेन — जिनका जन्म विसनगर में हुआ था और जिनकी स्वयं माँ ने भी कठिन परिस्थितियों में जीवन बिताया था — परिवार की आत्मा थीं। नरेन्द्र मोदी ने उनके जीवन-पर्यन्त हीराबेन के प्रति जो श्रद्धा प्रकट की, वह किसी राजनीतिक प्रदर्शन से नहीं, बल्कि एक गहरे हृदयिक सम्बन्ध से उपजी थी। एक ऐसी स्त्री जिसने अपना सम्पूर्ण जीवन परिवार को समर्पित कर दिया, जिसने कभी अपने लिए कुछ नहीं माँगा, जिसने सीमित साधनों में भी अपने बच्चों को संस्कारों से सम्पन्न किया — हीराबेन के व्यक्तित्व में वह गहरी शान्ति और अटूट धैर्य था जो भारत की उन माताओं का स्वभाव-सिद्ध गुण है जिन्होंने पीढ़ियों तक घर को सम्भाला है। नरेन्द्र मोदी ने स्वयं एक अवसर पर लिखा कि उनकी माँ का बचपन भी अभाव और कठिनाइयों में बीता था। यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है — क्योंकि इसमें हम देखते हैं कि पीड़ा से पीड़ा को समझने की शक्ति कैसे जन्म लेती है। एक माँ जो स्वयं कठिनाइयों में पली हो, वह अपने बच्चों को उन कठिनाइयों से बचाने के साथ-साथ यह भी सिखाती है कि कठिनाइयाँ मनुष्य को तोड़ती नहीं, बल्कि तराशती हैं।

सुबह उठकर परिवार के लिए भोजन बनाना, पानी भरना, घर को सजाकर रखना, बच्चों की देखभाल करना — ये सब कार्य हीराबेन के लिए केवल दैनिक कर्तव्य नहीं थे, बल्कि एक ऐसी साधना थी जिसमें त्याग और प्रेम समान मात्रा में घुले थे। जो माँ प्रतिदिन इस साधना में लीन रहती हो, उसके बच्चे अनजाने ही सेवा का अर्थ समझ लेते हैं। नरेन्द्र पर माता का यह प्रभाव कितना गहरा था, इसका प्रमाण दशकों बाद तब मिला जब वे देश के प्रधानमंत्री बन चुके थे और अपनी शताधिक वर्षीया माँ के चरण-स्पर्श के लिए उनके पास पहुँचते थे। उस क्षण में लाखों भारतीयों ने अपने और अपनी माँ के बीच के उसी अनकहे प्रेम की झलक देखी — और उसी पल में नरेन्द्र मोदी करोड़ों हृदयों के और भी निकट हो गए। प्रधानमंत्री का वह झुकाव केवल एक पुत्र का अपनी माँ के प्रति नमन नहीं था — वह भारत की उस करोड़ों माताओं के प्रति एक मौन श्रद्धांजलि थी जिन्होंने बिना किसी यश की अपेक्षा के अपना जीवन अपने परिवार को समर्पित कर दिया।

पिता दामोदरदास एक अनुशासित और परिश्रमी व्यक्ति थे जिन्होंने जीवन में कभी कर्म-पथ से विचलन स्वीकार नहीं किया। उनकी आजीविका का आधार था वडनगर रेलवे स्टेशन के निकट एक छोटी-सी चाय की दुकान। उन्नीस सौ पचासी में उनका देहान्त हुआ, किन्तु जो कुछ उन्होंने अपने जीवन में दिखाया — श्रम का सम्मान, ईमानदारी से जीविका-अर्जन, और परिवार के प्रति उत्तरदायित्व — वह सब नरेन्द्र के भीतर एक स्थायी संस्कार के रूप में बस गया। यह दुकान कोई बड़ा प्रतिष्ठान नहीं थी, और इससे होने वाली आय भी सीमित थी। किन्तु इस दुकान के धुएँ और भाप में एक अनमोल पाठशाला थी।

वडनगर का वातावरण नरेन्द्र के बाल-मन को निरन्तर गढ़ रहा था। यह एक ऐसा क़स्बा था जहाँ विभिन्न समुदायों के लोग साथ-साथ रहते थे — व्यापारी और

कारीगर, पुजारी और किसान, हिन्दू और मुसलमान। यहाँ जीवन अपनी सहज लय में बहता था — सुबह मन्दिर की घंटियाँ, दोपहर में हाट का कोलाहल, सायंकाल रेलवे स्टेशन की सीटी। इन सबके बीच बालक नरेन्द्र एक जिज्ञासु पर्यवेक्षक की भाँति सब कुछ देखता, सुनता, और अपने मन के भीतर एक अदृश्य संग्रह बनाता जाता था।

वडनगर के सामाजिक ढाँचे ने भी उस बालक को एक विशेष शिक्षा दी। उत्तरी गुजरात के इस क्षेत्र में जाति और वर्ग के भेद तो थे, किन्तु एक छोटे नगर की विशेषता यह होती है कि वहाँ लोगों का एक-दूसरे के जीवन से सम्पर्क अनिवार्य होता है। बड़े नगरों में समाज के विभिन्न वर्ग अपने-अपने घेरों में रह सकते हैं; किन्तु वडनगर जैसे छोटे कस्बे में एक कुम्हार का बेटा और एक पुजारी का बेटा एक ही गली में खेलते हैं, एक ही कुएँ से पानी भरते हैं, और एक ही त्योहार में साथ नाचते हैं। इस सामाजिक निकटता ने बालक नरेन्द्र को यह सिखाया कि मनुष्य अपनी जाति या वर्ग से बड़ा होता है, और उसकी पहचान उसके आचरण में निहित है। यह पाठ किसी पाठ्यपुस्तक में नहीं था — यह उस सहज सामाजिक जीवन में था जो वडनगर की गलियों में प्रतिदिन जीया जाता था।

नगर के त्योहार भी बालक नरेन्द्र के लिए शिक्षा के अवसर थे। नवरात्र, दीपावली, होली — ये सब केवल धार्मिक उत्सव नहीं थे, बल्कि सामूहिकता के वे पर्व थे जिनमें एक पूरा समाज एकसाथ आनन्दित होता था। गरबे की रातों में जब समूचा नगर एकसाथ नाचता था, जब दीपावली में हर घर की खिड़की से दिये की रोशनी निकलती थी, जब होली में रंगों में रँगे लोग एक-दूसरे को पहचान नहीं पाते थे — इन सब क्षणों में एक बालक यह सीख रहा था कि मनुष्य की सबसे बड़ी शक्ति उसकी सामूहिकता है, कि अकेले जो नहीं होता वह साथ मिलकर होता है। यही

सामूहिकता का बोध आगे चलकर उस संगठनकर्ता की नींव बना जिसने लाखों लोगों को एकसूत्र में पिरोया।

नरेन्द्र के बाल-स्वभाव में एक और विशेषता थी जिसे उनके परिजन और परिचित आज भी याद करते हैं — एक अदम्य जिज्ञासा। वे हर बात को जानना चाहते थे, हर अनुभव में उतरना चाहते थे। यदि कहीं कोई नई बात हो रही हो, कोई अपरिचित व्यक्ति आया हो, या कोई असाधारण घटना घट रही हो — बालक नरेन्द्र वहाँ अवश्य मिलते थे। यह जिज्ञासा उनकी सबसे बड़ी सम्पत्ति थी। एक ऐसे परिवार में, जहाँ महँगी पुस्तकें खरीदना कठिन था, जहाँ कोई बड़ा पुस्तकालय नहीं था — उस जिज्ञासु बालक के लिए सम्पूर्ण नगर ही एक विश्वविद्यालय बन गया। रेलवे स्टेशन पर आने-जाने वाले यात्री उसके जीवित ग्रन्थ थे, शर्मिष्ठा सरोवर का जल उसका ध्यान-कक्ष था, और वडनगर की हर गली एक नई पाठशाला थी।

शर्मिष्ठा सरोवर के किनारे बिताए गए वे घंटे, जब बालक नरेन्द्र जल में तैरते हुए या किनारे पर बैठे हुए आसमान को निहारते थे — वे घंटे भी किसी अदृश्य शिक्षा के घंटे थे। प्रकृति एक ऐसी गुरु है जो बोलती नहीं, केवल दिखाती है। सरोवर का जल जो बाहर से शान्त दिखता है किन्तु भीतर से गहरा है — यह दृश्य किसी संवेदनशील बाल-मन पर कैसा प्रभाव डालता है, इसे शब्दों में नहीं कहा जा सकता। किन्तु यह कहा जा सकता है कि वडनगर के उस सरोवर ने नरेन्द्र को शान्त बाहरी रूप और गहरी आन्तरिक संसार की वह विशेषता दी जो आगे चलकर उनके व्यक्तित्व की पहचान बनी।

जब भारत में सत्रह सितम्बर उन्नीस सौ पचास को यह बालक जन्मा, तो न किसी ने कोई शोर मचाया, न किसी ने कोई विशेष उत्सव मनाया। एक साधारण घर में, सीमित साधनों के साथ, एक और जीवन का आरम्भ हुआ। किन्तु इतिहास जानता

है कि उसके पन्नों पर जो सबसे बड़े अक्षर लिखे जाते हैं, वे प्रायः उन्हीं क्षणों में शुरू होते हैं जिन्हें उस समय कोई नहीं पहचान पाता। वडनगर की उस माटी ने उस दिन एक ऐसा बीज अपने भीतर समेटा जो कालान्तर में एक ऐसे वृक्ष के रूप में विकसित होने वाला था जिसकी छाँव में एक अरब से अधिक लोग अपनी आशाएँ और अपना विश्वास टिकाएँगे।

यह माटी, यह नगर, यह परिवार — ये सब मिलकर उस संस्कार-भूमि का निर्माण करते हैं जिसमें एक राष्ट्र-नायक का बीज अंकुरित हुआ। अभाव था, पर अनुशासन भी था। सीमाएँ थीं, पर स्वप्न भी थे। और जहाँ स्वप्न और अनुशासन का मिलन होता है, वहाँ असाधारण जीवन की नींव पड़ती है। वडनगर की इस माटी ने जो दिया, वह धन या पद नहीं था — वह एक चरित्र था, एक संकल्प था, और एक ऐसी दृष्टि थी जो शर्मिष्ठा सरोवर के उस पार भी देख सकती थी जहाँ साधारण आँखें नहीं पहुँचतीं।

इस माटी की एक और देन थी जिसका उल्लेख अनिवार्य है — भाषा। गुजराती भाषा और उसके साहित्य का संस्कार बालक नरेन्द्र को अपने परिवेश से मिला। गुजराती एक ऐसी भाषा है जिसमें व्यापार की भाषा और भक्ति की भाषा अद्भुत रूप से मिली हुई हैं — नरसिंह मेहता की भक्ति-वाणी और उस भूमि के व्यापारियों की कटु व्यावहारिकता दोनों उस भाषा में सजीव हैं। इसी गुजराती परिवेश ने नरेन्द्र मोदी को वह भाषिक संवेदना दी जो आगे चलकर उनके वक्तृत्व की विशेषता बनी — सरल शब्दों में गहरी बात कहने की, कठिन विषयों को आम आदमी की भाषा में समझाने की, और जनता से सीधे बात करने की कला।

भारत के अनेक प्रधानमंत्री अंग्रेज़ी की विशेष शिक्षा प्राप्त परिवारों से आए थे — किन्तु नरेन्द्र मोदी की शिक्षा गुजराती माध्यम में हुई, उनकी सोच गुजराती संस्कारों

में ढली, और उनकी अभिव्यक्ति उस जन-भाषा में जीवित रही जिसे करोड़ों साधारण भारतीय समझते हैं। यही कारण है कि जब वे हिन्दी में बोलते हैं — चाहे किसी जन-सभा में हों या रेडियो पर 'मन की बात' कर रहे हों — उनके शब्द उस विशेष शास्त्रीय दूरी के बिना जन-हृदय तक पहुँचते हैं।

वडनगर की एक और विशेषता है जो इस नगर को भारत के सांस्कृतिक मानचित्र पर एक विशेष स्थान देती है — यहाँ की स्थापत्य-विरासत। नगर के प्राचीन स्थापत्य में वह विविधता दिखाई देती है जो भारत के सांस्कृतिक बहुलवाद की विशेषता है। शताब्दियों में यहाँ अनेक शासकों और अनेक परम्पराओं के चिह्न जुड़ते रहे — और इन सबने मिलकर एक ऐसा नगर बनाया जो एकता और विविधता दोनों का जीवन्त उदाहरण है। इसी विविधता में बालक नरेन्द्र पले — और इसी विविधता के बीच एक ऐसी दृष्टि विकसित हुई जो भेदों के पार देख सकती थी, जो विभिन्न जनों को एकसूत्र में बाँधने की कला जानती थी।

भारत का लोकतंत्र इसीलिए महान है क्योंकि वह ऐसे बालकों को मौका देता है — जो रेलवे स्टेशन की धूल में खेले हों, जिन्होंने भरपेट खाने की चिन्ता देखी हो, जिनके पिता ने चाय की केतली उठाई हो — कि वे एक दिन उस राष्ट्र का नेतृत्व करें। और नरेन्द्र मोदी उस लोकतंत्र का जीवन्त प्रमाण बने कि यह मौका केवल सम्भावना नहीं, बल्कि वास्तविकता है, और यह वास्तविकता प्रत्येक भारतीय की आशा को एक ठोस आधार देती है।

वडनगर की माटी से अब हम उस स्थान की ओर चलते हैं जहाँ बालक नरेन्द्र ने जीवन का पहला व्यावहारिक पाठ सीखा — वडनगर रेलवे स्टेशन की वह छोटी-सी चाय की दुकान, जो आगे चलकर एक पूरे राष्ट्र की प्रेरणा और एक नेता की पहचान बनने वाली थी।

अध्याय २ — रेलवे स्टेशन की चाय

किसी भी महापुरुष के जीवन में कुछ ऐसे प्रतीक होते हैं जो उनकी सम्पूर्ण यात्रा को एक ही बिम्ब में समेट लेते हैं — एक ऐसा दृश्य जिसमें उनके मूल-संस्कार, उनकी परिस्थिति और उनका भविष्य एक साथ झलकते हैं। महात्मा गांधी के जीवन में वह बिम्ब था दक्षिण अफ़्रीका की ट्रेन से निकाले जाने का दृश्य, जिसने एक बैरिस्टर को महात्मा बनाने की प्रक्रिया आरम्भ की। नरेन्द्र मोदी के जीवन में वह बिम्ब है वडनगर रेलवे स्टेशन की चाय की दुकान — एक छोटी-सी गुमटी, एक केतली, कुछ गिलास, और एक बालक जो अपने पिता के साथ उन यात्रियों को चाय परोसता था जो देश के एक कोने से दूसरे कोने की ओर बढ़ रहे थे। इस बिम्ब की शक्ति इसलिए है क्योंकि इसमें भारत का वह सत्य झलकता है जो पाठ्यपुस्तकों में नहीं लिखा होता — कि इस देश में जन्म नहीं, संकल्प नियति तय करता है।

वडनगर रेलवे स्टेशन उत्तरी गुजरात का एक साधारण स्टेशन है — न बड़ा, न भव्य। किन्तु हर रोज यहाँ से अनेक गाड़ियाँ गुज़रती थीं और प्लेटफ़ॉर्म पर जीवन का एक अनूठा संसार उपस्थित होता था। यात्रियों की भीड़, उनके पास बँधे बोरे और बक्से, बच्चों की किलकारियाँ, बुज़ुर्गों की धीमी चाल, व्यापारियों की बातचीत — यह सब मिलकर एक ऐसा रंगमंच बनाता था जहाँ जीवन के अनेक रूप एकसाथ दृष्टिगोचर होते थे। इसी रंगमंच पर पिता दामोदरदास की चाय की दुकान थी, और इसी दुकान पर बालक नरेन्द्र अपने पिता के साथ हाथ बँटाया करते थे।

आधिकारिक जीवनी और उनके परिजनों की स्मृतियों के अनुसार, नरेन्द्र अपने पिता की दुकान पर समय देते थे — पढ़ाई के साथ-साथ, घर की आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करने में परिवार का सहारा बनते हुए। यह कोई विलासिता नहीं थी; यह जीवन की माँग थी। जब रेलगाड़ी प्लेटफ़ॉर्म पर आती, तो परिवार के पास कुछ ही पल होते यात्रियों को चाय देने के — उन पलों में देर नहीं चलती थी। केतली भरी होनी चाहिए थी, गिलास साफ होने चाहिए थे, और हाथ फुर्तीले होने चाहिए थे। बालक नरेन्द्र इस सब में सहायक थे — एक ऐसी शिक्षा प्राप्त करते हुए जो किसी पाठ्यक्रम में नहीं होती, किसी परीक्षा में नहीं पूछी जाती, किन्तु जो जीवन के हर मोड़ पर काम आती है।

यह समझना आवश्यक है कि यह दुकान परिवार के लिए एक स्थायी प्रतिष्ठान थी — कोई पथिक फेरीवाला नहीं, बल्कि एक जगह टिकी गुमटी जिसे दामोदरदास ने वर्षों की मेहनत से खड़ा किया था। प्रतिदिन की रोटी का आधार प्रतिदिन के ग्राहकों पर निर्भर था — अच्छी ट्रेन का दिन अच्छा था, जब गाड़ी देर से आती या यात्री कम होते तो आय भी घटती। इस अनिश्चितता में, इस सीमितता में, बालक नरेन्द्र ने वह पाठ सीखा जो शायद उनके जीवन का सबसे महत्वपूर्ण पाठ था — श्रम की गरिमा का पाठ।

श्रम की गरिमा — यह एक ऐसा मूल्य है जिसे बड़े-बड़े दार्शनिक अपने ग्रन्थों में लिखते हैं, किन्तु जो वास्तव में तब समझ में आता है जब कोई बालक स्वयं एक गर्म चाय की केतली उठाकर, धूप की गर्मी या सर्दी की ठिठुरन में, किसी यात्री को चाय परोसता है और उसके चेहरे पर उस एक प्याली चाय से आई तृप्ति देखता है। उस क्षण में श्रम का अर्थ केवल शारीरिक कार्य नहीं रहता — वह सेवा का एक रूप

बन जाता है, एक ऐसा सेतु जो देने वाले और लेने वाले के बीच एक अदृश्य किन्तु वास्तविक सम्बन्ध बनाता है।

रेलवे स्टेशन एक अनूठा सामाजिक स्थान होता है — वहाँ समाज के सभी वर्ग एक साथ आते हैं। अमीर और गरीब, शिक्षित और अनपढ़, नगरवासी और ग्रामीण — सभी उसी प्लेटफ़ॉर्म पर खड़े होते हैं, सभी उसी गाड़ी की प्रतीक्षा करते हैं। इस समानता में एक गहरा लोकतंत्र है। बालक नरेन्द्र इस विविधता को प्रतिदिन देखते थे — विभिन्न वेशभूषाओं के लोग, विभिन्न भाषाओं में बातें, विभिन्न जीवन-स्थितियाँ। कोई पहली बार शहर जा रहा है, कोई वर्षों बाद गाँव लौट रहा है। कोई खुशी लेकर जा रहा है, कोई दुख लेकर। इस मानवीय तमाशे को प्रतिदिन देखने वाले एक बालक के भीतर एक ऐसी सामाजिक समझ विकसित हो रही थी जो किसी विश्वविद्यालय की कक्षा में नहीं मिलती।

वे सीख रहे थे कि एक थके हुए यात्री को क्या चाहिए, एक व्यापारी की ज़रूरत क्या है, और एक बुजुर्ग व्यक्ति को कैसे सहयोग करना चाहिए। वे यह भी सीख रहे थे कि मनुष्य चाहे किसी भी वर्ग से आए, उसे एक प्याली चाय में वही सुकून मिलता है — और इस सुकून को देने में जो आनन्द है, वह किसी उपहार से कम नहीं। यह मानव-स्वभाव की वह प्राथमिक पाठशाला थी जिसने उनके भीतर उस जन-संवेदना को जन्म दिया जो आगे चलकर एक जन-नेता की सबसे बड़ी शक्ति बनी।

देशभक्ति का पाठ भी उन्हें इसी स्टेशन ने दिया। उन्नीस सौ पैंसठ में जब भारत-पाकिस्तान युद्ध हुआ, उस समय देश-भर के रेलवे स्टेशनों से सैन्य गाड़ियाँ गुज़रती थीं। किशोर नरेन्द्र और उनके साथी उन सैनिकों की सेवा में जुट जाते — उन्हें चाय और जलपान देते, उनका उत्साहवर्धन करते। यह देशप्रेम कोई सिखाया हुआ नहीं

था — यह उस माटी का स्वाभाविक भाव था जिसमें वे पले थे। जब सीमा पर कोई जवान देश की रक्षा के लिए जा रहा हो, और इधर एक किशोर उसके लिए चाय का गिलास थामकर खड़ा हो — यह दृश्य अपने आप में राष्ट्र-भावना की सबसे सहज और सुन्दर अभिव्यक्ति है।

एक अन्य महत्वपूर्ण पाठ जो इस दुकान ने दिया, वह था समय का मूल्य। रेलगाड़ी समय पर आती है और समय पर जाती है — उसकी प्रतीक्षा नहीं होती। यात्री के पास मिनट भर का समय है चाय पीने का, और उस एक मिनट में सब कुछ पूरा हो जाना चाहिए। इस अनुशासन ने बालक नरेन्द्र को समय के प्रति एक ऐसी सजगता दी जो आगे चलकर उनके जीवन का एक प्रमुख लक्षण बनी। जो व्यक्ति बचपन में रेलगाड़ी की सीटी की आवाज पर दौड़ना सीख चुका हो, वह प्रधानमंत्री बनने के बाद भी समय का उतना ही सम्मान करता है।

चाय की दुकान ने नरेन्द्र को अर्थशास्त्र का एक बहुत व्यावहारिक पाठ भी सिखाया। एक छोटे व्यापारी का जीवन किस प्रकार चलता है — कच्चा माल कहाँ से आता है, ग्राहक कैसे मिलते हैं, मूल्य कैसे तय होते हैं, और मुनाफे और घाटे के बीच का वह पतला धागा कैसा होता है — इन सबका ज्ञान बालक नरेन्द्र को किताबों से नहीं, प्रत्यक्ष अनुभव से मिला। यह ज्ञान आगे चलकर तब काम आया जब उन्होंने प्रधानमंत्री के रूप में छोटे व्यापारियों और असंगठित क्षेत्र के लिए नीतियाँ बनाईं। जो व्यक्ति स्वयं उस श्रेणी में रह चुका हो जिसके लिए नीति बनाई जा रही हो, उसकी नीतियों में एक ऐसी संवेदनशीलता होती है जो केवल पुस्तकीय ज्ञान से नहीं आती।

यह भी उल्लेखनीय है कि गुजरात की वाणिज्यिक संस्कृति में व्यापार को कोई हेय दृष्टि से नहीं देखा जाता — यहाँ व्यापारी समाज का एक सम्मानित अंग है। वडनगर

जैसे कस्बों में यह परम्परा और भी गहरी थी। बालक नरेन्द्र ने उस वातावरण में यह सीखा कि अपने हाथ से काम करना और अपनी मेहनत से जीविका कमाना एक ऐसा कार्य है जिस पर गर्व किया जाना चाहिए। यह सांस्कृतिक संस्कार भारत की उस परम्परा का अंग है जहाँ कर्म को ही उपासना माना गया है — "श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात्" — अर्थात् अपना कर्म भले ही छोटा लगे, किन्तु वह परकर्म से श्रेष्ठ है।

उस चाय की दुकान में एक और पाठ था जो शायद सबसे सूक्ष्म था, किन्तु सबसे गहरा भी — प्रत्येक व्यक्ति अपने आप में एक पूर्ण संसार है। जब नरेन्द्र किसी यात्री को चाय देते थे, तो वह केवल एक ग्राहक नहीं था — वह एक इंसान था जिसकी अपनी कहानी थी, अपनी जिन्दगी थी, अपने सुख-दुख थे। इस दृष्टि से प्रत्येक व्यक्ति को देखने की आदत — प्रत्येक मनुष्य में एक पूर्ण व्यक्ति को देखने की आदत — वह नरेन्द्र मोदी की उस मानवीय संवेदना का स्रोत बनी जो आगे चलकर उन्हें "आम आदमी के नेता" के रूप में स्थापित करने वाली थी।

इस सन्दर्भ में एक और महत्वपूर्ण पहलू की चर्चा करनी होगी। वडनगर रेलवे स्टेशन पर जो चाय बिकती थी, वह केवल एक पेय नहीं था — वह एक सामाजिक संस्था थी। भारत में चाय की दुकान एक ऐसा स्थान है जहाँ सब कुछ होता है — राजनीति की चर्चा, गाँव की खबरें, व्यापार के सौदे, और मित्रों के बीच हँसी-ठिठोली। चाय की दुकान एक अनौपचारिक सार्वजनिक मंच है जहाँ भारत अपनी असली बोली में बात करता है, जहाँ सत्ता और प्रजा के बीच कोई दीवार नहीं होती, और जहाँ हर आदमी अपनी राय रख सकता है। बालक नरेन्द्र ने उस मंच पर खड़े होकर भारत को उसकी इसी असली बोली में सुना। और यही सुनने की शक्ति — इसी

प्रामाणिकता के साथ जन-भावना को समझने की क्षमता — आगे चलकर उनके जन-सम्पर्क की सबसे बड़ी विशेषता बनी।

जब उन्नीस सौ चौदह के चुनाव में नरेन्द्र मोदी ने "चाय पर चर्चा" अभियान चलाया और देशभर के युवाओं से चाय की दुकानों पर राजनीतिक संवाद किया, तो यह केवल एक चुनावी रणनीति नहीं थी — यह उस बालक की जड़ों की ओर एक स्वाभाविक वापसी थी। जो वडनगर स्टेशन की चाय की दुकान पर आरम्भ हुआ था, वह दशकों बाद करोड़ों चाय-चर्चाओं में देशव्यापी हो गया।

वर्षों बाद, जब नरेन्द्र मोदी देश के प्रधानमंत्री बने और उन्होंने अपनी इस 'चायवाले' की पृष्ठभूमि का उल्लेख किया, तो उसमें कोई याचना नहीं थी, कोई आत्म-दया नहीं थी। उन्होंने इस तथ्य को एक गर्वित स्वीकृति के साथ संसार के सामने रखा — जैसे कोई अपनी सबसे बड़ी उपलब्धि बताता हो। यह उनका राजनीतिक संदेश भी था और व्यक्तिगत आस्था भी — कि किसी काम में लज्जा नहीं है, कि श्रम ही सबसे बड़ी पूजा है, और कि एक चायवाले का बेटा भी, यदि उसमें संकल्प और सेवा-भाव हो, तो एक महान लोकतंत्र का नेतृत्व कर सकता है। यह विचार करोड़ों भारतीयों के हृदय में उतर गया, क्योंकि इसमें उनका अपना जीवन और उनकी अपनी आशा झलकती थी।

जब उन्नीस सौ चौदह में नरेन्द्र मोदी प्रधानमंत्री का चुनाव लड़ रहे थे, तब 'चाय पर चर्चा' का जो अभियान चला, वह केवल एक चुनावी रणनीति नहीं था — वह उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व की एक स्वाभाविक अभिव्यक्ति थी। चाय की दुकान पर बैठकर जीवन की बातें करना, साधारण लोगों के बीच में रहकर उनकी पीड़ा और आकांक्षा को समझना — यह उनके लिए कोई नई भाषा नहीं थी, यह तो उनकी मातृभाषा थी। वडनगर स्टेशन के प्लेटफ़ॉर्म से शुरू हुई यह भाषा अमेरिका के मैडिसन

स्क्वेयर गार्डन तक, संयुक्त राष्ट्र के मंच तक, और विश्व के असंख्य जन-सभाओं तक उन्हें ले गई — क्योंकि इस भाषा में वह प्रामाणिकता थी जो कृत्रिम नहीं बनाई जा सकती, जो जीवन से उपजती है।

किन्तु चाय की उस दुकान की देन केवल एक राजनीतिक प्रतीक नहीं थी। उसने एक व्यक्ति को गढ़ा — उसके समय का अनुशासन, उसकी कर्मनिष्ठा, और उसकी सहजता। जो व्यक्ति बचपन में सुबह जल्दी उठकर दुकान पर जाता रहा हो, जिसने कड़ाके की ठंड और तपती गर्मी में भी प्लेटफ़ॉर्म पर खड़े रहकर सेवा की हो — उसके लिए प्रधानमंत्री कार्यालय में सोलह-सत्रह घंटे काम करना केवल एक आदत की स्वाभाविक निरन्तरता है। वडनगर स्टेशन की चाय की दुकान में जो अनुशासन का बीज पड़ा था, वही दशकों बाद एक अथक कार्य-क्षमता के विशाल वृक्ष में परिणत हुआ।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि नरेन्द्र मोदी ने अपनी इस पृष्ठभूमि का उपयोग कभी सहानुभूति अर्जित करने के लिए नहीं किया। उन्होंने इसे आत्म-दया के रूप में नहीं, बल्कि आत्म-सम्मान और प्रेरणा के रूप में प्रस्तुत किया। उनका सन्देश सदैव यही रहा कि ग़रीबी कोई अभिशाप नहीं, बल्कि वह पाठशाला है जो मनुष्य को परिश्रम, धैर्य और संवेदना सिखाती है। यह दृष्टिकोण ही उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व की आधारशिला बना — और यही दृष्टिकोण उनकी नीतियों में, उनके शासन में, और उनके प्रत्येक निर्णय में प्रतिबिम्बित होता रहा।

वडनगर की चाय की वह दुकान आज भी उस यात्रा का प्रतीक है जो साधारण से असाधारण तक जाती है। और यह प्रतीक हमें यह स्मरण कराता है कि किसी राष्ट्र की सच्ची शक्ति उसके उन साधारण नागरिकों में निहित है, जिनमें असाधारण

बनने की सम्भावना सदैव विद्यमान रहती है। जब एक राष्ट्र अपने ऐसे नागरिकों को पहचाने और उन्हें अवसर दे, तो वह राष्ट्र अपनी सम्पूर्ण क्षमता को प्राप्त करता है।

चाय परोसने का यह कार्य नरेन्द्र को उस भारत का परिचय करा रहा था जो कागजों पर नहीं, जमीन पर जीता है। एक यात्री जो मुंबई से आया है और गाँव जा रहा है — उसके चेहरे पर शहर की थकान और गाँव की प्रतीक्षा दोनों दिखती हैं। एक दिहाड़ी मजदूर जो कमाई लेकर घर लौट रहा है — उसकी आँखों में संतोष और सपने दोनों झलकते हैं। एक माँ जो बच्चे को गोद में लिए दूसरे शहर में रिश्तेदारों के यहाँ जा रही है — उसके चेहरे पर चिन्ता और ममता का वह मिश्रण है जो हर माँ की पहचान है। इन सब चेहरों को पढ़ते-पढ़ते बालक नरेन्द्र ने भारत को जाना — उस भारत को जो आँकड़ों में नहीं समझा जा सकता, जो केवल उसी को दिखता है जो उसके बीच रहकर, उसके साथ श्वास लेकर, उसे अनुभव करता है।

चाय की उस दुकान के बारे में एक और महत्वपूर्ण बात कहनी है। नरेन्द्र मोदी ने स्वयं एक अवसर पर उल्लेख किया था कि गुजरात से लौटने के बाद उन्होंने एक भाई के साथ मिलकर एक बस-टर्मिनल के पास भी चाय की दुकान चलाई थी। यह दूसरी दुकान उनके जीवन की उस अवस्था में थी जब वे हिमालय से लौटकर आए थे और संघ का पूर्णकालिक कार्य आरम्भ करने से पहले कुछ समय गुजरात में थे। इस तथ्य में एक गहरा अर्थ है — कि उस युवा के लिए जिसने संन्यास की खोज में हिमालय की यात्रा की थी, चाय की केतली उठाना कोई अवनति नहीं थी। यह उसी सेवा-भाव का एक रूप था जो विवेकानन्द से प्रेरित था। "दरिद्र-नारायण की सेवा" केवल बड़े कार्यों में नहीं होती — वह एक यात्री को एक प्याली गर्म चाय देने में भी होती है।

यह दृष्टिकोण — कि प्रत्येक सेवा समान रूप से पवित्र है, कि छोटे काम में भी बड़ी आत्मा हो सकती है — यह वह संस्कार था जिसने नरेन्द्र मोदी को एक साधारण राजनेता से अलग किया। जब वे प्रधानमंत्री बने और उन्होंने स्वच्छता अभियान के लिए स्वयं झाड़ू उठाई, तो वह केवल एक प्रतीकात्मक इशारा नहीं था — वह उसी बालक की स्वाभाविक अभिव्यक्ति थी जो दशकों पहले रेलवे स्टेशन पर बिना किसी संकोच के चाय की गिलासें उठाया करता था। श्रम से कोई काम छोटा नहीं होता — यह दर्शन वडनगर की उस चाय की दुकान में जीया गया था।

यह दृष्टिकोण — कि प्रत्येक सेवा समान रूप से पवित्र है, कि छोटे काम में भी बड़ी आत्मा हो सकती है, और कि श्रम का कोई विकल्प नहीं है — यही वह आधारभूत दर्शन था जिसने नरेन्द्र मोदी को उन नेताओं से अलग किया जो सेवा का नाम लेते हैं किन्तु श्रम से बचते हैं। उनके नेतृत्व में जो एक निरन्तर ऊर्जा दिखी, जो अथक कार्यक्षमता दिखी — उसका स्रोत वह चाय की दुकान थी जहाँ उन्होंने बचपन में सीखा था कि थके बिना, रुके बिना, और शिकायत किए बिना काम करते रहना ही असली जीवन है।

गुजरात में एक कहावत है: "काम करनारो काम आवे छे।" अर्थात् — जो काम करता है, वही काम आता है। वडनगर की चाय की दुकान ने नरेन्द्र मोदी को इसी सत्य का जीवन्त अनुभव दिया। और यही सत्य आगे चलकर उनके नेतृत्व की नींव बना — कि सत्ता पद से नहीं, सेवा से मिलती है, और सेवा की शुरुआत उसी स्थान से होती है जहाँ आप खड़े हैं।

रेलवे की उस दुकान ने नरेन्द्र को एक और मूल्यवान शिक्षा दी — असफलता से नहीं घबराना। व्यापार में हर दिन अच्छा नहीं होता। कभी ट्रेन देरी से आती थी, कभी यात्री कम होते थे, कभी बारिश में धंधा ठप हो जाता था। किन्तु अगले दिन फिर

दुकान खुलती थी, केतली चढ़ती थी, और काम शुरू होता था। इस निरन्तरता में — इस असफलता के बावजूद अगले दिन फिर खड़े होने की क्षमता में — एक ऐसा संस्कार था जो किसी भी नेता के लिए अनिवार्य है। राजनीति में हार होती है, योजनाएँ विफल होती हैं, और आलोचनाएँ आती हैं — किन्तु जो व्यक्ति बचपन में ही यह सीख चुका हो कि प्रत्येक अगला दिन एक नया अवसर है, वह कभी टूटता नहीं।

नरेन्द्र मोदी के राजनीतिक जीवन में यह संस्कार बार-बार दिखाई दिया। उन्नीस सौ पचानवे में जब उन्हें गुजरात से हटाया गया और दिल्ली में राष्ट्रीय सचिव बनाया गया — तो उन्होंने इसे अपमान की तरह नहीं, बल्कि एक नए अवसर की तरह लिया। दो हज़ार एक में जब गुजरात के मुख्यमंत्री का पद मिला — वह भी एक ऐसे समय में जब राज्य में भूकम्प के घाव ताज़ा थे और चुनौतियाँ विकट थीं — तब भी वे बिना हिचके आगे बढ़े। यह दृढ़ता वडनगर की उस चाय की दुकान से आई थी, उस परिवेश से जिसमें प्रत्येक दिन एक नई शुरुआत थी।

वडनगर की माटी और रेलवे स्टेशन की चाय की दुकान से सीखे गए इन पाठों के साथ, अब हम उस विद्यालय की ओर चलते हैं जहाँ बालक नरेन्द्र के भीतर का वक्ता, अभिनेता और साहसी किशोर धीरे-धीरे अपना रूप ग्रहण करने लगा था।

अध्याय ३ — बालक नरेन्द्र

प्रत्येक महान व्यक्तित्व के भीतर एक बच्चा छिपा होता है — और वह बच्चा जो कुछ देखता है, जो कुछ अनुभव करता है, जो कुछ सपने देखता है, वह सब आगे चलकर उस महान व्यक्तित्व का आधार बनता है। बालक नरेन्द्र के विद्यालयी जीवन को यदि ध्यान से देखा जाए, तो उसमें हमें उन सभी गुणों के बीज दिखाई देते हैं जो कालान्तर में एक राष्ट्र-नायक की पहचान बने — वाक्-कौशल जो लाखों को प्रेरित करे, साहस जो किसी भी चुनौती से न डिगे, करुणा जो सबसे वंचित व्यक्ति तक पहुँचे, और एक ऐसी जिज्ञासा जो ज्ञान की कोई सीमा न स्वीकार करे।

वडनगर में नरेन्द्र की प्रारम्भिक शिक्षा उस विद्यालय में हुई जिसे स्थानीय लोग 'वर्नाकुलर स्कूल' के नाम से जानते थे — आधिकारिक रूप से जिसका नाम वडनगर कुमारशाला नम्बर एक था। यह विद्यालय उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में बड़ौदा के महाराजा सयाजीराव गायकवाड़ तृतीय के दान से स्थापित हुआ था। सयाजीराव गायकवाड़ स्वयं आधुनिक भारत के उन अग्रगामी शासकों में से थे जिन्होंने शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का सबसे शक्तिशाली साधन माना। उन्होंने अपने राज्य में निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा लागू की, जिस काल में अधिकांश रियासतें इस दिशा में सोच भी नहीं रही थीं। उसी दूरदर्शी महाराजा की शैक्षिक विरासत का एक अंग था वडनगर का वह विद्यालय जहाँ नरेन्द्र मोदी के सभी भाइयों ने कक्षा एक से सात तक की शिक्षा प्राप्त की। यह संयोग नहीं, एक

सांस्कृतिक निरन्तरता है — एक राजा ने शिक्षा की जो मशाल जलाई, उसी मशाल की रोशनी में एक नेता का निर्माण हुआ।

नरेन्द्र के भाई प्रह्लाद ने वर्षों बाद एक साक्षात्कार में कहा: "हमारे घर के पास ही विद्यालय था, और हम पाँचों भाइयों ने वहीं से अपनी पढ़ाई शुरू की।" यह सरल वाक्य एक बड़ी बात कहता है — कि इस परिवार में शिक्षा का महत्व था, चाहे साधन कितने भी सीमित हों। माता-पिता ने यह सुनिश्चित किया कि सभी बच्चे विद्यालय जाएँ, सभी पढ़ें। यह उन परिवारों में नहीं होता जहाँ आर्थिक कठिनाई इतनी गहरी हो कि बच्चों को काम पर लगाना पड़े। मोदी परिवार ने कठिन होते हुए भी यह मूल्य बनाए रखा।

प्राथमिक शिक्षा के बाद नरेन्द्र ने भगवताचार्य नारायणाचार्य महाराज उच्च विद्यालय — जिसे सभी बी.एन. हाई स्कूल के नाम से जानते थे — में प्रवेश लिया। यहीं उन्होंने उन्नीस सौ सड़सठ तक अपनी उच्च माध्यमिक शिक्षा पूर्ण की। इस विद्यालय के शिक्षकों की स्मृतियाँ आज भी उस बालक की एक विशेष तस्वीर प्रस्तुत करती हैं। शिक्षकों ने बताया — और यह विवरण पत्रकारों द्वारा दर्ज किया गया है — कि नरेन्द्र एक ऐसे छात्र थे जो वाद-विवाद में असाधारण रूप से कुशल थे। जब भी कक्षा में या विद्यालय-स्तर पर कोई भाषण-प्रतियोगिता या वाद-विवाद होता, नरेन्द्र की उपस्थिति मात्र से माहौल बदल जाता। वे केवल तर्क नहीं देते थे — वे अपने श्रोताओं को किसी एक दृष्टिकोण की ओर खींचने की कला जानते थे।

यह वाक्-शक्ति आकस्मिक नहीं थी। इसके पीछे थी वह जिज्ञासा जो उन्हें पुस्तकालय तक खींचती थी। शिक्षकों ने बताया कि नरेन्द्र "पुस्तकालय में घंटों बिताते थे" — और यह वाचन पाठ्यक्रम की पुस्तकों तक सीमित नहीं था। इतिहास, जीवनी, और धर्म-दर्शन की पुस्तकें उनकी प्रिय थीं। एक बालक जो चाय

की दुकान पर काम करके आने के बाद भी पुस्तकालय में बैठकर पढ़ता हो — उसके भीतर ज्ञान की कितनी गहरी पिपासा रही होगी, यह सहज ही समझा जा सकता है। इस वाचन-परम्परा ने उनके विचारों को एक गहराई दी, उनके भाषण में एक सन्दर्भ-समृद्धि आई, और उनकी दृष्टि को एक व्यापकता मिली जो केवल पाठ्यक्रम से नहीं आ सकती थी।

नाट्य-मंच के प्रति नरेन्द्र का प्रेम विशेष रूप से उल्लेखनीय था। शिक्षकों ने बताया कि वे ऐसी भूमिकाएँ पसन्द करते थे जो "जीवन से बड़ी होती थीं" — वीरता की भूमिकाएँ, नेतृत्व की भूमिकाएँ, ऐसे पात्र जो किसी बड़े संदेश को दर्शकों तक पहुँचाते हों। यह चुनाव स्वाभाविक था — एक बालक प्रायः उन्हीं भूमिकाओं को चुनता है जो उसके भीतर के स्वप्न को प्रतिबिम्बित करती हों। रंगमंच पर अभिनय करते हुए एक बालक केवल एक पात्र नहीं बनता — वह उस पात्र की भावनाओं, उसकी चुनौतियों, उसके संकल्पों को जीता है। इस प्रक्रिया में नरेन्द्र ने जाने-अनजाने में अपने भीतर एक ऐसे वक्ता और नेता को पाला जो किसी भी मंच पर, किसी भी परिस्थिति में, अपने श्रोताओं से सहज रूप से जुड़ सके। यह सहजता बाद में उनका सबसे बड़ा सार्वजनिक वरदान बनी।

किन्तु विद्यालय का वह प्रसंग जो नरेन्द्र के साहस और स्वभाव दोनों को एकसाथ उद्घाटित करता है, और जो लोक-स्मृति में सबसे जीवन्त रूप से जीवित है, वह है शर्मिष्ठा सरोवर का। वह वही सरोवर जिसका नाम हमने वडनगर के परिचय में सुना था — महाभारतकालीन स्मृतियाँ लिए, शान्त जल की गहराई में इतिहास को समेटे हुए। नरेन्द्र इस सरोवर में तैरने जाया करते थे, और तैरना उनकी एक दैनिक साधना-सी थी। वे सरोवर के बीच में स्थित एक मन्दिर तक तैरकर जाते और उसके शिखर पर लगे ध्वज को स्पर्श करके लौटते। यह कोई अनिवार्य कार्य नहीं था —

यह उस बालक की आन्तरिक आकांक्षा थी जो हर बार अपनी सीमाओं को थोड़ा और आगे धकेलना चाहती थी, जो हर बार उस मन्दिर तक जाने में एक आस्था और एक साहस दोनों का अनुभव करती थी।

इसी नित्यक्रम में एक दिन कुछ ऐसा हुआ जिसे 'नरेन्द्र मोदी: द गेम चेंजर' जीवनी में विस्तार से दर्ज किया गया है। आठवीं कक्षा में पढ़ते हुए एक बार सरोवर में तैरते समय, एक मगरमच्छ ने उनके बाएँ पाँव पर पूँछ का आघात किया जिससे टखने के पास गहरी चोट लगी और नौ टाँके लगाने पड़े। वे एक सप्ताह से अधिक बिस्तर पर रहे। यह घटना उन्होंने वर्षों बाद स्वयं अपने शब्दों में ब्रिटिश अन्वेषक बेयर ग्रिल्स के साथ जिम कॉर्बेट राष्ट्रीय पार्क में फ़िल्माए गए कार्यक्रम 'मैन वर्सेज वाइल्ड' में साझा किया था। उनकी वाणी में उस घटना का न भय था, न आत्म-प्रशंसा — केवल एक शान्त स्वीकृति थी, जैसे कोई जीवन के एक साधारण अनुभव की बात कर रहा हो। यही शान्ति, यही निर्भयता, उस बालक के आगामी जीवन का सबसे बड़ा लक्षण बनी।

इस घटना के समानान्तर एक अन्य प्रसंग भी लोक-स्मृति में जीवित है। कहा जाता है कि एक बार किशोर नरेन्द्र उसी सरोवर से एक मगर के बच्चे को उठाकर घर ले आए। माता हीराबेन ने जब यह देखा, तो उन्होंने बड़े प्रेम से पुत्र को समझाया: "जिस प्रकार तुम्हें अपनी माँ से बिछुड़ना दुखद लगता, उसी प्रकार इस जीव को भी उसकी माँ से अलग करना उचित नहीं है।" इस सीख को सुनकर नरेन्द्र उस बच्चे को वापस सरोवर में छोड़ आए। यह प्रसंग — चाहे इसे ऐतिहासिक घटना कहें या पारिवारिक स्मृति — एक महत्वपूर्ण सत्य को उद्घाटित करता है। साहस जब करुणा से मिलता है, तभी वह सच्चा नेतृत्व बनता है। मगर से न डरने वाला साहस

और एक जीव की माँ के प्रति करुणा — ये दोनों गुण नरेन्द्र के स्वभाव में एक साथ विद्यमान थे, और यही संगम आगे चलकर उनके नेतृत्व की विशेषता बना।

तैराकी से नरेन्द्र का जो सम्बन्ध था, वह केवल शारीरिक व्यायाम नहीं था। तैराकी एक ऐसी विद्या है जिसमें पानी की धारा से लड़ना पड़ता है, गहराई का भय मन से निकालना पड़ता है, और शरीर को एक सतत लय में रखना पड़ता है। इस विद्या के अभ्यासी अनजाने ही वे गुण अर्जित करते हैं जो जीवन के कठिन संघर्षों में काम आते हैं — धैर्य, स्थिरता, और प्रतिकूल परिस्थितियों में भी आगे बढ़ने का संकल्प। शर्मिष्ठा सरोवर में तैरते हुए नरेन्द्र यह सीख रहे थे कि धारा के विरुद्ध भी तैरा जा सकता है, और कि गहराई से डरने के बजाय उसे जीत लेना बेहतर है।

इसी काल में एक और महत्वपूर्ण धारा नरेन्द्र के जीवन में प्रवाहित हो रही थी — राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शाखा। लगभग आठ वर्ष की आयु में ही नरेन्द्र वडनगर की स्थानीय शाखा में जाने लगे थे। यह आरम्भ कैसे हुआ? बड़े भाई सोमाभाई ने एक साक्षात्कार में एक अत्यन्त रोचक और महत्वपूर्ण तथ्य बताया — कि संघ के शिविरों में एक विशेष अनुशासन था जो बालक नरेन्द्र को गहराई से प्रभावित करता था। एक व्यक्ति आदेश देता था और सभी उस आदेश का पालन करते थे — इस व्यवस्था में जो सामूहिक शक्ति थी, जो एकसूत्रता थी, जो सामूहिक प्रयास में जो आनन्द था, उसने बालक नरेन्द्र को बहुत प्रभावित किया।

शाखा की प्रातःकालीन बैठकें सुबह जल्दी शुरू होती थीं — जब अधिकांश बच्चे अभी सोए होते। सामूहिक व्यायाम, सूर्यनमस्कार, कबड्डी और खो-खो के खेल, राष्ट्र-भक्ति के गीत, और एक-दूसरे के प्रति सेवा का भाव — इन सबने बालक नरेन्द्र के भीतर एक ऐसे संस्कार की नींव रखी जो आगे चलकर उनके सम्पूर्ण जीवन का आधार बनने वाली थी। शाखा में देश के इतिहास की बात होती थी,

भारत के महापुरुषों की बात होती थी, और यह प्रश्न उठाया जाता था कि इस राष्ट्र के लिए एक युवा की जिम्मेदारी क्या है। इन प्रश्नों के उत्तर बालक नरेन्द्र अपने मन में खोजता — और उन उत्तरों की खोज ही उसके भावी जीवन की दिशा निर्धारित करने वाली थी।

शाखा में सुनाई जाने वाली कहानियों में स्वामी विवेकानन्द का नाम भी आता था। एक ऐसा युवा जो गरीब था, जिसके पास भौतिक साधन नहीं थे, किन्तु जिसके पास विचारों की अद्भुत सम्पदा थी और जिसने शिकागो की विश्व-धर्म-संसद में "भगिनियो और भाइयो" कहकर एक पूरी सभ्यता को जगाया — यह कथा किसी भी जिज्ञासु बालक के हृदय पर अमिट छाप छोड़ सकती थी। नरेन्द्र मोदी पर विवेकानन्द का यह प्रभाव बाल्यकाल से ही आरम्भ हुआ और जीवन-पर्यन्त बना रहा। यह संयोग तो था ही कि दोनों का प्रथम नाम 'नरेन्द्र' था — किन्तु इससे भी बड़ी बात यह थी कि दोनों के जीवन में वही प्रश्न केन्द्रीय था: राष्ट्र की सेवा कैसे हो, और उस सेवा के लिए स्वयं को कैसे तैयार किया जाए।

विद्यालय में नरेन्द्र की एक और विशेषता थी जो कालान्तर में उनके नेतृत्व का एक प्रमुख लक्षण बनी — वे नेतृत्व करना जानते थे। चाहे कक्षा में कोई समूह-कार्य हो, खेल के मैदान में कोई टीम बनानी हो, या किसी विद्यालय-आयोजन में किसी को एकत्रित करना हो — नरेन्द्र स्वाभाविक रूप से वह भूमिका ले लेते थे जिसमें दूसरों को दिशा दी जाती है, उनकी ऊर्जा को एक लक्ष्य की ओर संगठित किया जाता है। यह नेतृत्व-क्षमता किसी पाठ्यपुस्तक से नहीं आई थी — यह उनके स्वभाव में थी, और इसे शाखा के अनुशासित वातावरण ने और निखारा।

जिस काल में अधिकांश बालक केवल खेलने और मनोरंजन में रुचि रखते हैं, उस काल में नरेन्द्र के कंधों पर एक ऐसी जिम्मेदारी थी जो अधिकांश बालकों के पास

नहीं होती — पिता की दुकान पर सहयोग देने की जिम्मेदारी। इस जिम्मेदारी ने उनके व्यक्तित्व में एक ऐसी परिपक्वता जोड़ी जो आयु से पहले ही आ गई। जो बालक कम आयु में ही जिम्मेदारी का बोझ उठाना सीख जाता है, वह बड़ा होकर उत्तरदायित्व से नहीं घबराता — बल्कि उसे स्वाभाविक रूप से स्वीकार करता है। नरेन्द्र मोदी के जीवन में यह गुण बार-बार दिखाई दिया — जब आपातकाल के संकट में उन्होंने जोखिम उठाया, जब गुजरात के मुख्यमंत्री के रूप में कठिन निर्णय लिए, और जब प्रधानमंत्री के रूप में देश की दिशा निर्धारित की।

नाट्य-मंच और वाद-विवाद के उन अनुभवों का एक और पहलू है जो सम्भवतः कम चर्चा में आता है — वे अनुभव नरेन्द्र को दूसरों की दृष्टि से देखना सिखाते थे। जब एक अभिनेता किसी पात्र को जीता है, तो वह उस पात्र की भावनाओं, उसकी पीड़ाओं, उसकी आकांक्षाओं में प्रवेश करता है। यह क्षमता — दूसरे की दृष्टि से सोचने की, दूसरे के जूते में अपने पाँव रखकर देखने की — किसी भी नेता के लिए अत्यन्त मूल्यवान है। नरेन्द्र मोदी ने यह क्षमता अपने विद्यालयी नाट्य-अनुभव में विकसित की। और यही क्षमता आगे चलकर उनके नीति-निर्माण में झलकी — जब उन्होंने गरीब की आवश्यकता को, किसान की पीड़ा को, और युवा की आकांक्षा को नीतियों में प्रतिबिम्बित किया।

विद्यालयी जीवन का यह काल उन्नीस सौ साठ के दशक का था — वह काल जब भारत नेहरू-युग के बाद की नई राजनीतिक परिस्थितियों से जूझ रहा था, जब चीन के साथ उन्नीस सौ बासठ के युद्ध ने राष्ट्रीय आत्म-चेतना को झकझोरा था, और जब उन्नीस सौ पैंसठ के पाकिस्तान-युद्ध ने देश की एकता और शौर्य को एक नई परीक्षा में डाला था। इन राष्ट्रीय घटनाओं की छाया वडनगर जैसे छोटे नगरों तक भी पहुँचती थी। शाखाओं में इन घटनाओं की चर्चा होती थी, विद्यालयों में देशभक्ति के गीत

गाए जाते थे, और लोगों के बीच राष्ट्र की चिन्ता की एक नई लहर थी। बालक नरेन्द्र इन सब बातों को बड़ी गहराई से अनुभव कर रहे थे — उनके लिए राष्ट्र केवल भूगोल की पुस्तक में खींची गई सीमारेखा नहीं थी, वह एक जीवन्त अनुभव था जिसके साथ उनका भावनात्मक सम्बन्ध था।

विद्यालयी जीवन के इन वर्षों में नरेन्द्र एक ऐसे बहुआयामी व्यक्तित्व के रूप में उभर रहे थे जिसे किसी एक परिभाषा में बाँधना कठिन था। वे एक ऊर्जावान बालक थे जो शर्मिष्ठा सरोवर में मगरमच्छों से भी नहीं डरते थे, एक वक्ता जो वाद-विवाद में अपने मत को शक्तिशाली रूप से रख सकते थे, एक अभिनेता जो रंगमंच पर बड़े-बड़े पात्रों को जीवन्त कर देते थे, एक पाठक जो पुस्तकालय में घंटों बिताते थे, एक सेवक जो अपने पिता की दुकान पर हाथ बँटाता था, और एक देशभक्त जो युद्ध के समय सैनिकों की सेवा में जुट जाता था।

परीक्षाओं के अंकों की दृष्टि से शायद नरेन्द्र साधारण छात्र रहे हों — शिक्षकों ने उन्हें "औसत छात्र" कहा है। किन्तु जीवन की वास्तविक परीक्षाओं में सफलता के लिए जो गुण चाहिए होते हैं, वे सब उनमें किशोरावस्था में ही पर्याप्त मात्रा में उपस्थित थे। आत्मविश्वास, वाक्-शक्ति, साहस, करुणा, अनुशासन और सेवा का भाव — ये वे गुण हैं जो किसी प्रमाण-पत्र में दर्ज नहीं होते, किन्तु जो जीवन की हर चुनौती में काम आते हैं।

भारत के शिक्षा-इतिहास में ऐसे असंख्य उदाहरण हैं जहाँ परीक्षाओं में औसत रहने वाले छात्र आगे चलकर असाधारण जीवन जीते हैं — और इसका कारण यह है कि परीक्षाएँ जिन कौशलों को मापती हैं, वे जीवन के उन कौशलों से सदैव मेल नहीं खातीं जो वास्तव में महत्वपूर्ण हैं। स्मृति-शक्ति, पाठ्यक्रम का अनुसरण, और नियत समय में नियत उत्तर लिखना — ये महत्वपूर्ण हैं, किन्तु नेतृत्व, संगठन,

संवाद, और संकट में निर्णय लेने की क्षमता — ये वे गुण हैं जो परीक्षाओं में नहीं मापे जाते। नरेन्द्र मोदी में ये दूसरे प्रकार के गुण प्रचुर मात्रा में थे, और यही उनकी असली शक्ति थी।

बी.एन. हाई स्कूल के उन शिक्षकों ने जब वर्षों बाद कहा कि "नरेन्द्र बड़े होकर कुछ बड़ा करेगा" — तो यह केवल एक अध्यापक का भावनात्मक अनुमान नहीं था। यह उन लोगों का निष्कर्ष था जिन्होंने उस बालक को प्रतिदिन देखा था — उसके भाषणों में, उसके अभिनय में, उसके प्रश्नों में, और उसके उस दृढ़ आत्म-विश्वास में जो किसी कक्षा के अंकों पर नहीं, बल्कि अपनी आन्तरिक शक्ति की पहचान पर टिका था।

जीवनी-साहित्य में एक सिद्धान्त है — कि किसी भी व्यक्ति के वयस्क जीवन को समझना हो, तो उसके बाल्यकाल को देखो। उस काल में जो बीज पड़े, वही आगे चलकर फल बनते हैं। नरेन्द्र मोदी के बाल्यकाल में जो बीज पड़े — साहस, वाक्-शक्ति, करुणा, अनुशासन, राष्ट्र-प्रेम, और सेवा का भाव — वे सब आगे चलकर उनके व्यक्तित्व के उन स्तम्भों के रूप में प्रकट हुए जिन पर एक ऐतिहासिक नेतृत्व का भव्य भवन खड़ा हुआ। वडनगर के विद्यालय ने एक ऐसे छात्र को नहीं जाना जो शायद देश का सर्वोच्च नेता बनेगा — किन्तु उस विद्यालय ने एक ऐसे बालक को अवश्य जाना जो साधारण नहीं था, जिसकी आँखों में एक अलग चमक थी, और जिसके शब्दों में एक ऐसी शक्ति थी जो केवल जन्म से नहीं आती।

वडनगर की गलियों, शर्मिष्ठा सरोवर के किनारे, रेलवे स्टेशन के प्लेटफ़ॉर्म पर, और संघ की शाखा में — इन सबने मिलकर उस व्यक्तित्व को ढाला जो भविष्य में असंख्य लोगों का मार्गदर्शन करने वाला था।

नरेन्द्र मोदी के उन विद्यालयी वर्षों की एक बात और कहनी है जो प्रायः अनकही रह जाती है — उनके व्यक्तित्व में एक गहरी आत्म-निर्भरता थी। वे किसी के सहारे की प्रतीक्षा नहीं करते थे; जो करना था, स्वयं करते थे। यदि किसी बात में रुचि थी, तो स्वयं खोजते थे। यदि कोई प्रश्न था, तो उसका उत्तर स्वयं ढूँढते थे। यह आत्म-निर्भरता किसी अहंकार से नहीं, बल्कि उस परिवार के संस्कार से आई थी जहाँ प्रत्येक सदस्य को अपना काम स्वयं करना था। और यह गुण — आत्म-निर्भरता का यह भाव — आगे चलकर "आत्मनिर्भर भारत" के उस स्वप्न का मूल बना जो नरेन्द्र मोदी ने अपने प्रधानमंत्री-काल में राष्ट्र के सामने रखा।

इन विद्यालयी वर्षों से आगे बढ़ते हुए, हम अब उस मोड़ पर पहुँचते हैं जब किशोर नरेन्द्र ने अपने परिचित संसार की सीमाओं को छोड़कर एक ऐसी यात्रा पर प्रस्थान किया जो उनके व्यक्तित्व को उसकी अन्तिम गहराई तक ले जाने वाली थी — हिमालय की ओर, संन्यास की ओर, और अन्ततः उस ध्येय की ओर जो उनके जीवन का उद्देश्य बनने वाला था।

अध्याय ४ — संघ और संन्यास की राह

जीवन में कुछ प्रश्न ऐसे होते हैं जिनका उत्तर पुस्तकों में नहीं मिलता, जो किसी परीक्षा में नहीं पूछे जाते, किन्तु जो मनुष्य के अस्तित्व के सबसे गहरे तल से उठते हैं और उसे तब तक चैन नहीं देते जब तक वह उनका उत्तर खोज नहीं लेता। "मैं कौन हूँ? मेरे जीवन का उद्देश्य क्या है? इस विशाल सृष्टि में मेरी भूमिका क्या है?" — ये प्रश्न किसी न किसी रूप में प्रत्येक मनुष्य के भीतर उठते हैं। अधिकांश लोग इन प्रश्नों को परिस्थितियों के प्रवाह में बहने देते हैं, जीवन के व्यावहारिक दबावों में उन्हें दबा देते हैं, और धीरे-धीरे यह भूल जाते हैं कि ये प्रश्न कभी थे भी। किन्तु जो लोग इन्हें अपने अस्तित्व का केन्द्रीय प्रश्न बना लेते हैं, वे एक भिन्न जीवन-पथ पर चल पड़ते हैं। नरेन्द्र इसी दूसरी श्रेणी के थे।

उन्नीस सौ सड़सठ में वडनगर के बी.एन. हाई स्कूल से उच्च माध्यमिक शिक्षा पूर्ण होते ही, जब अधिकांश युवा अगले महाविद्यालय के प्रवेश की चिन्ता में होते हैं, नरेन्द्र के मन में एक भिन्न आकांक्षा जाग उठी। उन्होंने घर छोड़ा और भारत-भ्रमण के लिए निकल पड़े। यह निर्णय असाधारण था। सत्रह-अठारह वर्ष का एक युवा, जिसके पास कोई बड़ा धन नहीं, कोई बड़ा परिचय नहीं, और जिसके पीछे एक परिवार है जिसे उसकी ज़रूरत है — वह घर छोड़कर निकल जाए। यह कोई साहसिक यात्रा नहीं थी, यह एक आन्तरिक बाध्यता थी — उस प्रश्न का उत्तर खोजने की बाध्यता जो उसे चैन नहीं देता था।

आधिकारिक जीवनी में इसे दो वर्षों की वह यात्रा कहा गया है जिसमें नरेन्द्र ने "भारत के विस्तृत परिदृश्य में विभिन्न संस्कृतियों की खोज की।" किन्तु यह यात्रा किसी पर्यटक की यात्रा नहीं थी। यह एक साधक की यात्रा थी जो संन्यास और आध्यात्मिकता की ओर आकृष्ट था, और जो यह जानना चाहता था कि क्या उसका जीवन किसी मठ की चारदीवारी में, किसी सन्त के सान्निध्य में, या किसी भिन्न मार्ग पर जाना चाहिए।

यात्रा का पहला और सबसे महत्वपूर्ण पड़ाव था बेलूर मठ — कोलकाता के हुगली नदी के पश्चिमी किनारे पर स्थित वह पवित्र स्थान जो रामकृष्ण मिशन का मुख्यालय है और जो स्वामी विवेकानन्द की साधना-स्थली रही है। उन्नीस सौ अड़सठ में नरेन्द्र बेलूर मठ पहुँचे और वहाँ संन्यास ग्रहण करने की इच्छा व्यक्त की। ऐतिहासिक अभिलेखों में उनकी इस यात्रा का उल्लेख मिलता है — यहाँ तक कि बेलूर मठ के आगन्तुक-पुस्तिका में उनके हस्ताक्षर का भी एक सन्दर्भ उपलब्ध है। किन्तु मठ ने उन्हें स्वीकार नहीं किया। रामकृष्ण मिशन के मठ में प्रवेश के लिए आयु की और विशेष अनुमति की शर्तें थीं, और युवा नरेन्द्र उस समय उन शर्तों को पूरा नहीं कर सके।

यह अस्वीकृति एक साधारण मनुष्य को निराश कर सकती थी, उसे लौटा सकती थी। किन्तु नरेन्द्र के लिए यह अन्त नहीं था। उन्होंने अपनी यात्रा जारी रखी। बेलूर मठ से वे पश्चिम बंगाल और असम की ओर निकले — सिलीगुड़ी, गुवाहाटी। यहाँ भी रामकृष्ण मिशन के केन्द्रों के साथ उनका सम्पर्क रहा। और फिर वे उत्तर की ओर, हिमालय की ओर बढ़े। उत्तराखण्ड में अल्मोड़ा के रामकृष्ण कुटीर में उन्होंने कुछ समय बिताया। यह आश्रम हिमालय की तलहटी में स्थित है, जहाँ की प्रकृति साधना के लिए एक अनूठा वातावरण उपस्थित करती है।

हिमालय — भारत का वह चिरन्तन साक्षी जो सहस्राब्दियों से साधकों को आश्रय देता आया है। जब भी किसी भारतीय आत्मा को जीवन के मूलभूत प्रश्नों से जूझना पड़ा है, वह हिमालय की ओर मुड़ी है — शंकराचार्य से लेकर विवेकानन्द तक, अनगिनत साधकों ने इन पर्वतों की छाँव में अपने उत्तर खोजे हैं। हिमालय की विशेषता यह है कि वहाँ की प्रकृति स्वयं एक गुरु बन जाती है — विशाल पर्वत यह सिखाते हैं कि मनुष्य की समस्याएँ कितनी छोटी हैं, नदियाँ यह सिखाती हैं कि निरन्तर बहते रहना ही जीवन है, और वह खामोशी जो घाटियों में व्याप्त रहती है, वह यह सिखाती है कि अपनी आत्मा की आवाज को सुनने के लिए बाहरी शोर को शान्त करना होगा।

नरेन्द्र मोदी ने इन्हीं पर्वतों में विचरण किया — साधुओं और सन्तों के सान्निध्य में रहे, वहाँ के लोगों से मिले, और उस विशेष हिमालयी जीवन-दर्शन को अनुभव किया जो सादगी, धैर्य और प्रकृति के साथ सामंजस्य पर आधारित है। उन्होंने स्वयं वर्षों बाद कहा कि हिमालय के लोगों और भटकने वाले साधुओं ने उन्हें विनम्रता और दृढ़ता का अर्थ सिखाया।

उन दो वर्षों की यात्रा ने नरेन्द्र को एक ऐसा अनुभव दिया जो किसी भी महाविद्यालय की पढ़ाई नहीं दे सकती थी — भारत के विभिन्न रूपों का, उसकी विविधता और अन्तर्निहित एकता का, प्रत्यक्ष साक्षात्कार। बंगाल की मिट्टी से जो विचार उठे, असम की पहाड़ियों में जो प्रकृति मिली, और हिमालय की गोद में जो आध्यात्मिक शान्ति मिली — इन सबने मिलकर एक व्यापक भारत-बोध दिया जो किसी नक्शे से नहीं, बल्कि जीवन्त अनुभव से आता है। एक ऐसा नेता जो देश को केवल रिपोर्टों और आँकड़ों से नहीं जानता, बल्कि जिसने उसकी माटी को, उसकी नदियों को, उसके साधुओं और किसानों को, उसकी पीड़ा और उसकी सम्भावना

को निकट से अनुभव किया हो — ऐसा नेता एक भिन्न और गहरी समझ के साथ शासन करता है।

इस यात्रा का एक और महत्वपूर्ण पहलू था — स्वयं से अकेले होने का अनुभव। आधुनिक जीवन में जहाँ मनुष्य सदैव भीड़ में रहता है, शोर में रहता है, और स्वयं के साथ बिताए गए एकान्त-क्षणों से बचता है — वहाँ वह हिमालय-यात्री जो महीनों तक मठों और आश्रमों में रहा, जो पर्वतों की चुप्पी में स्वयं को सुनता रहा, वह एक ऐसी आन्तरिक परिपक्वता अर्जित करता है जो जीवन के हर संकट में काम आती है। नरेन्द्र मोदी के जीवन में बाद में जो अटल शान्ति दिखाई दी — राजनीतिक संकटों में, मीडिया के तीव्र आलोचनाओं में, और व्यक्तिगत चुनौतियों में — उसकी जड़ें उन हिमालय-वर्षों की उस एकान्त-साधना में थीं।

रामकृष्ण मिशन के आश्रमों ने उन्हें यह भी सिखाया कि अनुशासन का अर्थ केवल बाहरी नियमों का पालन नहीं है — वह एक आन्तरिक अनुशासन है जो शरीर, मन और आत्मा तीनों को एकसाथ साधता है। इसी आन्तरिक अनुशासन ने आगे चलकर नरेन्द्र मोदी की उस अद्भुत कार्य-क्षमता को जन्म दिया जो उनके समकालीनों में विरल है — सोलह-सत्रह घंटे काम करना, गहन उपवास रखते हुए भी पूर्ण कार्यक्षमता बनाए रखना, और व्यक्तिगत जीवन की समस्त आवश्यकताओं को न्यूनतम रखते हुए अपनी समस्त ऊर्जा राष्ट्र-कार्य में लगाना।

इस यात्रा के केन्द्र में एक महापुरुष की प्रेरणा थी जिनका नाम भी नरेन्द्र था — स्वामी विवेकानन्द। नरेन्द्रनाथ दत्त, जो विवेकानन्द के नाम से जाने गए, और नरेन्द्र दामोदरदास मोदी — दोनों के जीवन में अनेक समानताएँ हैं। दोनों ने युवावस्था में देश-भ्रमण किया, दोनों ने रामकृष्ण मिशन से प्रेरणा ली, दोनों ने यह माना कि भारत की आत्मा उसकी आध्यात्मिकता में है, और दोनों ने सेवा को ईश्वर-उपासना

का सर्वोच्च रूप माना। आधिकारिक जीवनी के अनुसार विवेकानन्द के ग्रन्थों ने नरेन्द्र मोदी की "आध्यात्मिकता की दिशा में यात्रा की नींव रखी।"

विवेकानन्द का जीवन-दर्शन नरेन्द्र के लिए प्रकाश-स्तम्भ के समान था। विवेकानन्द ने जो आध्यात्मिक राष्ट्रवाद का विचार दिया था — कि भारत की आत्मा उसकी आध्यात्मिकता में है, और राष्ट्र की सेवा ही ईश्वर की सच्ची उपासना है — वह विचार नरेन्द्र के हृदय में गहराई तक उतर गया। विवेकानन्द का वह प्रसिद्ध आह्वान कि "दरिद्र-नारायण की सेवा ही सर्वोच्च धर्म है" — यह विचार नरेन्द्र मोदी के भावी जीवन का मूल-मन्त्र बन गया। विवेकानन्द ने ही यह प्रश्न पूछा था कि हम मन्दिरों में पत्थर की पूजा करते हैं किन्तु जीवित मनुष्य जो भूख से तड़प रहा है, उसकी उपेक्षा करते हैं — क्या यह सच्ची भक्ति है? इस प्रश्न का उत्तर जिसने खोजा, उसे जीवन की एक नई दिशा मिल गई।

विवेकानन्द का यह संदेश भी कि "उठो, जागो, और तब तक मत रुको जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाए" — यह केवल व्यक्तिगत उपलब्धि का आह्वान नहीं था। यह एक राष्ट्र को जगाने का, उसकी सुप्त शक्तियों को जाग्रत करने का सन्देश था। नरेन्द्र मोदी के भीतर जो राष्ट्र-भक्ति का बीज पहले से था, उसे विवेकानन्द के विचारों ने एक दार्शनिक आधार दिया, एक वैचारिक ढाँचा दिया जिसमें आध्यात्मिकता और राष्ट्र-सेवा परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि एक-दूसरे की पूरक थीं।

रामकृष्ण मिशन की संस्थाएँ इस यात्रा के दौरान नरेन्द्र के लिए केवल आश्रय-स्थल नहीं थीं — वे एक ऐसे जीवन-दर्शन की प्रयोगशालाएँ थीं जिसमें सेवा, अनुशासन और आध्यात्मिकता एकसाथ जीवित थे। मिशन के आश्रमों में जो जीवन-पद्धति थी — सुबह जल्दी उठना, ध्यान और प्रार्थना, दिन भर सेवा-कार्य, सादा भोजन, अनावश्यक वस्तुओं से दूरी — यह सब नरेन्द्र के लिए एक ऐसे जीवन का प्रत्यक्ष

उदाहरण था जिसमें आत्मा और कर्म का संगम होता है। यह जीवन-पद्धति उनके व्यक्तित्व में इस गहराई से समा गई कि दशकों बाद, जब वे प्रधानमंत्री थे, उनकी सादगी, उनके उपवास, उनकी अनुशासित दिनचर्या — ये सब उसी आश्रम-जीवन की निरन्तरता थे।

लगभग दो वर्षों की इस भ्रमण-यात्रा के बाद, उन्नीस सौ उनहत्तर-सत्तर में, नरेन्द्र गुजरात लौटे। किन्तु अब वे वही नहीं रह गए थे जो गए थे। जो बालक वडनगर से गया था, वह अब एक ऐसे युवा के रूप में लौटा जिसके भीतर एक स्पष्ट दिशा-बोध था। हिमालय ने उन्हें गहराई दी थी, विवेकानन्द ने उन्हें ध्येय दिया था, और रामकृष्ण मिशन के आश्रमों ने उन्हें यह दिखाया था कि आध्यात्मिकता और सक्रिय सेवा परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

गुजरात लौटकर नरेन्द्र ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के साथ अपना सम्बन्ध और गहरा किया। बचपन से ही शाखा से जुड़े नरेन्द्र अब संघ को अपने जीवन का केन्द्रीय स्तम्भ बनाने का निर्णय ले चुके थे। उन्नीस सौ इकहत्तर-बहत्तर में वे संघ के पूर्णकालिक प्रचारक बन गए — अर्थात् उन्होंने विवाह और गृहस्थ जीवन का त्याग करके अपना सम्पूर्ण समय, सामर्थ्य और जीवन राष्ट्र की सेवा में समर्पित कर दिया। यह त्याग अत्यन्त महत्वपूर्ण है। संन्यास के वस्त्र नहीं पहने, किन्तु संन्यासी का जीवन स्वीकार किया। मठ ने उन्हें स्वीकार नहीं किया था, किन्तु उनके भीतर जो संन्यास का भाव था, वह एक भिन्न रूप में प्रकट हुआ — राष्ट्र ही उनका मठ बना, और राष्ट्र-सेवा ही उनकी साधना।

प्रचारक का जीवन कठोर साधना के समान होता है। सुबह जल्दी उठना, सीमित भोजन, अत्यन्त सादा जीवन, और दिन-भर संगठन के कार्य में लीन रहना। गाँव-गाँव जाना, लोगों से मिलना, उनकी समस्याएँ सुनना, उन्हें संगठन से जोड़ना, और

राष्ट्र-भक्ति का सन्देश घर-घर पहुँचाना। यह जीवन किसी भोग-विलास का नहीं था — यह एक ऐसी तपस्या थी जो बाहर से साधारण लगती थी किन्तु भीतर से असाधारण आत्म-बल की माँग करती थी।

इस जीवन-शैली का एक पहलू जो विशेष रूप से उल्लेखनीय है, वह है उपवास की परम्परा जो नरेन्द्र मोदी ने इन प्रचारक-वर्षों में आत्मसात की। हिन्दू परम्परा में उपवास केवल आहार-त्याग नहीं है — यह एक ऐसी साधना है जिसमें शरीर को संयमित करके मन की शक्ति बढ़ाई जाती है। नवरात्र के नौ दिन, चातुर्मास के चार माह, एकादशी का व्रत — ये सब उस परम्परा के अंग हैं जो मनुष्य को यह सिखाती है कि वह अपनी भौतिक आवश्यकताओं का स्वामी है, न कि दास। नरेन्द्र मोदी ने यह परम्परा न केवल अपनाई, बल्कि इसे अपनी दिनचर्या का स्थायी अंग बना लिया। वर्षों बाद, जब वे प्रधानमंत्री बने, तब भी नवरात्र के नौ दिन वे केवल एक प्रकार के फल पर रहते — और इस दौरान सोलह-सत्रह घंटे काम करते। यह संयोग नहीं था कि इस असाधारण कार्य-क्षमता की नींव उन्हीं प्रचारक-वर्षों में पड़ी थी।

प्रचारक के रूप में नरेन्द्र मोदी का एक और महत्वपूर्ण गुण विकसित हुआ — श्रोता की बात सुनने की क्षमता। एक ऐसे व्यक्ति के लिए जो गाँव-गाँव जाता था, जो विभिन्न पृष्ठभूमि के लोगों से मिलता था — उनके लिए यह अनिवार्य था कि वह पहले सुने, फिर बोले। इस श्रवण-कला ने उन्हें वह समझ दी जो पुस्तकों से नहीं मिलती — कि भारत का ग्रामीण समाज क्या सोचता है, क्या चाहता है, और उसकी पीड़ाएँ क्या हैं। यह समझ आगे चलकर उनकी नीतियों की आत्मा बनी। इसी काल में नरेन्द्र मोदी ने जो अनुशासन आत्मसात किया, वह उनके सम्पूर्ण भावी जीवन की आधारशिला बना। कठोर उपवास की आदत — जिसमें नवरात्र के नौ

दिन केवल एक ही फल एक बार खाते थे, चातुर्मास के चार महीने एक समय भोजन — ये अभ्यास इसी प्रचारक-जीवन में ढले।

उन्नीस सौ चौहत्तर में गुजरात में नवनिर्माण आन्दोलन हुआ — एक भ्रष्टाचार-विरोधी जन-आन्दोलन जिसने तत्कालीन सरकार को हिला दिया। नरेन्द्र मोदी इस आन्दोलन में सक्रिय रूप से सम्मिलित थे। यह उनका पहला बड़ा सामाजिक-राजनीतिक अनुभव था — जनता की शक्ति को एकत्र होते देखने का, और यह समझने का कि जब जनता एक स्वर में बोलती है तो कोई भी सत्ता उसे अनसुना नहीं कर सकती।

किन्तु सबसे बड़ी परीक्षा आई उन्नीस सौ पचहत्तर में — जब देश पर आपातकाल की काली छाया छा गई। इन्दिरा गांधी की सरकार ने देश में आपातकाल घोषित किया, नागरिक अधिकारों को निलम्बित किया, प्रेस पर प्रतिबन्ध लगाया, और विरोधी नेताओं को जेल में डालना आरम्भ किया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को प्रतिबन्धित कर दिया गया। यह भारतीय लोकतंत्र का सबसे काला अध्याय था।

इस संकट-काल में नरेन्द्र मोदी संघ के लिए गुजरात में ABVP का प्रभारी बनकर काम कर रहे थे। जब संगठन को भूमिगत हो जाना पड़ा, तो उन्होंने वेश बदलकर, गुप्त रूप से काम किया। प्रतिबन्धित साहित्य के वितरण में सहायता की, संगठन के कार्यकर्ताओं के बीच समन्वय बनाए रखा, और लोकतंत्र की रक्षा के लिए संघर्षरत शक्तियों को एकसूत्र में बाँधे रखा। यह अनुभव उनके लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण था। संकट में संगठन कैसे चलाया जाता है, विपरीत परिस्थितियों में भी अपने ध्येय पर दृढ़ कैसे रहा जाता है, और व्यक्तिगत जोखिम उठाकर भी एक बड़े सिद्धान्त की रक्षा कैसे की जाती है — ये पाठ किसी विद्यालय में नहीं पढ़ाए जाते। ये वह अनुभव हैं जो भट्टी की आँच में तपकर सीखे जाते हैं।

इसी काल में, परिश्रम और समर्पण के साथ-साथ, उन्होंने अपनी औपचारिक शिक्षा भी जारी रखी। पत्राचार के माध्यम से उन्होंने उन्नीस सौ अठहत्तर में दिल्ली विश्वविद्यालय के स्कूल ऑफ ओपन लर्निंग से राजनीति विज्ञान में स्नातक की उपाधि प्राप्त की, और उन्नीस सौ तिरासी में गुजरात विश्वविद्यालय से उसी विषय में प्रथम श्रेणी से परास्नातक की उपाधि अर्जित की। यह उस व्यक्ति की ज्ञान-पिपासा का प्रमाण है जो प्रचारक के व्यस्त और कठिन जीवन के बीच भी अध्ययन का क्रम नहीं छोड़ता।

प्रचारक-जीवन का एक महत्वपूर्ण अनुभव था — विभिन्न प्रकार के लोगों के साथ काम करना और उन्हें एक ध्येय की ओर प्रेरित करना। संघ में विभिन्न पृष्ठभूमियों के, विभिन्न आयु के, और विभिन्न विचार-तरंगों के लोग थे। एक प्रचारक को इन सबके साथ काम करना होता था — सबकी शक्तियों को समझना, सबकी सीमाओं को जानना, और इन सबको मिलाकर एक सामूहिक कार्य-शक्ति बनानी होती थी। यह मानव-संसाधन प्रबन्धन की वह शिक्षा थी जो किसी व्यवसाय-विद्यालय में नहीं मिलती — यह जीवन से, सम्पर्क से, और प्रतिदिन के संगठन-कार्य से मिलती है। नरेन्द्र मोदी ने यह शिक्षा प्रचारक-वर्षों में प्राप्त की, और यही शिक्षा आगे चलकर उनके संगठन-कौशल की नींव बनी।

संघ और संन्यास की इस राह ने नरेन्द्र मोदी के व्यक्तित्व को उस आकार में ढाला जो उनके जीवन की आधारशिला बना। आध्यात्मिक गहराई, वैचारिक स्पष्टता, अनुशासित जीवन-शैली, और राष्ट्र के प्रति अटूट समर्पण — ये चार स्तम्भ उनकी आत्मा को उस संरचना में बाँध देते हैं जो किसी भी परिस्थिति में नहीं डोलती। त्याग, तप और सेवा का यह त्रिवेणी-संगम उस नेता की वास्तविक पूँजी था जिसके

पास न कोई पैतृक सम्पत्ति थी, न कोई राजनीतिक विरासत — केवल संकल्प था, और उस संकल्प के पीछे खड़ी एक आत्मा जो हिमालय की भाँति अडिग थी।

इस सम्पूर्ण यात्रा को — हिमालय की भटकन से लेकर रामकृष्ण आश्रमों की साधना तक — एक और कोण से देखना उचित होगा। यह यात्रा एक युवा की आत्म-खोज थी, किन्तु यह उससे भी अधिक कुछ था। यह उस भारत की खोज थी जो पाठ्यपुस्तकों में वर्णित नहीं है — वह भारत जो गाँवों में, मठों में, पहाड़ों में, और नदियों के किनारे जीता है। जब नरेन्द्र मोदी दशकों बाद भारत की "विविधता में एकता" की बात करते हैं, तो वह केवल एक राजनीतिक नारा नहीं होता — वह उस अनुभव की अभिव्यक्ति होती है जो उन्होंने उन भटकन-वर्षों में अर्जित किया था। उन्होंने उस भारत को देखा था जो पश्चिम बंगाल की उर्वर मिट्टी से असम की पहाड़ियों तक, और हिमालय की बर्फ से अल्मोड़ा की हरियाली तक फैला है — और इस दर्शन ने उनके भीतर एक ऐसे भारत-बोध को जन्म दिया जो किसी भी राजनेता के लिए एक अनमोल सम्पत्ति होती है।

बेलूर मठ ने उन्हें स्वीकार नहीं किया था — किन्तु यह अस्वीकृति एक भिन्न और सम्भवतः अधिक विशाल नियति का मार्ग थी। संन्यासी बनकर एक मठ में रहते, तो वे उस मठ के साधक होते। प्रचारक बनकर, राष्ट्र-सेवा में लग जाने से, वे एक अरब से अधिक लोगों की नियति से जुड़ गए। विवेकानन्द ने एक बार कहा था — "हिमालय मुझे वापस भेज देता है।" उसी भाव में, हिमालय ने नरेन्द्र मोदी को भी वापस भेजा — समाज की ओर, संगठन की ओर, और उस ध्येय की ओर जो उनके जीवन का उद्देश्य बनने वाला था।

अगले अध्याय में हम देखेंगे कि कैसे यह समर्पित प्रचारक धीरे-धीरे एक कुशल संगठनकर्ता के रूप में उभरा — कैसे संघ से भाजपा तक की यात्रा में उसने वह

आधार तैयार किया जो आगे चलकर एक ऐतिहासिक उत्थान का मंच बनने वाला था।

अध्याय ५ — संगठन का शिल्पी

किसी भी बड़े नेतृत्व के पीछे एक लम्बा, अदृश्य परिश्रम होता है — वह परिश्रम जो मंच के पीछे किया जाता है, सुर्खियों से दूर, बिना किसी तत्काल प्रशंसा की अपेक्षा के, केवल एक ध्येय की ओर दृढ़ क़दमों से बढ़ते हुए। भारतीय इतिहास में ऐसे अनेक नेता हुए हैं जो पद और यश के लिए काम करते रहे — किन्तु जिन्होंने राष्ट्र की काया को भीतर से बदला, वे वे लोग थे जिन्होंने दशकों तक बिना प्रकाश के, बिना यश के, केवल अपने विश्वास और अपने संकल्प के बल पर काम किया। नरेन्द्र मोदी के जीवन का वह काल जो उन्नीस सौ पचहत्तर के बाद आता है और जो उन्नीस सौ अट्ठानवे तक फैला है — यह काल ऐसे ही अदृश्य किन्तु आधारभूत परिश्रम का काल है।

आपातकाल के उन अँधेरे वर्षों के समाप्त होने के बाद, उन्नीस सौ सतहत्तर में जनता पार्टी की सरकार के गठन के साथ देश में लोकतंत्र की पुनःस्थापना हुई। किन्तु जनता पार्टी का यह प्रयोग अल्पकालिक सिद्ध हुआ। आन्तरिक मतभेदों ने उस सरकार को तोड़ दिया, और उन्नीस सौ अस्सी में इन्दिरा गांधी पुनः सत्ता में आईं। किन्तु इसी अस्थिर राजनीतिक परिदृश्य में एक नई शक्ति उभर रही थी — उन्नीस सौ अस्सी में भारतीय जनता पार्टी का गठन हुआ। यह दल भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के आधार पर खड़ा था और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के विचार-परिवार से गहरे सम्बद्ध था।

नरेन्द्र मोदी प्रचारक के रूप में अपनी यात्रा जारी रखते हुए संघ के भीतर धीरे-धीरे अधिक महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व सम्भाल रहे थे। उन्नीस सौ सतहत्तर में उन्हें संघ के सम्भाग प्रचारक के रूप में सूरत-वडोदरा क्षेत्र का दायित्व मिला — एक ऐसी भूमिका जिसमें अनेक जिलों के संगठनात्मक कार्य का समन्वय करना था। उन्नीस सौ अठहत्तर तक वे गुजरात के मध्य क्षेत्र के छह जिलों के प्रभारी प्रचारक बन गए थे। उन्नीस सौ इक्यासी तक उन्हें समस्त गुजरात में संघ और उसके सहयोगी संगठनों के बीच समन्वय का उत्तरदायित्व मिला।

यह क्रमिक उत्थान केवल प्रशासनिक पदोन्नति नहीं थी — यह उनकी संगठन-क्षमता की, उनकी निष्ठा की, और उनके कार्य-बल की स्वाभाविक पहचान थी। संघ एक ऐसा संगठन है जहाँ पद नहीं माँगे जाते — पद मिलते हैं, और तब मिलते हैं जब कार्यकर्ता अपनी योग्यता से सिद्ध कर दे कि वह उस उत्तरदायित्व को सम्भाल सकता है। नरेन्द्र मोदी ने यह सिद्ध किया — बार-बार, हर स्तर पर।

उन्नीस सौ पचासी में एक निर्णायक मोड़ आया। गुजरात में सामुदायिक तनाव के बाद संघ ने एक महत्वपूर्ण रणनीतिक निर्णय लिया — नरेन्द्र मोदी को भारतीय जनता पार्टी के संगठन-कार्य के लिए नियुक्त किया गया। यह एक दूरदर्शी निर्णय था। एक ऐसे व्यक्ति को, जिसने डेढ़ दशक तक संघ के ज़मीनी संगठन-कार्य को समझा हो और जिसने आपातकाल के संकट में भी अपनी दृढ़ता प्रमाणित की हो, उसे भाजपा के संगठन-निर्माण में लगाना एक स्वाभाविक और विवेकपूर्ण निर्णय था।

यह नियुक्ति उन्नीस सौ पचासी में हुई — उस समय जब गुजरात में जातीय और सामुदायिक तनाव के कारण भाजपा के सामने एक विशेष चुनौती थी। ऐसे समय में एक ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता थी जो न केवल संगठन-कौशल जानता हो,

बल्कि जिसमें संकट में भी स्थिर रहने की क्षमता हो, जो विभिन्न वर्गों और समुदायों से संवाद करना जानता हो, और जिसके पास जमीनी स्तर तक का अनुभव हो। नरेन्द्र मोदी इन सभी मानदण्डों पर खरे उतरते थे। इस नियुक्ति के साथ ही एक नए अध्याय का आरम्भ हुआ — वह अध्याय जिसमें एक प्रचारक राजनीतिक संगठनकर्ता बना।

भाजपा में आने के तुरन्त बाद नरेन्द्र मोदी ने जो पहला बड़ा काम किया, वह था उन्नीस सौ छियासी में अहमदाबाद नगर-पालिका चुनाव का संगठन। यह चुनाव भाजपा के लिए एक परीक्षा थी — और इस परीक्षा में नरेन्द्र मोदी की संगठन-कुशलता ने पहली बार अपनी चमक दिखाई। उन्होंने बूथ-स्तर तक योजना बनाई, कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित किया, प्रचार-तन्त्र को व्यवस्थित किया, और पार्टी की विचारधारा को आम नागरिक तक पहुँचाने के लिए सरल किन्तु प्रभावी तरीके खोजे। अहमदाबाद में भाजपा को पहली बार नगर-पालिका चुनाव में महत्वपूर्ण सफलता मिली। इस सफलता ने पार्टी के भीतर नरेन्द्र मोदी को एक विश्वसनीय और दक्ष संगठनकर्ता के रूप में स्थापित कर दिया।

उन्नीस सौ सतासी में वे गुजरात भाजपा के संगठन-सचिव बने। यह एक केन्द्रीय उत्तरदायित्व था — राज्य-स्तर पर पार्टी के सम्पूर्ण संगठन का प्रबन्धन। उन्नीस सौ अट्ठासी में वे गुजरात भाजपा के महासचिव बने। इन पदों पर रहते हुए उन्होंने जो काम किया, वह केवल प्रशासनिक नहीं था — वह एक दृष्टि से प्रेरित था। गुजरात में भाजपा को एक सशक्त राजनीतिक शक्ति के रूप में खड़ा करना था — न केवल चुनावी दृष्टि से, बल्कि वैचारिक दृष्टि से भी। इसके लिए उन्होंने जिला-स्तर तक, यहाँ तक कि बूथ-स्तर तक, संगठन को मजबूत किया।

भाजपा में नरेन्द्र मोदी का यह प्रवेश एक ऐसे समय में हुआ जब पार्टी अपने शैशव-काल में थी। उन्नीस सौ अस्सी में स्थापित यह दल उन्नीस सौ चौरासी के चुनावों में केवल दो लोकसभा सीटें जीत सकी थी — इन्दिरा गांधी की हत्या के बाद की सहानुभूति-लहर में भाजपा का यह प्रदर्शन निराशाजनक था। किन्तु इसी निराशा के धरातल से उठकर एक नया संगठन खड़ा करना था — और इस काम के लिए वही व्यक्ति चाहिए था जिसमें धैर्य था, दृष्टि थी, और ज़मीनी काम की क्षमता थी। नरेन्द्र मोदी ने यह काम स्वीकार किया।

उन्होंने गुजरात में भाजपा के लिए जो संगठन-ढाँचा खड़ा किया, वह आदर्श था। एक-एक जिले में, एक-एक तालुके में, और फिर एक-एक बूथ पर — पार्टी के कार्यकर्ताओं का एक ऐसा जाल बिछाया जो अगले चुनावों में पार्टी की जीत की नींव बना। उन्नीस सौ नब्बे और उन्नीस सौ पचानवे के गुजरात विधानसभा चुनावों में भाजपा की सफलता का एक महत्वपूर्ण कारण वह संगठन था जो नरेन्द्र मोदी ने वर्षों की मेहनत से खड़ा किया था।

उनके संगठन-कार्य की एक विशेषता थी जो उन्हें उनके समकालीनों से अलग करती थी — वे विवरणों पर भी उतनी ही पैनी दृष्टि रखते थे जितनी बड़ी रणनीति पर। कोई भी कार्य उनके लिए "मोटे तौर पर" पूर्ण नहीं था — हर काम पूरी तरह से सम्पन्न होना चाहिए था। एक सभा का आयोजन होता, तो वे माइक्रोफोन से लेकर बैठने की व्यवस्था तक, हर विवरण को देखते। एक प्रचार-अभियान चलता, तो वे नारे से लेकर पोस्टर के रंग तक, हर तत्व पर ध्यान देते। यह सूक्ष्म-दृष्टि और व्यापक-दृष्टि का संयोग था जो एक साधारण राजनीतिक कार्यकर्ता में नहीं मिलता।

इसी काल में आधुनिक संचार के प्रति उनकी दूरदर्शिता भी प्रकट होने लगी। जब अधिकांश राजनीतिक संगठन परम्परागत तरीकों — पोस्टर, सभाएँ, दरवाजा-

दरवाजा प्रचार — पर निर्भर थे, नरेन्द्र मोदी ने नवीन विधियों और तकनीकी माध्यमों के प्रति एक खुलापन दिखाया। यह दूरदर्शिता उनके स्वभाव का एक स्थायी अंग थी — समय से आगे देखने की क्षमता, और नवीनता को अपनाने का साहस।

इस काल में एक और पहलू उनके नेतृत्व को विशिष्ट बनाता था — वह था कार्यकर्ताओं के प्रति उनका व्यक्तिगत ध्यान। वे यह भली-भाँति जानते थे कि किसी संगठन की सबसे बड़ी सम्पत्ति उसके समर्पित कार्यकर्ता होते हैं, और उन कार्यकर्ताओं को यदि उचित सम्मान और मार्गदर्शन न मिले तो उनका उत्साह क्षीण हो जाता है। इसीलिए नरेन्द्र मोदी किसी भी बूथ-स्तर के कार्यकर्ता को छोटा नहीं मानते थे — वे उनसे उसी आदर और ध्यान से मिलते थे जिस प्रकार वे किसी वरिष्ठ नेता से मिलते थे। इस व्यवहार ने हज़ारों साधारण कार्यकर्ताओं में एक विशेष प्रतिबद्धता जगाई — वे अनुभव करते थे कि उनका योगदान देखा जाता है, मूल्यांकित होता है। संगठन-कार्य का यह मानवीय आयाम उतना ही महत्वपूर्ण है जितनी रणनीति और संरचना — और नरेन्द्र मोदी इस तथ्य को स्वाभाविक रूप से समझते थे। संघ के प्रचारक-जीवन में उन्होंने यह सीखा था कि हर मनुष्य में कुछ न कुछ विशेष होता है — उसे पहचानना और उचित कार्य में लगाना ही नेतृत्व की वास्तविक कला है।

उन्नीस सौ पचानवे में एक महत्वपूर्ण विस्तार हुआ। नरेन्द्र मोदी को भाजपा का राष्ट्रीय सचिव नियुक्त किया गया — उन्हें हरियाणा और हिमाचल प्रदेश में पार्टी के कार्यों का दायित्व दिया गया। यह पहली बार था कि वे गुजरात की सीमाओं से बाहर जाकर राष्ट्रीय स्तर पर पार्टी के लिए काम कर रहे थे। इस भूमिका में उन्होंने गुजरात में जो संगठन-कौशल सीखा था, उसे दो भिन्न राज्यों में, भिन्न भाषाओं और

भिन्न सामाजिक संरचना के बीच, लागू किया। उनकी यह क्षमता कि वे विभिन्न क्षेत्रों और संस्कृतियों में समान रूप से प्रभावशाली हो सकते थे, उनके राष्ट्रीय स्तर पर उभरने का पूर्व-संकेत थी।

उन्नीस सौ नब्बे के दशक में भाजपा एक तेज़ी से बढ़ती शक्ति के रूप में उभर रही थी। उन्नीस सौ नब्बे के राम-मन्दिर आन्दोलन, उन्नीस सौ इक्यानवे के चुनावों में बेहतर प्रदर्शन, और उन्नीस सौ छियानवे में पहली बार अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में सरकार बनाने की कोशिश — ये सब उस बढ़त के पड़ाव थे। इस पूरे दौर में नरेन्द्र मोदी संगठन-कार्य में थे — किन्तु वे केवल एक संगठन-कार्यकर्ता नहीं थे। वे उस पार्टी की राष्ट्रीय कहानी के एक अनिवार्य पात्र थे जो एक दिन भारत की सबसे बड़ी राजनीतिक शक्ति बनने वाली थी।

महासचिव (संगठन) के पद पर पहुँचने के बाद नरेन्द्र मोदी का काम और भी विस्तृत हो गया। अब वे केवल एक राज्य की नहीं, बल्कि सम्पूर्ण देश की भाजपा के संगठनात्मक ढाँचे के प्रभारी थे। इस पद पर उन्होंने जो कार्य किया, उसका प्रत्यक्ष प्रभाव उन्नीस सौ निन्यानवे के लोकसभा चुनावों में दिखा जब भाजपा के नेतृत्व में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन ने बहुमत प्राप्त किया और अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार ने पाँच वर्ष पूरे किए। इस सफलता में अनेक कारण थे, किन्तु एक महत्वपूर्ण कारण वह संगठनात्मक सुदृढ़ता थी जिसे नरेन्द्र मोदी ने गुजरात से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक बनाई थी।

इन्हीं वर्षों में नरेन्द्र मोदी ने यह भी सिद्ध किया कि संगठनात्मक कार्यकर्ता और रणनीतिकार के बीच कोई विभाजन रेखा नहीं होती। वे न केवल संगठन की ज़मीनी संरचना बनाते थे, बल्कि चुनावी रणनीति में भी सक्रिय भूमिका निभाते थे — कहाँ कौन-सा उम्मीदवार हो, कहाँ किस मुद्दे पर जोर दिया जाए, और कैसे विभिन्न वर्गों

तक पार्टी का सन्देश पहुँचाया जाए। यह समग्र दृष्टि — संगठन और रणनीति दोनों को एकसाथ देखने की क्षमता — उन्हें भाजपा में अनिवार्य बनाती थी।

उन्नीस सौ सतानवे और अट्ठानवे के मध्य जो राजनीतिक परिदृश्य था, वह भाजपा के लिए एक महत्वपूर्ण मोड़ था। अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में पार्टी एक स्थिर सरकार बनाने की स्थिति में थी, और इसके लिए एक मज़बूत राष्ट्रीय संगठन की आवश्यकता थी। नरेन्द्र मोदी उस आवश्यकता के उत्तर थे।

और फिर पाँच जनवरी उन्नीस सौ अट्ठानवे को, एक ऐतिहासिक नियुक्ति हुई जो नरेन्द्र मोदी की संगठनात्मक यात्रा का सर्वोच्च पड़ाव था — वे भाजपा के महासचिव (संगठन) बने। यह भाजपा का सर्वोच्च संगठनात्मक पद था। इस पद पर बैठने वाला व्यक्ति सम्पूर्ण देश में पार्टी के संगठनात्मक ढाँचे का निर्माण और संचालन करता है — राज्य-स्तरीय नेताओं से लेकर बूथ-कार्यकर्ताओं तक, हर स्तर पर संगठन को दिशा देता है। यह नियुक्ति केवल व्यक्तिगत उपलब्धि नहीं थी — यह इस बात का प्रमाण था कि एक व्यक्ति जो एक छोटे-से शहर से उठा था, जिसने बचपन में चाय की केतली उठाई थी, जिसने वडनगर की धूल-भरी गलियों में खेला था, वह अपनी निष्ठा और परिश्रम के बल पर देश के एक प्रमुख राजनीतिक दल की सबसे महत्वपूर्ण संगठनात्मक कड़ी बन सकता है।

एक सम्भाग प्रचारक से महासचिव (संगठन) तक की यात्रा — उन्नीस सौ सतहत्तर से लेकर उन्नीस सौ अट्ठानवे तक — इक्कीस वर्षों का वह संगठन-कार्य जो अधिकांश लोगों की दृष्टि से ओझल रहा, किन्तु जो वास्तव में एक राष्ट्र की राजनीतिक संरचना को नए आकार में ढालने का काम था। इस यात्रा में हर क़दम पर नरेन्द्र मोदी ने यह सिद्ध किया कि संगठन केवल संस्था नहीं होती — वह लोगों की ऊर्जा को एक दिशा में लगाने की कला होती है, और इस कला में वे निपुण थे।

किन्तु इस सम्पूर्ण उत्थान में सबसे उल्लेखनीय बात यह थी कि नरेन्द्र मोदी ने यह सब किसी व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए नहीं किया। उन्होंने एक विचार के लिए काम किया, एक ध्येय के लिए, एक ऐसी दृष्टि के लिए जिसमें भारत को उसकी खोई हुई गरिमा वापस मिले और देश का प्रत्येक नागरिक अपनी पूर्ण क्षमता के साथ जी सके। वे पर्दे के पीछे रहकर काम करने वाले उस कार्यकर्ता थे जिसका लक्ष्य अपना नाम चमकाना नहीं, बल्कि संगठन को मजबूत करना था। संघ के प्रचारक-जीवन में जो निःस्वार्थ सेवा का भाव सीखा था, वह उनके राजनीतिक जीवन में भी उतनी ही स्पष्टता से दिखाई दिया।

उन्नीस सौ सतासी से उन्नीस सौ अट्ठानवे तक की उस दशकव्यापी यात्रा को — जिसमें वे गुजरात भाजपा के संगठन-सचिव से महासचिव बने, फिर राष्ट्रीय सचिव बने, और अन्ततः पार्टी के महासचिव (संगठन) के सर्वोच्च पद तक पहुँचे — हम केवल एक करियर की सफलता के रूप में नहीं देख सकते। यह सफलता किसी महत्वाकांक्षी व्यक्ति की सीढ़ियाँ चढ़ने की कहानी नहीं है। यह एक ऐसे व्यक्ति की कहानी है जो यह जानता था कि किसी बड़े सपने को साकार करने के लिए पहले एक सुदृढ़ संगठन बनाना होगा — और जिसने उस संगठन के निर्माण में अपना सर्वस्व लगा दिया।

यहाँ यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठता है कि एक संगठन-कार्यकर्ता का जीवन कैसा होता है। जब नरेन्द्र मोदी गुजरात में बूथ-स्तर तक संगठन बना रहे थे, तो इसका अर्थ यह था कि वे एक-एक गाँव में जाते थे, एक-एक कार्यकर्ता को व्यक्तिगत रूप से जानते थे, उसकी क्षमताएँ समझते थे, और उसे सही काम में लगाते थे। इस काम में कोई बड़ा मंच नहीं था, कोई भव्य समारोह नहीं था — केवल एक कार्यकर्ता और एक नेता के बीच का वह सम्वाद था जो संगठन की

वास्तविक जड़ बनता है। नरेन्द्र मोदी ने इस काम को जिस निष्ठा से किया, वह उन्हें उन नेताओं से अलग करती थी जो केवल भाषण देना जानते हैं। वे जानते थे कि एक संगठन केवल बड़े-बड़े नेताओं के भाषणों से नहीं बनता — वह उन हज़ारों साधारण कार्यकर्ताओं के अथक परिश्रम से बनता है जो अपने-अपने क्षेत्र में, बिना किसी यश की आशा के, रात-दिन काम करते हैं।

भाजपा के भीतर नरेन्द्र मोदी की प्रतिष्ठा केवल उनके पद से नहीं आई — वह उनके काम से आई। जब भी कोई कठिन चुनाव था, जब भी किसी राज्य में संगठन को खड़ा करना था, जब भी किसी संकट में पार्टी को सम्भालना था — मोदी वहाँ होते थे, बिना थके, बिना शिकायत किए, और हर बार अपेक्षा से अधिक परिणाम लेकर। यही वह निष्ठा थी जिसने उन्हें अनेक दिग्गज नेताओं के बीच एक विशिष्ट स्थान दिलाया।

और यह सब करते हुए उन्होंने कभी अपना वह प्रचारक-स्वभाव नहीं खोया जो संघ ने उन्हें दिया था। न तामझाम, न व्यक्तिगत वैभव, न सत्ता का अहंकार। वे उसी सादगी से जीते रहे जिसमें पले थे, उसी अनुशासन से काम करते रहे जो हिमालय की यात्रा में आत्मसात हुआ था, और उसी विनम्रता से लोगों से मिलते रहे जो उनकी माटी का संस्कार था। यही सादगी, यही निष्ठा, यही अनुशासन — ये तीन गुण उस संगठन-शिल्पी की असली पूँजी थे।

जब हम इस सम्पूर्ण यात्रा को एक दृष्टि से देखते हैं — वडनगर की माटी से आरम्भ करके, चाय की दुकान से श्रम की गरिमा सीखकर, विद्यालय के मंच पर वाक्-शक्ति अर्जित करके, शर्मिष्ठा सरोवर में साहस और करुणा दोनों को जीकर, हिमालय की गोद में आध्यात्मिक गहराई प्राप्त करके, विवेकानन्द की प्रेरणा से ध्येय-बोध पाकर, संघ के अनुशासन में संगठन-कला सीखकर, आपातकाल की

भट्टी में दृढ़ता को परखकर, और भाजपा के संगठन-कार्य में दशकों की निष्ठा से — तो हम एक ऐसे व्यक्तित्व को उभरते देखते हैं जो अपने समय के किसी भी नेता से भिन्न था। यह भिन्नता उसके जन्म में नहीं थी, उसकी विरासत में नहीं थी — यह भिन्नता उस यात्रा में थी जो उसने स्वयं चुनी थी, उस तप में थी जो उसने स्वेच्छा से स्वीकार किया था।

भारत के राजनीतिक इतिहास में ऐसे अनेक नेता हुए जो किसी बड़े परिवार से उठे, जिन्हें विरासत में राजनीति मिली, और जिन्होंने पद की सीढ़ियाँ चढ़ने में परिवार और सम्पत्ति का सहारा लिया। नरेन्द्र मोदी की कहानी इनसे सर्वथा भिन्न है। उनकी हर सीढ़ी स्वयं बनाई गई थी — अपने परिश्रम से, अपनी निष्ठा से, और अपने उस अटूट विश्वास से कि राष्ट्र की सेवा ही जीवन का सर्वोच्च उद्देश्य है। यही वह आधार था जिस पर आगे चलकर एक ऐतिहासिक नेतृत्व का भव्य भवन खड़ा हुआ — पहले गुजरात के मुख्यमंत्री के रूप में, और फिर भारत के प्रधानमंत्री के रूप में, जहाँ से उन्होंने माँ भारती को विश्व-मंच पर एक नई गरिमा और प्रतिष्ठा दिलाई।

नरेन्द्र मोदी ने सिद्ध किया कि नेतृत्व जन्म से नहीं, कर्म से बनता है। और यही सन्देश इस सम्पूर्ण प्रथम खण्ड का मूल स्वर है — कि संकल्प, समर्पण और निरन्तर परिश्रम के बल पर, वडनगर की माटी में जन्मा एक साधारण बालक भी असाधारण इतिहास रच सकता है, और माँ भारती के सबसे प्रिय पुत्रों में गिना जा सकता है।

अब हम पुस्तक के दूसरे खण्ड की ओर बढ़ते हैं, जहाँ हम उस नेता को कार्य करते हुए देखेंगे जिसने भारत को भीतर से गढ़ा — जन-धन से लेकर डिजिटल क्रान्ति तक, और ग़रीब के घर के चूल्हे से लेकर नए भारत की राजमार्ग-रेखाओं तक।

खण्ड दो — भीतर से भारत का निर्माण

अध्याय ६ — जन-धन से डिजिटल क्रान्ति

२६ मई २०१४ को जब नरेन्द्र मोदी ने भारत के प्रधानमंत्री के रूप में शपथ ली, उस दिन उनके सामने जो देश था वह अपनी विशालता में उतना ही विरोधाभासी था जितना किसी उपन्यास का जटिल पात्र होता है। एक ओर भारत का शेयर बाज़ार उछाल भर रहा था, तकनीकी उद्यमी बेंगलुरु और हैदराबाद में वैश्विक स्तर की कम्पनियाँ बना रहे थे, और मध्यवर्ग तेज़ी से समृद्ध हो रहा था। किन्तु दूसरी ओर, देश की आधी से अधिक वयस्क जनसंख्या किसी भी औपचारिक बैंकिंग व्यवस्था से पूरी तरह बाहर थी। यह विरोधाभास केवल सांख्यिकीय नहीं था — यह एक गहरी नैतिक चुनौती थी।

करोड़ों परिवारों के लिए बैंक एक दूर की, अपरिचित, और प्रायः भयावह संस्था थी — जहाँ प्रवेश के लिए न्यूनतम शेष राशि चाहिए थी, जहाँ काग़ज़ात चाहिए थे, जहाँ लम्बी क़तारें थीं, और जहाँ एक साधारण ग्रामीण या शहरी मज़दूर को वह आत्मसम्मान नहीं मिलता था जिसका वह अधिकारी था। इन परिवारों के पास अपनी गाढ़ी कमाई रखने का एकमात्र तरीका था — घर की दीवार में या मिट्टी की हँडिया में। वहाँ वह राशि न बढ़ती थी, न पूरी तरह सुरक्षित थी, और न कोई सरकारी सहायता उस पते पर पहुँचती थी।

सरकार के कल्याण कार्यक्रमों की राशि जो उन तक पहुँचनी थी, वह रास्ते में ही — बिचौलियों के हाथों में, दलालों की जेब में, या भ्रष्ट तन्त्र की तिजोरियों में — सिमट

जाती थी। अनुमान लगाए जाते थे कि सरकार जो रुपया ग़रीब के लिए भेजती थी उसका बहुत बड़ा भाग वास्तविक पात्र व्यक्ति तक कभी पहुँचता ही नहीं था। यह केवल भ्रष्टाचार नहीं था — यह एक संरचनात्मक विफलता थी, उस व्यवस्था की विफलता जिसमें ग़रीब को देखा तो जाता था, किन्तु जिस तक वास्तव में पहुँचा नहीं जाता था। इस रिसाव को रोकने के लिए न कोई दृष्टि थी, न कोई इच्छाशक्ति, और न कोई तकनीकी साधन।

नरेन्द्र मोदी ने इस समस्या को उसकी जड़ में समझा। उनका निदान सतह पर नहीं, बल्कि व्यवस्था की संरचना पर था। यदि बिचौलिया समस्या है, तो बिचौलिए को समाप्त करो। यदि बैंक खाते का न होना बाधा है, तो हर हाथ में बैंक खाता दो। यदि पहचान न होना कमज़ोरी है, तो हर नागरिक को उसकी अपनी विशिष्ट पहचान दो। और यदि दूरी बाधा है, तो मोबाइल को वह सेतु बनाओ जो व्यक्ति को सरकार से सीधे जोड़े। यही था 'जैम त्रिमूर्ति' — जन-धन, आधार और मोबाइल का वह ऐतिहासिक त्रिवेणी-संगम जिसने भारत की कल्याण-व्यवस्था को आमूल-चूल बदल दिया।

इस त्रिमूर्ति का पहला और सबसे भव्य स्तम्भ था 'प्रधानमंत्री जन-धन योजना', जो २८ अगस्त २०१४ को प्रारम्भ हुई। इस योजना की घोषणा करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा था कि जिस परिवार का एक सदस्य भी आर्थिक मुख्यधारा से बाहर है, वह परिवार समूची व्यवस्था के लाभ से वंचित है। और जब करोड़ों परिवार बाहर हों, तो राष्ट्र भी अपनी पूर्ण क्षमता से नहीं चल सकता। इस योजना का लक्ष्य था — शून्य न्यूनतम शेष पर, बिना किसी शुल्क के, प्रत्येक भारतीय परिवार को बैंक खाते से जोड़ना। किसी को कोई पूँजी नहीं चाहिए थी; केवल एक पहचान-पत्र पर्याप्त था। और यदि वह भी न हो, तो आत्म-प्रमाणन की सुविधा थी। यह था लोकतन्त्र की

उस आत्मा का व्यावहारिक प्रकाशन जो कहती है — हर नागरिक समान, और हर नागरिक का अधिकार समान।

परिणाम कल्पना से परे था। शुभारम्भ के दिन ही डेढ़ करोड़ खाते खुले — यह एक दिन में विश्व इतिहास का सबसे बड़ा बैंक-खाता-खोलने का अभियान था। फरवरी २०२६ तक देश में ५७.७८ करोड़ जन-धन खाते थे। इन खातों में जमा राशि थी २,९४,७०२ करोड़ रुपये — यह आँकड़ा सिद्ध करता है कि ये खाते केवल काग़ज़ी नहीं थे, उनमें वास्तविक जीवन-बचत थी, और वे सक्रिय रूप से उपयोग में थे। इनमें से ५५.८ प्रतिशत खाते महिलाओं के नाम पर थे — और यह तथ्य अपने आप में एक सामाजिक क्रान्ति की कहानी कहता है।

पहले ऐसे असंख्य परिवारों में जहाँ पुरुष कमाते थे और स्त्री घर सँभालती थी, वहाँ स्त्री के पास कोई स्वतंत्र आर्थिक पहचान नहीं होती थी। यदि सरकारी सहायता मिलती भी थी, तो वह प्रायः पति के माध्यम से आती थी। जन-धन ने उस स्त्री को उसका नाम, उसका खाता, और उसकी आर्थिक स्वायत्तता दी। एक ग्रामीण माँ के लिए इसका अर्थ था कि जब सरकार उसे उज्ज्वला गैस सब्सिडी भेजती, या किसान सम्मान निधि की किश्त आती, तो वह सीधे उसके अपने खाते में आती — उसके पति के नहीं, किसी बिचौलिए के नहीं। यह आर्थिक समावेशन से बढ़कर सामाजिक सशक्तीकरण था — एक ऐसी मुक्ति जो बिना किसी नारेबाज़ी के, चुपचाप, करोड़ों महिलाओं की ज़िन्दगी में आई।

इसी जन-धन ढाँचे पर बाद में बीमा और पेंशन की सुरक्षा-छत भी जोड़ी गई। 'प्रधानमंत्री जीवन ज्योति बीमा योजना' में २६.८८ करोड़, 'प्रधानमंत्री सुरक्षा बीमा योजना' में ५७.११ करोड़, और 'अटल पेंशन योजना' में ८.८४ करोड़ लोग जुड़े। प्रति वर्ष केवल कुछ रुपये प्रीमियम पर जीवन बीमा, दुर्घटना बीमा और वृद्धावस्था

पेंशन का आश्वासन — यह पहले असंगठित क्षेत्र के मज़दूरों, किसानों और छोटे व्यवसायियों के लिए एक सपना था। जन-धन की जड़ों पर टिककर इन योजनाओं ने वह सपना वास्तविकता में बदला।

जैम त्रिमूर्ति का दूसरा स्तम्भ था 'आधार' — भारत के प्रत्येक नागरिक की विशिष्ट बारह-अंकीय बायोमेट्रिक पहचान। जिस व्यक्ति का कोई नाम-पता नहीं, जो जन्म-प्रमाण-पत्र से वंचित है, जो रोज़गार के लिए एक शहर से दूसरे शहर भटकता रहा — उसे भी अब एक ऐसी पहचान मिली जो देश-भर में मान्य थी, जिसे न बदला जा सकता था, न नकली बनाया जा सकता था। आधार ने भारत की कल्याण-व्यवस्था की एक पुरानी और गहरी बीमारी का उपचार किया — वह थी फर्जी और डुप्लीकेट लाभार्थियों की समस्या। करोड़ों 'भूत खाते' — जो वास्तव में अस्तित्व में नहीं थे किन्तु जिनके नाम पर सरकारी सहायता ली जाती थी — आधार की बायोमेट्रिक जाँच से एक-एक करके छाँटे गए। परिणाम यह हुआ कि वास्तविक पात्रों को उनका पूरा हक़ मिलने लगा।

तीसरा स्तम्भ था मोबाइल — वह लोकतांत्रिक तकनीक जो अब गाँव-गाँव तक पहुँच चुकी थी। सस्ती दरों पर इंटरनेट और मोबाइल डेटा ने इस तकनीक को समाज के हर वर्ग की हथेलियों तक पहुँचाया। इन तीनों को मिलाकर बनी 'प्रत्यक्ष लाभ अन्तरण' (Direct Benefit Transfer — DBT) व्यवस्था ने भारत के कल्याण-तन्त्र को वह पारदर्शिता और दक्षता दी जो दशकों में सम्भव नहीं हो पाई थी।

अब सरकार का रुपया सीधे पात्र व्यक्ति के बैंक खाते में जाता था — कोई बिचौलिया नहीं, कोई देरी नहीं, कोई मनमानी कटौती नहीं। 'पहल' (PAHAL) योजना के अन्तर्गत एलपीजी सब्सिडी सीधे खाते में जाने लगी, जिससे अकेले इस

एक सुधार से वार्षिक २३,००० करोड़ रुपये से अधिक की बचत हुई। छात्रवृत्तियाँ, मज़दूरी-भुगतान, उर्वरक सब्सिडी और पेंशन — सब डीबीटी की पटरी पर आए। समग्र डीबीटी व्यवस्था के माध्यम से रिसाव रोककर ३.४८ लाख करोड़ रुपये की बचत हुई। लाभार्थियों की संख्या जो पहले ११ करोड़ थी, वह बढ़कर लगभग १७६ करोड़ तक पहुँची। सरकारी व्यय में सब्सिडी का अनुपात १६ प्रतिशत से घटकर ९ प्रतिशत रह गया — अर्थात् राष्ट्रीय संसाधनों का अधिकाधिक हिस्सा वास्तविक विकास और नई परियोजनाओं पर जाने लगा।

किन्तु इस डिजिटल यात्रा का सबसे चमत्कारी और विश्व को अचम्भित करने वाला अध्याय था यूनिफाइड पेमेंट्स इंटरफेस — यू.पी.आई. — का उदय। ११ अप्रैल २०१६ को नेशनल पेमेंट्स कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया (NPCI) द्वारा प्रारम्भ की गई इस प्रणाली ने भारत को डिजिटल भुगतान के क्षेत्र में ऐसे मुकाम पर पहुँचाया जहाँ आज विश्व की कोई भी उन्नत अर्थव्यवस्था नहीं ठहर पाई।

जब यह प्रणाली आरम्भ हुई, तब पहले वित्त वर्ष में केवल २ करोड़ लेन-देन हुए। किन्तु वर्ष २०२५-२६ में यह संख्या पहुँची २४,१६२ करोड़ वार्षिक लेन-देन तक — यह वृद्धि लगभग बारह हज़ार गुना की है। यह किसी भी वित्तीय तकनीक के इतिहास में सबसे तीव्र प्रसारों में से एक है। मई २०२६ तक ७२० से अधिक बैंक इस प्रणाली से जुड़ चुके थे। अक्टूबर २०२५ तक मासिक यू.पी.आई. लेन-देन २,००० करोड़ से अधिक हो चुके थे — जिसमें ५०.४ करोड़ अद्वितीय उपयोगकर्ता और ६.५ करोड़ व्यापारी थे। भारत के समस्त डिजिटल खुदरा भुगतान का ८५ प्रतिशत यू.पी.आई. के माध्यम से होने लगा।

और वैश्विक स्तर पर — विश्व के कुल रियल-टाइम डिजिटल भुगतान का लगभग ४९ प्रतिशत अकेले भारत में होता है। यह वह देश है जिसे एक दशक पहले 'नकदी-

निर्भर' कहा जाता था। आज उसी देश में एक ठेलेवाला किसी भी ग्राहक से क्यू.आर. कोड के ज़रिये तत्काल भुगतान पाता है। एक किसान खाद-बीज की दुकान में फ़ोन से भुगतान करता है। एक मन्दिर में तीर्थयात्री श्रद्धा-सुमन क्यू.आर. कोड स्कैन करके अर्पित करता है। एक ग्रामीण माँ अपनी बेटी को दूरस्थ शहर में पढ़ने के लिए पैसे भेजती है — बिना बैंक गए, बिना किसी की सहायता के। यह डिजिटल लोकतंत्र का सबसे प्रत्यक्ष और मानवीय चेहरा है।

इस सम्पूर्ण डिजिटल क्रान्ति को एक व्यापक वैचारिक छत के नीचे लाने वाला था 'डिजिटल इंडिया' कार्यक्रम, जो १ जुलाई २०१५ को प्रारम्भ हुआ। इसके नौ स्तम्भों में ब्रॉडबैंड राजमार्ग, मोबाइल कनेक्टिविटी, सार्वजनिक इंटरनेट पहुँच, ई-शासन, इलेक्ट्रॉनिक सेवा-प्रदाय (ई-क्रान्ति), सूचना की सार्वभौमिक उपलब्धता, इलेक्ट्रॉनिक्स उत्पादन, आईटी रोज़गार और शीघ्र-कार्यान्वयन कार्यक्रम सम्मिलित थे।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत अनेक परिवर्तनकारी पहल हुईं। 'डिजिलॉकर' ने नागरिकों को उनके महत्वपूर्ण दस्तावेज़ — शिक्षा-प्रमाण-पत्र, वाहन-पत्र, आधार, पैन, बीमा-पत्र — डिजिटल रूप में सुरक्षित रखने और आवश्यकतानुसार कहीं भी प्रस्तुत करने की सुविधा दी। वह दिन समाप्त हुआ जब नागरिक सरकारी कार्यालय में काग़ज़ की प्रतिलिपि लेकर घंटों खड़ा रहता था। 'उमंग' (UMANG) एप्लिकेशन ने सैकड़ों सरकारी सेवाओं को एक ही मंच पर समेटा। 'भाषिणी' ने भारत की भाषाई विविधता को तकनीक से जोड़ने का काम किया, ताकि डिजिटल सेवाएँ केवल अंग्रेज़ी या हिन्दी जाननेवालों तक सीमित न रहें। 'ओएनडीसी' (Open Network for Digital Commerce) ने छोटे दुकानदारों और कारीगरों को बड़े डिजिटल व्यापार-मंचों से जोड़ा।

'इंडियाएआई' के अन्तर्गत ३४,००० से अधिक जीपीयू-क्षमता का एक सार्वजनिक कृत्रिम-बुद्धि अवसंरचना तैयार किया गया — ताकि भारत के शोधकर्ता, उद्यमी और छात्र कृत्रिम बुद्धि की शक्ति तक पहुँच सकें। यह एक दूरदर्शी निवेश था — यह समझकर कि आने वाली सदी उसी देश की होगी जो कृत्रिम बुद्धि में सशक्त होगा।

कोविड-१९ की महामारी ने एक क्षण में दुनिया को थाम दिया — और उसी क्षण में भारत के डिजिटल अवसंरचना ने अपनी वास्तविक शक्ति प्रकट की। 'कोविन' डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म ने २२० करोड़ से अधिक टीके-खुराकों का प्रबन्धन किया — यह विश्व के इतिहास में किसी एकल डिजिटल प्रणाली पर चलाए गए सबसे बड़े टीकाकरण अभियानों में से एक था। नागरिक घर से ही पंजीयन करते, अपना समय-स्थान चुनते, और टीकाकरण का प्रमाण-पत्र तत्काल डिजिटल रूप में प्राप्त करते। यह सम्भव था केवल इसलिए क्योंकि जैम त्रिमूर्ति की नींव पहले ही पड़ चुकी थी।

नवम्बर २०१६ में विमुद्रीकरण की उस ऐतिहासिक घोषणा ने — जब पाँच सौ और एक हज़ार रुपये के नोट चलन से बाहर हो गए — डिजिटल भुगतान को एक असाधारण और अप्रत्याशित गति दी। उस दौर में नकद-विकल्प की आवश्यकता ने लाखों-करोड़ों लोगों को पहली बार डिजिटल भुगतान की ओर प्रेरित किया। और जो एक बार इस प्रणाली का अभ्यास कर गया, उसने फिर नकदी की ओर लौटना नहीं चाहा। यू.पी.आई. की वह असाधारण वृद्धि जो हमने देखी, उसमें इस जन-चेतना का भी महत्वपूर्ण योगदान था।

जब हम इस सम्पूर्ण यात्रा पर दृष्टि डालते हैं, तो एक गहरा सत्य उभरकर आता है — कि नरेन्द्र मोदी ने तकनीक को केवल सुविधा का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक

न्याय का माध्यम बनाया। पहले जिस ग़रीब को व्यवस्था 'लाभार्थी' की भाषा में सम्बोधित करती थी, उसे अब एक डिजिटल नागरिक के रूप में स्वीकार किया गया — जिसके पास अपना खाता है, अपनी पहचान है, और अपना अधिकार सीधे उसके पास आता है।

३.४८ लाख करोड़ रुपये की वह बचत केवल एक आँकड़ा नहीं है — वह उन करोड़ों परिवारों के हाथों में पहुँची वह राशि है जो पहले रास्ते में ही छिन जाती थी। लाभार्थियों की संख्या ११ करोड़ से १७६ करोड़ — यह भी केवल संख्या नहीं है; यह उन करोड़ों मनुष्यों की पहचान है जिन्हें पहले व्यवस्था ने देखा नहीं था। यह डिजिटल क्रान्ति उस व्यक्ति की सोच से उपजी थी जो स्वयं अभाव में पला था और जो जानता था कि व्यवस्था की दरारों से कैसे ग़रीब का हक़ बह जाता है।

यू.पी.आई. की सफलता का एक और आयाम है जिसे विशेष रूप से रेखांकित किया जाना चाहिए — वह है इसकी अन्तरराष्ट्रीय स्वीकार्यता। भारत ने यू.पी.आई. को विदेशों में भी विस्तारित किया। सिंगापुर, संयुक्त अरब अमीरात, फ्रांस, नेपाल, भूटान, श्रीलंका और अनेक देशों में यू.पी.आई.-आधारित भुगतान स्वीकार होने लगा। जब कोई भारतीय पर्यटक पेरिस में एफ़िल टॉवर के सामने खड़ा होकर यू.पी.आई. से भुगतान करता है, तो यह भारत की डिजिटल शक्ति का विश्व-मंच पर प्रदर्शन है। अनेक देशों की सरकारें भारत के यू.पी.आई. मॉडल का अध्ययन करने आईं और उससे सीखने का प्रयास किया। अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने भी भारत के डिजिटल भुगतान मॉडल को वैश्विक स्तर पर उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया।

इस सम्पूर्ण डिजिटल रूपान्तरण में एक और महत्वपूर्ण पहलू था — डिजिटल साक्षरता का विस्तार। सरकार ने 'डिजिटल साक्षरता अभियान' के अन्तर्गत ग्रामीण और अर्ध-शहरी क्षेत्रों में लाखों नागरिकों को डिजिटल उपकरणों का उपयोग

सिखाया। एक बुज़ुर्ग दादी, जो कभी मोबाइल फ़ोन के बटन देखकर घबरा जाती थीं, वे भी अब अपने बेटे को यू.पी.आई. से पैसे भेज सकती हैं। एक छोटे गाँव का युवा, जिसने कभी शहर नहीं देखा, वह भी ऑनलाइन शॉपिंग कर सकता है। यह डिजिटल समावेशन केवल आर्थिक नहीं — यह मानसिक रूप से उस भारत का निर्माण है जो आधुनिक विश्व में आत्मविश्वास से खड़ा है।

डिजिटल भारत का यह स्वप्न यहाँ रुकता नहीं। 'इंडिया स्टैक' — वह डिजिटल अवसंरचना जिसमें आधार, जन-धन, यू.पी.आई. और डिजिलॉकर एक साथ कार्य करते हैं — को विश्व के अनेक देशों ने अपनाने की इच्छा व्यक्त की है। यह भारत की वह 'सॉफ्ट पावर' है जो तोपों से नहीं, बल्कि तकनीक से दुनिया को प्रभावित करती है। 'डिजिटल पब्लिक इन्फ्रास्ट्रक्चर' (DPI) के रूप में भारत का यह मॉडल संयुक्त राष्ट्र और विश्व बैंक के मंचों पर सराहा गया है।

यह भी विचारणीय है कि यू.पी.आई. की सफलता ने भारत को एक अप्रत्याशित भूमिका में खड़ा किया — वह है डिजिटल वित्तीय तकनीक का निर्यातक। सिंगापुर के साथ यू.पी.आई.-पेनाउ लिंकेज, भूटान में यू.पी.आई. स्वीकार्यता, श्रीलंका और मॉरीशस में इसका विस्तार — ये सब उस भारत की उपलब्धियाँ हैं जो कभी तकनीक का आयातक था और अब उसका प्रणेता और निर्यातक है। जब कोई भारतीय विदेश में यू.पी.आई. से भुगतान करता है, तो वह केवल लेन-देन नहीं कर रहा — वह भारत की तकनीकी शक्ति का प्रतिनिधित्व कर रहा है।

डिजिटल इंडिया के अन्तर्गत साइबर सुरक्षा को भी प्राथमिकता दी गई। जैसे-जैसे डिजिटल लेन-देन बढ़े, उनकी सुरक्षा भी आवश्यक हो गई। 'राष्ट्रीय साइबर सुरक्षा नीति' और 'कम्प्यूटर इमरजेन्सी रिस्पांस टीम' (CERT-In) ने इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। साइबर अपराधों से निपटने के लिए विशेष पुलिस बल और

न्यायिक व्यवस्था का विकास हुआ। यह समझते हुए कि डिजिटल अर्थव्यवस्था केवल तभी टिकाऊ है जब उपयोगकर्ता उस पर भरोसा करे।

'नेशनल हेल्थ स्टैक' और 'आयुष्मान भारत डिजिटल मिशन' ने स्वास्थ्य को भी डिजिटल ढाँचे में समेट लिया। अब हर नागरिक का एक 'स्वास्थ्य आईडी' है जिसमें उसका चिकित्सकीय इतिहास, नुस्खे और रिपोर्टें संग्रहीत हो सकती हैं। यदि एक मरीज़ दिल्ली में बीमार पड़ा और उसे मुम्बई के अस्पताल में उपचार कराना हो, तो उसके सम्पूर्ण चिकित्सकीय इतिहास तक डिजिटल रूप में पहुँचा जा सकता है — बिना काग़ज़ों का बोझ उठाए, बिना जानकारी के खोने का भय।

यह भी उल्लेखनीय है कि भारत के डिजिटल रूपान्तरण ने कोविड-काल के आर्थिक राहत-वितरण को अभूतपूर्व गति और सटीकता से सम्भव किया। महामारी के उस कठिन काल में सरकार ने करोड़ों लोगों के खातों में तत्काल धन हस्तान्तरित किया — गैस सब्सिडी, किसान सम्मान निधि, प्रवासी मज़दूरों के लिए राशन। यदि जन-धन खाते नहीं होते, यदि आधार-लिंकिंग नहीं होती, तो यह त्वरित राहत असम्भव होती। डिजिटल इंडिया ने उस संकट में भारत का कवच बनकर काम किया।

जब हम समग्र रूप से देखते हैं, तो यह स्पष्ट होता है कि जन-धन से आरम्भ होकर डिजिटल इंडिया, यू.पी.आई. और डीबीटी तक पहुँचने वाली यह यात्रा कोई संयोग नहीं थी। यह एक सुविचारित, क्रमबद्ध और दूरदर्शी रणनीति थी जिसमें प्रत्येक नीति अगली नीति की नींव बनी। जन-धन के बिना डीबीटी सम्भव नहीं था, डीबीटी के बिना सब्सिडी-सुधार सम्भव नहीं था, आधार के बिना डुप्लीकेट हटाना सम्भव नहीं था, और यू.पी.आई. के बिना डिजिटल भारत का स्वप्न अधूरा था। यह तीन-स्तरीय नींव — पहचान, बैंक-खाता और मोबाइल — भारत के सम्पूर्ण कल्याण-निर्माण की आधारशिला है।

जन-धन से डिजिटल क्रान्ति तक की यह यात्रा उस नेतृत्व की विशेषता है जो केवल नीतियाँ नहीं, बल्कि जीवन बदलता है। 'डेटा गवर्नेंस' और डिजिटल अधिकारों की दिशा में भी भारत ने ठोस क़दम उठाए — 'डिजिटल पर्सनल डेटा प्रोटेक्शन अधिनियम २०२३' उस दिशा में एक ऐतिहासिक क़दम था जिसने नागरिकों के डेटा-अधिकारों को क़ानूनी सुरक्षा दी। जब एक अरब से अधिक नागरिक डिजिटल प्रणाली का उपयोग करते हैं, तो उनके डेटा की सुरक्षा भी उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी उनकी शारीरिक सुरक्षा। यह डिजिटल भारत का वह परिपक्व स्वरूप है जो अधिकारों और दायित्वों को एक साथ सम्मान देता है। और इसी डिजिटल नींव पर खड़ा होकर वह महत्वाकांक्षी आर्थिक निर्माण सम्भव हुआ जिसकी कथा अगला अध्याय कहता है — उस भारत की कथा जिसने निर्माण को अपनी आत्मा का विषय बनाया।

अध्याय ७ — मेक इन इंडिया और आत्मनिर्भरता

२५ सितम्बर २०१४। नई दिल्ली के विज्ञान भवन में उस दिन एक ऐसा क्षण था जिसे इतिहास की दृष्टि से देखा जाए तो वह केवल एक योजना का शुभारम्भ नहीं था, बल्कि एक राष्ट्र की आर्थिक आत्मचेतना का जागरण था। 'मेक इन इंडिया' — भारत में बनाओ — का आह्वान करते हुए नरेन्द्र मोदी ने विश्व के उद्योगपतियों, निवेशकों और उद्यमियों को एक सन्देश दिया जो सरल था किन्तु शक्तिशाली था: भारत की भूमि, भारत की प्रतिभा और भारत का बाज़ार — आपके स्वागत में तैयार है।

इस आह्वान का ऐतिहासिक संदर्भ समझना आवश्यक है। वर्षों से भारत को 'अनुमतियों की जंगल' कहा जाता था। उद्योग लगाने के लिए दर्जनों मन्त्रालयों के दफ़्तरों के चक्कर काटने पड़ते थे, काग़ज़-दर-काग़ज़ अनुमति चाहिए होती थी, और प्रायः वर्षों तक परियोजनाएँ फ़ाइलों में धूल खाती रहती थीं। भारत में श्रम लागत कम थी और बाज़ार विशाल था — यह सत्य था — किन्तु इस जटिलता और अनिश्चितता से डरकर अनेक विदेशी निवेशक मुँह फेर लेते थे। देशी उद्यमी भी वितरण और आयात की ओर झुकते थे, न कि उत्पादन की ओर। यह प्रवृत्ति भारत की विशाल युवा श्रम-शक्ति के लिए घातक थी — क्योंकि उत्पादन ही रोज़गार का सबसे बड़ा स्रोत है।

'मेक इन इंडिया' का पहला काम था इस जड़ता को तोड़ना। और इसके लिए 'व्यापार करने की सुगमता' (Ease of Doing Business) को बढ़ाने के लिए अनेक ठोस और क्रमबद्ध सुधार किए गए। सात संस्करणों में — २०१५ से २०२४ तक — 'व्यापार सुधार कार्ययोजना' (Business Reforms Action Plan — BRAP) के अन्तर्गत देश के राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों में ९,७०० से अधिक सुधार किए गए। यह संख्या देखकर ही अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि भारत की आर्थिक प्रणाली में कितनी अनावश्यक जटिलताएँ थीं — और उन्हें दूर करने के लिए कितने साहस और अध्यवसाय की आवश्यकता थी।

'राष्ट्रीय एकल खिड़की प्रणाली' (NSWS) ने औद्योगिक स्वीकृतियों को एक ही डिजिटल मंच पर उपलब्ध करा दिया। अब किसी उद्यमी को अलग-अलग विभागों के दफ़्तरों के चक्कर नहीं काटने थे — एक ही स्थान पर आवेदन, और एक ही स्थान से स्वीकृति। ४७,००० से अधिक अनुपालनाओं को सरल या समाप्त किया गया, ४,६२३ को अपराध-श्रेणी से बाहर किया गया और 22,२८७ को डिजिटल बनाया गया। 'जन विश्वास अधिनियम २०२३' ने ४२ क़ानूनों की १८३ धाराओं को अपराध की श्रेणी से बाहर किया — इसका अर्थ था कि व्यावसायिक त्रुटियों के लिए अब जेल नहीं, बल्कि जुर्माना। यह परिवर्तन छोटा लगता है किन्तु इसका मनोवैज्ञानिक प्रभाव विशाल था — उद्यमी अब बिना भय के उद्यम कर सकते थे।

इन सुधारों का प्रत्यक्ष परिणाम था विश्व बैंक की 'कारोबार सुगमता' रैंकिंग में भारत का असाधारण उछाल। २०१४ में भारत १४२वें स्थान पर था। २०१९ तक वह ६३वें स्थान पर पहुँच गया — ७९ स्थानों का यह उछाल तीन लगातार वर्षों तक शीर्ष-१० सुधारक देशों में स्थान दिलाने वाला था। जब विश्व बैंक ने २०२० में यह

रैंकिंग बन्द की, तो भारत जो सुधारों की गति बना चुका था वह रुकी नहीं — 'बी-रेडी मूल्यांकन' के नए ढाँचे में भारत के समावेश की तैयारी जारी रही।

किन्तु 'मेक इन इंडिया' का असली और गहरा रूपान्तरण तब आया जब वैश्विक महामारी ने सम्पूर्ण विश्व की आपूर्ति-श्रृंखलाओं को झकझोर दिया। जब चीन के कारखाने बन्द हुए और मास्क, वेंटिलेटर और दवाइयाँ मिलनी बन्द हुईं, तो दुनिया को एहसास हुआ कि एकाधिकारी आपूर्ति-श्रृंखला कितनी ख़तरनाक है। उसी दौर में भारत ने एक ऐतिहासिक पुनरुत्थान देखा। मई २०२० में नरेन्द्र मोदी ने 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' की घोषणा की — साथ में लगभग २० लाख करोड़ रुपये का विशेष आर्थिक पैकेज, जो उस समय भारत के सकल घरेलू उत्पाद का लगभग १० प्रतिशत था।

यहाँ एक भ्रान्ति को स्पष्ट करना आवश्यक है। 'आत्मनिर्भर' का अर्थ अलगाव, संरक्षणवाद या विश्व से कटाव नहीं था। यह वह दर्शन था जो कहता है — एक देश को अपनी आन्तरिक क्षमताओं में इतना सशक्त होना चाहिए कि संकट के समय किसी बाहरी पर निर्भर न रहना पड़े, किन्तु साथ ही वह विश्व के लिए एक भरोसेमन्द और मूल्यवान भागीदार भी बने। 'आत्मनिर्भर भारत' का अर्थ था — भारत की वह शक्ति जो दूसरों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल सके, न कि जो दूसरों पर झुककर चले।

पाँच स्तम्भों पर — अर्थव्यवस्था, अवसंरचना, तकनीक-आधारित व्यवस्था, जीवन्त जनसांख्यिकी और माँग — टिका यह अभियान भारत के समग्र पुनर्निर्माण का एक सुविचारित रोडमैप था। इसमें एमएसएमई की नई और उदार परिभाषा, रक्षा क्षेत्र में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की सीमा ४९ से ७४ प्रतिशत (और बाद में शतप्रतिशत) तक

बढ़ाना, राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२०, और कम्पनी अधिनियम के उल्लंघनों का अपराध-मुक्तिकरण — सब सम्मिलित थे।

इस अभियान को ठोस नीतिगत रूप देने के लिए 'उत्पादन-आधारित प्रोत्साहन योजनाएँ' (Production Linked Incentive — PLI) सामने आई। २०२०-२१ में आरम्भ हुई इन योजनाओं ने १४ महत्वपूर्ण क्षेत्रों को आच्छादित किया — बड़े पैमाने पर इलेक्ट्रॉनिक्स उत्पादन, सूचना-प्रौद्योगिकी हार्डवेयर, औषधि-निर्माण, बल्क ड्रग्स, चिकित्सा-उपकरण, ऑटोमोबाइल और ऑटो-कलपुर्जे, उन्नत रसायन-सेल बैटरी, सौर पीवी मॉड्यूल, दूरसंचार उत्पाद, खाद्य-प्रसंस्करण, वस्त्र, विशेष इस्पात, श्वेत वस्तुएँ और ड्रोन।

पीएलआई योजनाओं का तर्क सरल था — यदि कोई उद्यम भारत में उत्पादन करे और निर्धारित लक्ष्य पार करे, तो सरकार उसे प्रोत्साहन-राशि देगी। यह न सब्सिडी थी, न नौकरशाही का हस्तक्षेप — यह प्रदर्शन से जुड़ी एक स्मार्ट नीति थी जो उत्पादन के वास्तविक होने पर ही इनाम देती थी। और इसके परिणाम असाधारण रहे। ३१ दिसम्बर २०२५ तक आकर्षित निवेश पहुँचा २.१६ लाख करोड़ रुपये तक; इन योजनाओं से सृजित उत्पादन और बिक्री का आँकड़ा रहा २०.४१ लाख करोड़ रुपये; और प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रोज़गार सृजन हुआ १४.३९ लाख का।

मोबाइल फ़ोन इस सफलता का सबसे उज्ज्वल उदाहरण है। जो भारत कभी मोबाइल फ़ोन का एक बड़ा आयातक था, वह आज मोबाइल उत्पादन में विश्व का दूसरा सबसे बड़ा देश बन चुका है। ऐपल, सैमसंग और अनेक अन्य वैश्विक ब्राण्ड भारत में उत्पादन कर रहे हैं। लाखों युवाओं के हाथों में वह कुशलता आई जो उद्योग ने दी — और साथ आया आत्मसम्मान का वह भाव जो तब आता है जब हम जानते हों कि हमारे हाथों से बनी वस्तु विश्व-बाज़ार में जाती है। सौर ऊर्जा

उपकरणों के उत्पादन में भी पीएलआई ने देश को आत्मनिर्भरता की दिशा में तेज़ी से आगे बढ़ाया।

इन्हीं वर्षों में 'स्टार्टअप इंडिया' अभियान ने भारत के नवाचार-परिदृश्य को बदल दिया। १६ जनवरी २०१६ को प्रारम्भ यह अभियान भारत के उद्यमशील युवाओं को वह पारिस्थितिकी-तन्त्र देने के लिए था जिसमें विचार जन्म ले सके, पूँजी मिल सके, और संस्था बन सके। नवोदित उद्यमों को कर-रियायतें मिलीं, सरल पंजीयन मिला, और सरकारी खरीद में प्राथमिकता मिली। इसका परिणाम यह है कि भारत में आज ६,८३,००० से अधिक मान्यता-प्राप्त स्टार्टअप हैं और १३१ यूनिकॉर्न — वे कम्पनियाँ जिनका मूल्यांकन एक अरब डॉलर से अधिक है। अमेरिका और चीन के बाद भारत विश्व का तीसरा सबसे बड़ा स्टार्टअप पारितन्त्र है। भारत का युवा अब केवल नौकरी का याचक नहीं, बल्कि रोज़गार का सृजक बन रहा है।

एक और सुधार था जिसने भारत की अर्थव्यवस्था को आन्तरिक रूप से एकीकृत किया — वस्तु एवं सेवा कर (GST)। १ जुलाई २०१७ को लागू इस कर ने १७ केन्द्रीय और राज्य-स्तरीय अप्रत्यक्ष करों को एक एकीकृत ढाँचे में समाहित कर दिया। केन्द्रीय उत्पाद शुल्क, सेवा कर, वैट, केन्द्रीय बिक्री कर, मनोरंजन कर, विलासिता कर, प्रवेश कर — ये सब एक छाते के नीचे आ गए। पाँच दरों का ढाँचा और इनपुट टैक्स क्रेडिट की व्यवस्था ने उत्पादन को करों की जटिल उलझन से मुक्ति दिलाई। राज्यों के बीच की वे जाँच-चौकियाँ समाप्त हुईं जहाँ माल की गाड़ियाँ घंटों खड़ी रहती थीं — अब ई-वे बिल के साथ माल एक राज्य से दूसरे राज्य में बिना रुकावट के जाता है। वित्त वर्ष २०२४-२५ में जी.एस.टी. संग्रह ₹22 लाख करोड़ रुपये तक पहुँचा — यह उस राजकोषीय स्वास्थ्य का प्रमाण है जो सुधारों से उपजता है।

'दिवाला और शोधन अक्षमता संहिता' (IBC) ने भारत के वाणिज्यिक परिदृश्य की एक और पुरानी विकृति को दूर किया। पहले यदि कोई कम्पनी ऋण नहीं चुका पाती, तो बैंकों को अपनी राशि वापस पाने में वर्षों लग जाते थे और तब भी केवल १५-२० प्रतिशत ही मिलता था। बाक़ी राशि डूब जाती थी — जिसका बोझ अन्ततः सार्वजनिक बैंकों और उनके ज़रिये आम नागरिकों पर पड़ता था। आईबीसी ने समयबद्ध ३३०-दिवसीय समाधान-प्रक्रिया, एकल न्यायाधिकरण (NCLT) और सूचना-उपयोगिता का ढाँचा दिया। मार्च २०२६ तक ८,९८७ मामले इस प्रक्रिया में स्वीकार हुए और ऋणदाताओं को ४ लाख करोड़ रुपये से अधिक की वसूली हुई। वसूली दर आईबीसी के अन्तर्गत ३०-३७ प्रतिशत हो गई और वित्त वर्ष २०२४-२५ में कुल वसूली में आईबीसी का योगदान ५२.४ प्रतिशत था।

इन सब प्रयासों का संचित प्रतिफल क्या है? वर्ष २०१२ में भारत विश्व की ११वीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था था। वर्ष २०२२ में उसने यूनाइटेड किंगडम को पीछे छोड़ते हुए पाँचवाँ स्थान अर्जित किया। यह उपलब्धि आँकड़ों से परे है — भारत ने उस देश को पीछे छोड़ा जिसने दो शताब्दियों तक भारत पर शासन किया था। अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने २०२७ तक भारत के विश्व की चौथी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनने का अनुमान लगाया है।

प्रति व्यक्ति शुद्ध राष्ट्रीय आय का आँकड़ा इस कहानी को और गहराई देता है। वर्ष २०१३-१४ में यह थी ७९,११८ रुपये। वर्ष २०२४-२५ तक यह पहुँची २.०५ लाख रुपये — एक दशक में ढाई गुना से अधिक वृद्धि। यह औसत आँकड़ा है — अर्थात् भारत का हर वर्ग, हर क्षेत्र इस समृद्धि का भागीदार है।

जब हम 'मेक इन इंडिया' से 'आत्मनिर्भर भारत' तक की इस यात्रा को एक सूत्र में देखते हैं, तो एक स्पष्ट आख्यान उभरता है। पहले आई व्यवस्था की सरलता —

ईज़ ऑफ डूइंग बिज़नेस सुधार, जी.एस.टी., आईबीसी। फिर आया उत्पादन को प्रोत्साहन — पीएलआई, स्टार्टअप इंडिया। फिर आई वह बड़ी आत्मनिर्भरता — जब महामारी के संकट में भी भारत ने अपने संसाधनों से, अपनी प्रतिभा से, अपनी नीतियों के बल पर उत्पादन को न केवल सम्भव किया, बल्कि विस्तारित किया। यह यात्रा उस राष्ट्र की है जो आयातक से निर्यातक बना, जो विदेशी पूँजी का याचक था और अब निवेश का आकर्षण-केन्द्र बन गया।

जी.एस.टी. ने जो एकीकृत बाज़ार बनाया, उसका एक महत्वपूर्ण व्यावहारिक पहलू था 'ई-वे बिल' प्रणाली। पहले एक ट्रक-चालक को राज्य की सीमाओं पर घंटों रुकना पड़ता था — परमिट दिखाओ, कर चुकाओ, प्रतीक्षा करो। इस प्रतीक्षा में न केवल उसका समय बर्बाद होता था, बल्कि तापमान-संवेदनशील माल जैसे दूध, फल और सब्जियाँ खराब हो जाती थीं। ई-वे बिल ने यह समाप्त किया। अब माल रुकता नहीं — वह बिना बाधा एक कोने से दूसरे कोने तक पहुँचता है। यह सरल-सा बदलाव भारत की लॉजिस्टिक्स दक्षता में एक बड़ी छलाँग है।

'मेक इन इंडिया' और 'आत्मनिर्भर भारत' की यात्रा में एक और महत्वपूर्ण पड़ाव था — रक्षा उत्पादन में आत्मनिर्भरता। पहले भारत अपनी रक्षा-ज़रूरतों का एक बड़ा हिस्सा आयात करता था — रूस, इज़राइल, फ्रांस और अमेरिका से हथियार और उपकरण खरीदे जाते थे। आत्मनिर्भर भारत के ढाँचे में रक्षा क्षेत्र में एफ़डीआई की सीमा बढ़ाई गई, स्वदेशीकरण की सूची बनाई गई, और सार्वजनिक व निजी क्षेत्र को रक्षा उत्पादन में लगाया गया। पीएलआई की दोहरी मार — एक ओर निवेश आकर्षित किया, दूसरी ओर आयात कम किया।

'स्टार्टअप इंडिया' की एक और उल्लेखनीय विशेषता यह थी कि इसने भारत के अर्ध-शहरी और ग्रामीण उद्यमियों को भी मुख्यधारा से जोड़ा। पहले स्टार्टअप की

कल्पना बेंगलुरु, दिल्ली और मुम्बई तक सीमित थी। अब राजस्थान के एक युवा ने कृषि-तकनीक स्टार्टअप बनाया, असम के एक उद्यमी ने बाँस से फर्नीचर बनाने की कम्पनी खड़ी की, और बिहार के किसी गाँव से एक महिला ने आचार-पापड़ की ऑनलाइन दुकान चलाई — ये सब 'स्टार्टअप इंडिया' के अप्रत्यक्ष किन्तु वास्तविक फल हैं।

यह सम्पूर्ण आर्थिक रूपान्तरण उस नेतृत्व का प्रतिफल है जो समस्या को उसकी जड़ में समझता है, और समाधान को नीचे से ऊपर की दिशा में बनाता है। जी.एस.टी. ने बाज़ार को एकीकृत किया, आईबीसी ने ऋण-व्यवस्था को पारदर्शी बनाया, पीएलआई ने उत्पादन को प्रोत्साहित किया, और स्टार्टअप इंडिया ने उद्यमशीलता को जनतांत्रिक बनाया। इनका मिला-जुला परिणाम है वह भारत जो आज विश्व की पाँचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है, और जो निकट भविष्य में तीसरे स्थान का लक्ष्य रखता है।

यहाँ एक विशेष उपलब्धि का उल्लेख करना आवश्यक है जो 'मेक इन इंडिया' की दीर्घकालिक सफलता का प्रतीक है — भारत का औषधि-निर्माण क्षेत्र। पीएलआई योजना के अन्तर्गत भारत ने बल्क ड्रग पार्कों की स्थापना की, जिससे उन कच्चे माल का स्वदेशी उत्पादन होने लगा जिनके लिए भारत पूरी तरह आयात पर निर्भर था। कोविड महामारी में जब विश्व-भर में दवाइयों की कमी हुई, तब भारत ने न केवल अपनी ज़रूरतें पूरी कीं, बल्कि अनेक देशों को दवाइयाँ और टीके निर्यात किए। यह 'विश्व की फार्मेसी' के रूप में भारत की भूमिका का उस समय सबसे स्पष्ट प्रकाशन था।

'मेक इन इंडिया' ने न केवल बड़े उद्योगों को, बल्कि सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों (MSME) को भी नई शक्ति दी। एमएसएमई की नई परिभाषा के अन्तर्गत

अधिक उद्यम इस श्रेणी में आए और सरकारी सहायता के पात्र बने। आपातकालीन ऋण-गारण्टी योजना (ECLGS) ने कोविड-काल में एमएसएमई को जीवन-रेखा प्रदान की। भारत में आज लगभग ६.३ करोड़ एमएसएमई हैं जो देश के रोज़गार-सृजन में सबसे बड़ी भूमिका निभाते हैं। इन्हें शक्ति देना अर्थव्यवस्था को उसकी जड़ों से शक्ति देना है।

'वोकल फॉर लोकल' — नरेन्द्र मोदी द्वारा दिया गया यह मन्त्र 'मेक इन इंडिया' और 'आत्मनिर्भर भारत' का जन-संस्करण है। स्थानीय उत्पादों को, स्थानीय कारीगरों को, स्थानीय हस्तशिल्प को प्रोत्साहित करो — यह सन्देश लाखों कारीगरों, बुनकरों, कुम्हारों और लोक-कलाकारों तक पहुँचा। 'एक ज़िला एक उत्पाद' (ODOP) योजना ने हर ज़िले के विशेष उत्पाद को राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय बाज़ार में पहचान दिलाई। वाराणसी का रेशमी वस्त्र, लखनऊ की चिकनकारी, राजस्थान की ब्लू पॉटरी, कश्मीर का पश्मीना — इन सब को वह मंच मिला जिसके वे हक़दार थे।

इस सम्पूर्ण आर्थिक यात्रा में एक बात स्थिरांक रही — भारत की बढ़ती वैश्विक साख। जब भारत 'आत्मनिर्भर' बना, तो उसकी नींव कमज़ोर नहीं हुई — बल्कि और मज़बूत हुई। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (FDI) के प्रवाह में निरन्तर वृद्धि हुई। बड़ी वैश्विक कम्पनियाँ भारत में 'चाइना प्लस वन' रणनीति के तहत आईं और यहाँ जड़ें जमाईं। यह उस भारत की आर्थिक कूटनीति का प्रतिफल था जिसने खुले द्वार की नीति अपनाई — किन्तु अपनी शर्तों पर।

भारत की रक्षा-विनिर्माण क्षमता में भी 'मेक इन इंडिया' ने एक नई अध्याय लिखी। रक्षा-उत्पादन में भारत लम्बे समय तक आयात पर बहुत अधिक निर्भर रहा था। किन्तु इस काल में 'रक्षा उत्पादन और निर्यात संवर्धन नीति' के अन्तर्गत रक्षा-

निर्माण में स्वदेशीकरण को बढ़ावा मिला। उत्तर प्रदेश और तमिलनाडु में दो 'रक्षा औद्योगिक गलियारे' स्थापित किए गए। रक्षा-निर्यात जो पहले नगण्य था, वह इस काल में तेज़ी से बढ़ा और भारत एक रक्षा-उत्पाद निर्यातक देश के रूप में उभरा। यह सांकेतिक नहीं, रणनीतिक परिवर्तन था — स्वाभिमानी राष्ट्र अपनी सुरक्षा के लिए दूसरों पर आश्रित नहीं रहता।

'स्टार्टअप इंडिया' ने एक ऐसा परिवेश बनाया जिसमें उद्यमशीलता एक व्यावहारिक विकल्प बनी, न केवल एक आदर्श। जनवरी २०१६ में इसके शुभारम्भ के समय पंजीकृत स्टार्टअप की संख्या कुछ सौ थी; मई २०२५ तक यह संख्या १.७७ लाख से अधिक हो गई। ११८ से अधिक यूनिकॉर्न — अर्थात् ऐसी कम्पनियाँ जिनका मूल्यांकन एक अरब डॉलर से अधिक है — भारत में खड़ी हुईं। यह संख्या विश्व में तीसरी सबसे बड़ी यूनिकॉर्न-संख्या है। ये यूनिकॉर्न केवल दिल्ली और मुम्बई में नहीं हैं; बेंगलुरु, हैदराबाद, पुणे, चेन्नई, अहमदाबाद — हर बड़े शहर में उद्यमिता की एक नई लहर दिखती है।

'उत्पादन-सम्बद्ध प्रोत्साहन' (PLI) योजनाओं का विस्तार करना यहाँ विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। इन योजनाओं ने न केवल बड़े उद्योगों को, बल्कि उनकी आपूर्ति श्रृंखला में जुड़े छोटे और मध्यम उद्यमों को भी लाभान्वित किया। जब कोई बड़ा इलेक्ट्रॉनिक्स निर्माता भारत में अपना कारखाना लगाता है, तो उसे हज़ारों छोटे घटकों की ज़रूरत होती है — और उन घटकों की आपूर्ति करने वाले छोटे उद्यम भी पनपते हैं। यह एक ऐसा आर्थिक पारितंत्र है जहाँ बड़े उद्योग की जड़ों से छोटे उद्यम पोषण पाते हैं, और छोटे उद्यमों की मेहनत से बड़े उद्योग की इमारत खड़ी होती है।

'राष्ट्रीय निवेश और विनिर्माण क्षेत्र' (NIMZ) की अवधारणा ने यह सुनिश्चित किया कि औद्योगिक विकास भौगोलिक रूप से समान रूप से फैले। पहले उद्योग

केवल महाराष्ट्र, गुजरात और तमिलनाडु जैसे अग्रणी राज्यों में केन्द्रित थे। नई नीति के अन्तर्गत पूर्वी और मध्य भारत में भी औद्योगिक विकास की गति पकड़ी। ओडिशा, झारखंड, छत्तीसगढ़ और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में नई निवेश-परियोजनाएँ आईं। यह क्षेत्रीय असमानता को कम करने का एक व्यावहारिक और दूरदर्शी प्रयास था।

जिस भारत ने यह आर्थिक सम्पन्नता अर्जित की, उसी भारत ने यह भी सुनिश्चित किया कि यह समृद्धि केवल ऊपरी तबके तक सीमित न रहे। आर्थिक प्रगति का वास्तविक मापदण्ड यह नहीं है कि समग्र जी.डी.पी. कितनी बढ़ी, बल्कि यह है कि उस वृद्धि का लाभ अन्तिम व्यक्ति तक पहुँचा या नहीं। 'आत्मनिर्भर भारत' का वह स्वप्न — जिसमें हर व्यक्ति अपनी क्षमता पर खड़ा हो, और राष्ट्र बाहरी निर्भरता से मुक्त हो — इस दिशा में न केवल नीतियाँ बनीं, बल्कि एक जन-भावना भी जागी। नरेन्द्र मोदी का यह दृढ़ विश्वास था कि समृद्धि और समता साथ-साथ चल सकते हैं — और इसी विश्वास के साथ उन्होंने अगला विशाल अध्याय लिखा। उस कल्याण-यज्ञ की कथा, जिसमें करोड़ों वंचितों का जीवन बदला, अगला अध्याय है।

अध्याय ८ — ग़रीब का कल्याण

किसी भी शासन की सच्ची कसौटी यह नहीं है कि उसने कितने बड़े भवन बनाए, कितने बड़े राजमार्ग खींचे, या कितने बड़े उद्योग लगाए। सच्ची कसौटी यह है कि उस समाज के सबसे अन्तिम व्यक्ति के जीवन में — उस माँ के जीवन में जो धुएँ भरे चूल्हे पर रोटी सेंकती है, उस बुज़ुर्ग के जीवन में जो खुले आसमान के नीचे शौच जाने को विवश है, उस किसान के जीवन में जो कर्ज़ में डूबा है, उस बीमार बच्चे के जीवन में जिसके माता-पिता इलाज का ख़र्च नहीं उठा सकते — क्या कोई परिवर्तन आया? नरेन्द्र मोदी के शासन का सबसे मार्मिक और मानवीय अध्याय यही है — वह जहाँ नीति, संकल्प और तकनीक मिलकर उस अन्तिम व्यक्ति तक पहुँचे।

यह अध्याय एक नीतिगत सूची नहीं है। यह उन करोड़ों परिवारों की कहानी है जिनके जीवन में, शायद पहली बार, सरकार ने उन्हें एक मनुष्य के रूप में देखा — किसी योजना की संख्या के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐसे इंसान के रूप में जिसका एक चूल्हा है, एक घर है, एक शरीर है जो बीमार पड़ सकता है, एक बच्चा है जो पढ़ सकता है, और एक सपना है जो पूरा होना चाहता है।

यह अध्याय उस धुएँ से आरम्भ होता है जो लाखों ग्रामीण रसोइयों में हर रोज़ भरता था। भारत के करोड़ों ग्रामीण परिवारों में महिलाएँ लकड़ी, कोयले और उपलों के चूल्हे पर भोजन पकाने को बाध्य थीं। यह धुआँ उनके फेफड़ों को, उनकी

आँखों को, और उनके समग्र स्वास्थ्य को धीरे-धीरे नष्ट कर रहा था। विशेषज्ञों के अनुसार एक दिन इस धुएँ में साँस लेना सैकड़ों सिगरेटों के धुएँ के बराबर हानिकारक है। इससे श्वास-रोग, नेत्र-रोग और असमय मृत्यु — सब जुड़े थे। और इसका शिकार थी वह स्त्री जिसने यह नहीं चुना था — उसके पास कोई विकल्प नहीं था, क्योंकि रसोई गैस का कनेक्शन पाना उसकी पहुँच से बाहर था।

१ मई २०१६ को 'प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना' ने इस विकल्पहीनता को चुनौती दी। इस योजना के अन्तर्गत ग़रीबी रेखा से नीचे के परिवारों की महिलाओं को निःशुल्क रसोई गैस कनेक्शन प्रदान किए गए — बिना किसी ज़मानत के, बिना किसी अग्रिम भुगतान के। उज्ज्वला १.०, उज्ज्वला २.० और उज्ज्वला ३.० के क्रमिक विस्तारों के बाद, वर्ष २०२४-२५ तक ९.६ करोड़ से अधिक एलपीजी कनेक्शन प्रदान किए जा चुके थे।

कल्पना कीजिए उस क्षण की जब किसी ग्रामीण परिवार के द्वार पर पहली बार गैस का सिलिंडर आया। वह क्षण उस माँ के लिए केवल एक रसोई उपकरण का बदलना नहीं था — वह उसके शरीर के लिए स्वास्थ्य था, उसके समय के लिए मुक्ति थी (क्योंकि लकड़ी बीनने में घंटों का श्रम लगता था), उसके घर के वातावरण के लिए शुद्धि थी, और उसके आत्मसम्मान के लिए एक नई भाषा थी। उज्ज्वला ने उस स्त्री को यह सन्देश दिया कि उसका जीवन, उसका स्वास्थ्य, और उसका समय — ये सब मूल्यवान हैं। यह सन्देश उतना ही महत्वपूर्ण था जितना सिलिंडर।

'स्वच्छ भारत मिशन' — जो २ अक्टूबर २०१४ को महात्मा गाँधी की जयन्ती पर प्रधानमंत्री ने स्वयं झाड़ू हाथ में लेकर आरम्भ किया — इस यात्रा का एक और प्रकाश-स्तम्भ था। खुले में शौच केवल स्वच्छता की समस्या नहीं थी — यह

विशेषकर महिलाओं और बालिकाओं के लिए सुरक्षा और सम्मान की भी समस्या थी। अँधेरे में, खेत-खलिहानों में जाना पड़ता था — जहाँ न सुरक्षा थी, न गरिमा। बालिकाएँ स्कूल न जाने का एक बड़ा कारण यह भी था कि वहाँ शौचालय नहीं था। न जाने कितनी माताओं ने अपनी बेटियों को इसीलिए घर बिठाए रखा। यह एक अदृश्य और क्रूर विवशता थी।

इस मिशन के अन्तर्गत मार्च २०२३ तक देश-भर में ११ करोड़ से अधिक शौचालयों का निर्माण हुआ, साथ में २.२३ लाख से अधिक सामुदायिक स्वच्छता परिसर। ग्रामीण स्वच्छता आवरण जो २०१४ में मात्र ३९ प्रतिशत था, वह लगभग शत-प्रतिशत हो गया। २ अक्टूबर २०१९ को — महात्मा गाँधी की डेढ़ सौवीं जयन्ती पर — भारत को खुले में शौच से मुक्त (ODF) घोषित किया गया। यह महात्मा गाँधी के उस स्वप्न की पूर्ति थी जो उन्होंने स्वच्छ भारत के लिए जीवन भर देखा था। और नरेन्द्र मोदी ने उन्हें उनकी जयन्ती के दिन यह श्रद्धांजलि अर्पित की।

'प्रधानमंत्री आवास योजना' ने आवास के मूलभूत अधिकार को वास्तविकता में बदलने का संकल्प किया। शहरी भारत के लिए पीएमएवाई-यू और ग्रामीण भारत के लिए पीएमएवाई-जी — दोनों धाराओं में यह योजना समानान्तर चली। नगरीय क्षेत्र में १.१८ करोड़ से अधिक घर स्वीकृत हुए। ग्रामीण और नगरीय मिलाकर ४ करोड़ से अधिक घर बने। और इन घरों की एक विशेष बात यह थी कि इनमें से अधिकांश के स्वामित्व-अधिकार महिलाओं के नाम पर या संयुक्त रूप से रखे गए। यह एक मौन किन्तु गहरा नीतिगत निर्णय था — जिसने उन स्त्रियों को सम्पत्ति का अधिकार दिया जिनके पास पहले कुछ भी नहीं था।

कच्ची झोंपड़ी में पीढ़ियाँ बिताने वाले परिवारों की कल्पना करें — जिनके लिए 'पक्का घर' सपनों की बात थी। वह सपना ४ करोड़ से अधिक परिवारों के लिए

वास्तविकता बना। यह संख्या नहीं है — यह ४ करोड़ परिवारों की नई शुरुआत है, ४ करोड़ बच्चों का एक ऐसा घर जिसमें वे सुरक्षित हैं, ४ करोड़ माताओं की वह छत जो बारिश में नहीं टपकती।

स्वास्थ्य के क्षेत्र में 'आयुष्मान भारत — प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना' ने वह क्रान्ति की जिसे विश्व ने भी स्वीकार किया। २३ सितम्बर २०१८ को आरम्भ यह योजना लगभग १२ करोड़ ग़रीब और वंचित परिवारों को — अर्थात् लगभग ५५ करोड़ लोगों को — प्रति परिवार प्रतिवर्ष ५ लाख रुपये तक के अस्पताल-उपचार का निःशुल्क आश्वासन देती है। यह विश्व की सबसे बड़ी सार्वजनिक स्वास्थ्य बीमा योजना है। अपने पहले छह वर्षों में इस योजना के अन्तर्गत ६.२ करोड़ से अधिक अस्पताल-उपचार हुए।

इससे पहले भारत में क्या होता था? एक ग़रीब परिवार का कोई सदस्य यदि गम्भीर रूप से बीमार पड़ता, तो परिवार या तो ऋण लेता, या ज़मीन बेचता, या मन मसोसकर इलाज छोड़ देता। बीमारी को 'भाग्य की मार' मान लिया जाता था क्योंकि और कोई मार्ग नहीं था। अनेक परिवार बीमारी के ख़र्च के कारण एक झटके में ग़रीबी की उस खाई में चले जाते थे जहाँ से निकलने में वर्षों लग जाते थे। आयुष्मान ने उस परिवार को विकल्प दिया। उसने कहा — जाओ, अस्पताल जाओ, इलाज कराओ; तुम्हारे आयुष्मान कार्ड पर खर्च होगा। और यह आश्वासन आधार से जुड़े पहचान-सत्यापन पर चला — जैम त्रिमूर्ति का वह उपकार जो कल्याण के हर द्वार पर प्रकट हुआ।

जल की बात करें। 'जल जीवन मिशन' — जो २५ अगस्त २०१९ को घोषित हुआ — ने प्रत्येक ग्रामीण घर तक नल से स्वच्छ जल पहुँचाने का संकल्प लिया। इससे पहले असंख्य गाँवों में महिलाएँ प्रतिदिन मीलों पैदल चलकर पानी लाती थीं —

सिर पर मटका, पैरों में धूल, और थकान शरीर में। यह श्रम जीवन का अनिवार्य अंग बन गया था, एक ऐसी विवशता जिसे पीढ़ी-दर-पीढ़ी ढोया जाता रहा। जल जीवन मिशन ने इस थकान को, इस अपमान को समाप्त करने का बीड़ा उठाया। जहाँ मिशन से पहले ग्रामीण नल-जल कनेक्शनों की संख्या लगभग ३ करोड़ थी, वहाँ मिशन के बाद यह संख्या कई गुना बढ़ी। स्वच्छ जल घर में आया — और साथ आई उस माँ के लिए थोड़ी सी मुक्ति, वह समय जिसे वह अब अपने बच्चों के साथ लगा सकती है, अपने लिए कुछ कर सकती है।

'सौभाग्य' योजना — जो सितम्बर २०१७ में प्रारम्भ हुई — ने वह लक्ष्य रखा जो स्वतंत्रता के सात दशकों में पूरा नहीं हो सका था: हर घर तक बिजली। इस योजना के अन्तर्गत २.८६ करोड़ परिवारों को विद्युत कनेक्शन मिले। अप्रैल २०१८ तक देश के सभी गाँवों में विद्युतीकरण का कार्य पूर्ण हुआ। जिन गाँवों में पीढ़ियों से दीए की रोशनी में जीवन बीता था, जहाँ अँधेरे के बाद बाहर का कोई संसार नहीं था — वहाँ जब पहली बार बल्ब जला, तो वह केवल प्रकाश नहीं था। वह उस पीढ़ी की सबसे बड़ी विजय थी, वह उस बच्चे के लिए वह रोशनी थी जो अब रात को पढ़ सकता है।

किसानों के लिए 'पी.एम.-किसान सम्मान निधि' — जो १ फरवरी २०१९ को अन्तरिम बजट में घोषित हुई — ने सीधे खाते में धन पहुँचाने का एक ऐसा सिलसिला स्थापित किया जो पहले कभी नहीं था। प्रति वर्ष ६,००० रुपये, तीन समान किश्तों में — प्रत्येक किश्त २,००० रुपये — सीधे किसान के बैंक खाते में। यह राशि छोटी लग सकती है किन्तु एक छोटे किसान के लिए यह बुआई के समय खाद-बीज की किश्त है, यह कर्ज़ का थोड़ा बोझ हल्का करती है, और मनोवैज्ञानिक स्तर पर यह सन्देश देती है कि उसे भूला नहीं गया। १८वीं किश्त तक ११ करोड़ से

अधिक किसान परिवारों को ३.४५ लाख करोड़ रुपये से अधिक की राशि पहुँच चुकी थी।

इन सभी योजनाओं को एक साथ देखने पर एक स्पष्ट और मार्मिक चित्र उभरता है। यदि एक ही परिवार में ये सभी योजनाएँ पहुँचीं, तो परिणाम क्या होगा? माँ के हाथ में गैस सिलिंडर है — धुएँ से मुक्ति। घर में शौचालय है — अपमान से मुक्ति। पक्का घर है — असुरक्षा से मुक्ति। घर में बिजली है — अँधेरे से मुक्ति। नल से जल है — थकान से मुक्ति। आयुष्मान कार्ड है — बीमारी के भय से मुक्ति। किसान सम्मान निधि है — तात्कालिक आर्थिक संकट से राहत। जन-धन खाते में सहायता सीधे आती है — बिचौलिए से मुक्ति। ये आठ मुक्तियाँ एक साथ — यह समग्र कल्याण है, यह 'अन्त्योदय' है, यह वह परिवर्तन है जो आँकड़ों में नहीं, जीवन में नापा जाता है।

और इस परिवर्तन का प्रमाण है वह बहुआयामी निर्धनता सूचकांक जो UNDP और ऑक्सफ़ोर्ड-OPHI ने प्रकाशित किया। भारत में ग्रामीण बहुआयामी निर्धनता की दर २०१५-१६ के ३२.५९ प्रतिशत से घटकर २०१९-२१ तक १९.२८ प्रतिशत हो गई। नीति आयोग के राष्ट्रीय एमपीआई २०२३ के अनुसार इस दौर में लगभग ४१.५ करोड़ भारतीय बहुआयामी निर्धनता से बाहर निकले। यह मानव इतिहास की सबसे बड़ी निर्धनता-उन्मूलन गाथाओं में से एक है।

यह उपलब्धि उस नेता की संवेदनशीलता का प्रमाण है जो स्वयं अभाव में पला था, जो जानता था कि भूख क्या होती है, अँधेरा क्या होता है, और व्यवस्था की उपेक्षा क्या होती है। उसने जो नीतियाँ बनाईं, वे केवल सरकारी दस्तावेज़ नहीं थीं — वे उस व्यक्ति के जीवन-अनुभव का प्रतिफल थीं जिसने ग़रीबी को बाहर से नहीं, भीतर से जाना था।

इन योजनाओं की एक और गहरी विशेषता है जो प्रायः अनदेखी रह जाती है — वह है इनकी परस्पर-निर्भरता और एकात्मकता। उज्ज्वला ने गैस-कनेक्शन दिया किन्तु उसकी सब्सिडी डीबीटी से आई, जो जन-धन खाते के बिना सम्भव नहीं था, जो आधार-लिंकिंग के बिना सुरक्षित नहीं था। आयुष्मान भारत का कार्ड बना आधार से, लाभार्थियों की पहचान हुई सामाजिक-आर्थिक जनगणना से, और अस्पताल-भुगतान हुआ डिजिटल प्रणाली से। पीएम-किसान की राशि पहुँची जन-धन खाते से, और उस खाते को जोड़ा आधार ने। यह परस्पर-सम्बद्ध व्यवस्था एक ऐसा तन्त्र है जहाँ हर स्तम्भ दूसरे स्तम्भ को शक्ति देता है।

इन योजनाओं का एक और पहलू है — महिला-केन्द्रितता। उज्ज्वला में कनेक्शन महिला के नाम पर, पीएम आवास में स्वामित्व महिला के नाम पर, जन-धन में आधे से अधिक खाते महिलाओं के नाम पर, और पीएम-किसान में भी महिला किसानों को समान लाभ। यह संयोग नहीं था — यह उस नीतिगत दर्शन का प्रकाशन था जो समझता था कि परिवार का कल्याण तभी सुनिश्चित होता है जब उस परिवार की माँ, बहन और बेटी सशक्त हो।

इस कल्याण-यात्रा में 'स्वच्छ भारत मिशन' के द्वितीय चरण का भी उल्लेख आवश्यक है। प्रथम चरण में शौचालय बने, किन्तु केवल शौचालय-निर्माण से खुले में शौच से मुक्ति सम्पूर्ण नहीं होती — उसके लिए व्यवहार-परिवर्तन भी आवश्यक है। इसलिए मिशन के द्वितीय चरण में जन-जागरण, स्वच्छता-संस्कार और ठोस-अपशिष्ट प्रबन्धन पर भी ध्यान दिया गया। अब शहरों में कूड़े के ढेर कम हुए, सफाई-कर्मचारियों को सम्मान मिला, और स्वच्छता को राष्ट्रीय मूल्य के रूप में स्थापित किया गया।

'जल जीवन मिशन' की एक और महत्वपूर्ण विशेषता थी — जल की गुणवत्ता पर ध्यान। केवल नल तक जल पहुँचाना पर्याप्त नहीं है यदि वह जल प्रदूषित हो। मिशन के अन्तर्गत पाइप-जल की गुणवत्ता-परीक्षण के लिए ग्राम स्तर पर जल-परीक्षण किट वितरित किए गए। महिलाओं को जल-परीक्षण में प्रशिक्षित किया गया — ये 'जल-सखियाँ' अब अपने गाँव के पीने के पानी की गुणवत्ता की स्वयं जाँच कर सकती हैं। यह केवल तकनीकी नहीं, सामाजिक सशक्तीकरण भी है।

'पोषण अभियान' — जो मार्च २०१८ में प्रारम्भ हुआ — ने कुपोषण के विरुद्ध एक समग्र अभियान छेड़ा। भारत में बाल-कुपोषण एक पुरानी और गम्भीर समस्या थी। पोषण अभियान ने आँगनवाड़ी केन्द्रों को सक्रिय किया, पोषण-ट्रैकर ऐप के ज़रिये बच्चों की वृद्धि पर नज़र रखी गई, और माताओं को पोषण-शिक्षा दी गई। यह अभियान स्वास्थ्य और शिक्षा के बीच की उस कड़ी को पहचानता था जो कहती है — कुपोषित बच्चा ठीक से नहीं पढ़ पाता और ठीक से पढ़ा बच्चा भविष्य के भारत की नींव है।

'अटल पेंशन योजना' भी उल्लेख की माँग करती है। असंगठित क्षेत्र में काम करने वाले श्रमिकों के लिए वृद्धावस्था की सुरक्षा एक सपना था। अटल पेंशन योजना ने उन्हें वह सुरक्षा-छत दी जो पहले केवल सरकारी कर्मचारियों को मिलती थी। प्रतिमाह कुछ सौ रुपये के योगदान पर, ६० वर्ष की आयु के बाद एक निश्चित मासिक पेंशन — यह वह आश्वासन है जो एक रिक्शाचालक, एक बर्तन-विक्रेता, या एक दिहाड़ी मज़दूर को उसके बुढ़ापे में आत्मसम्मान से जीने की शक्ति देता है।

'पी.एम.-जनमन' अभियान के अन्तर्गत देश के विशेष रूप से पिछड़े आदिम जनजातीय समूहों (PVTGs) तक कल्याणकारी योजनाओं की पहुँच सुनिश्चित की गई। ये वे समुदाय थे जो सभ्यता की मुख्यधारा से सबसे दूर थे, जिनकी भाषाएँ

अलग थीं, जीवन-पद्धति अलग थी, और जिन तक सरकारी योजनाएँ कभी ठीक से नहीं पहुँची थीं। पी.एम.-जनमन ने एक समयबद्ध और विशेष कार्ययोजना के ज़रिये इन समुदायों को आवास, स्वास्थ्य, शिक्षा और स्वच्छ जल की सुविधाएँ प्रदान कीं।

यह समग्र कल्याण-दर्शन उस 'सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास और सबका प्रयास' के मन्त्र का व्यावहारिक प्रकाशन है। नरेन्द्र मोदी की इस दृष्टि ने कल्याण को दान से ऊपर उठाकर अधिकार के रूप में, और करुणा से ऊपर उठाकर गरिमा के रूप में परिभाषित किया। यह वह परिवर्तन है जो भारत के कल्याण-दर्शन को नई ऊँचाइयों पर ले गया।

'आयुष्मान भारत' की एक और उपलब्धि का उल्लेख करना आवश्यक है — यह योजना केवल बीमारी के ख़र्च को कवर नहीं करती, बल्कि यह निवारक स्वास्थ्य-सेवाओं को भी प्रोत्साहित करती है। योजना के अन्तर्गत 'स्वास्थ्य और कल्याण केन्द्र' (Health and Wellness Centres) की स्थापना हुई जो ग्राम स्तर पर प्राथमिक स्वास्थ्य-सेवा प्रदान करते हैं। यह व्यापक स्वास्थ्य-दर्शन था — जो बीमार पड़ने के बाद इलाज करने की जगह, बीमार पड़ने से पहले ही रोकने की दिशा में काम करता था।

महिला सशक्तीकरण की दिशा में भी इस काल में अनेक महत्वपूर्ण क़दम उठाए गए। 'मिशन शक्ति' के अन्तर्गत महिलाओं की सुरक्षा और उनके सशक्तीकरण को एकीकृत रूप से सम्बोधित किया गया। 'पीएम मातृ वन्दना योजना' ने गर्भवती और स्तनपान कराने वाली माताओं को आर्थिक सहायता दी। 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' अभियान ने लिंग-अनुपात में सुधार का दीर्घकालिक लक्ष्य सामने रखा और अनेक ज़िलों में इसके सार्थक परिणाम दिखे। 'सुकन्या समृद्धि योजना' ने बेटियों के भविष्य के लिए बचत को प्रोत्साहित किया — यह सन्देश था कि बेटी केवल बोझ

नहीं, बल्कि परिवार की शक्ति है, और उसके भविष्य में निवेश ही परिवार का सबसे श्रेष्ठ निवेश है। 'लखपति दीदी' अभियान ने स्वयं-सहायता समूहों की महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने का लक्ष्य रखा, और करोड़ों महिलाएँ इसके माध्यम से आजीविका की नई राहें खोजने में सफल हुईं।

'पोषण अभियान' ने बच्चों और माताओं में कुपोषण को दूर करने के लिए एक बहु-आयामी दृष्टिकोण अपनाया। आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं को तकनीक से जोड़ा गया, लाभार्थियों की पहचान के लिए डेटा का उपयोग हुआ, और ग्राम-स्तर पर जागरूकता अभियान चलाए गए। स्टंटिंग, वेस्टिंग और कम वज़न जैसे कुपोषण के विभिन्न आयामों को एक साथ सम्बोधित करना — यही इस अभियान की शक्ति थी।

यह भी उल्लेखनीय है कि इन सभी कल्याण-योजनाओं में तकनीक का उपयोग केवल कार्यान्वयन के लिए नहीं, बल्कि निगरानी और जवाबदेही के लिए भी हुआ। 'पोषण ट्रैकर', 'जल जीवन मिशन का डैशबोर्ड', 'आयुष्मान भारत का डिजिटल लेखा-जोखा' — ये सब इस बात के प्रमाण हैं कि इस सरकार ने 'घोषणा करो और भूल जाओ' की राजनीति से अलग हटकर काम किया। प्रत्येक योजना की प्रगति सार्वजनिक रूप से उपलब्ध आँकड़ों से मापी गई — यह पारदर्शिता का वह नया मानक था जो भारतीय शासन में पहले दुर्लभ था।

इस प्रकार, नरेन्द्र मोदी के शासन में 'ग़रीब का कल्याण' एक नारा नहीं था — यह एक जीवन-प्रणाली थी। यह वह शासन था जो अन्तिम व्यक्ति को केन्द्र में रखकर नीतियाँ बनाता था, और यह सुनिश्चित करता था कि वह व्यक्ति केवल सांख्यिकी में नहीं, बल्कि व्यवहार में भी लाभान्वित हो। इस कल्याण-यात्रा ने ४१.५ करोड़ लोगों

को बहुआयामी निर्धनता से बाहर निकाला — और यह संख्या केवल एक आँकड़ा नहीं है, यह ४१.५ करोड़ जीवनों की नई शुरुआत है।

जिस भारत ने अपने ग़रीब को यह सम्मान दिया, उसी भारत ने यह भी सुनिश्चित किया कि इस समृद्धि और कल्याण को आगे ले जाने के लिए जो रीढ़ चाहिए — सड़कें, रेलें, हवाई अड्डे, बिजली के तार, और डिजिटल नेटवर्क — वह भी उतनी ही सुदृढ़ हो। उसी रीढ़ की कथा अगला अध्याय है।

अध्याय ९ — नए भारत की रीढ़

अर्थशास्त्र में एक पुरानी उक्ति है — अवसंरचना वह बुनियाद है जिस पर विकास की इमारत खड़ी होती है। किन्तु भारत के संदर्भ में यह उक्ति केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सामाजिक और सभ्यतागत अर्थ भी रखती है। एक पक्की सड़क जो गाँव को तहसील से जोड़ती है — वह किसान की उपज का समय पर बाज़ार पहुँचना सुनिश्चित करती है, वह बीमार बच्चे के लिए एम्बुलेंस का रास्ता बनाती है, वह बेटी के लिए विद्यालय की दूरी कम करती है, और उस गाँव की अर्थव्यवस्था को राष्ट्रीय धारा से जोड़ती है। एक तेज़ रेलगाड़ी एक युवा को बेहतर अवसरों तक पहुँचाती है। एक हवाई अड्डा जो छोटे शहर में खुलता है, उस शहर के स्वप्न को राष्ट्रीय परिदृश्य से जोड़ता है।

नरेन्द्र मोदी ने यह समझा कि भारत की अवसंरचना न केवल अपर्याप्त है, बल्कि उसमें निर्माण की गति, योजना की दृष्टि, और विभागों के बीच समन्वय — तीनों की गम्भीर कमी है। उन्होंने इन तीनों को एक साथ बदलने का निर्णय किया। और जो परिवर्तन आया वह ऐसा था कि स्वयं वैश्विक संस्थाएँ और विदेशी विश्लेषक उसे असाधारण कहने को विवश हुए।

सड़कों के क्षेत्र में परिवर्तन सबसे दृश्यमान और मापनीय था। जब २०१४ में मोदी सरकार आई, राष्ट्रीय राजमार्गों की कुल लम्बाई ९१,२८७ किलोमीटर थी। वर्ष २०२४-२५ तक यह लम्बाई बढ़कर १,४६,३४२ किलोमीटर हो गई। इस अवधि में

केवल वित्त वर्ष २०२४-२५ में ही १०,६६० किलोमीटर जोड़े गए — यह प्रतिदिन लगभग २९ किलोमीटर सड़क बनाने के बराबर है। पहले की सरकारों के काल में यह गति ५-६ किलोमीटर प्रतिदिन के आसपास होती थी। यह चार से पाँच गुना तेज़ी है — और यह तेज़ी केवल संसाधनों की नहीं, बल्कि इच्छाशक्ति, निर्णय-क्षमता और प्रशासनिक कुशलता की है।

एक्सप्रेसवे की कथा और भी नाटकीय है। वर्ष २०१५ तक भारत में कुल एक्सप्रेसवे की लम्बाई लगभग १,०२१ किलोमीटर थी — यह संख्या भारत की विशालता के सामने अत्यन्त अल्प थी। वर्ष २०२४ तक यह ५,९३० किलोमीटर हो गई — छह गुना से अधिक वृद्धि। 'भारतमाला परियोजना' — जो २५ अक्टूबर २०१७ को घोषित हुई — इस महायज्ञ की मूल अवधारणा है। इस परियोजना के प्रथम चरण में ३४,८०० किलोमीटर सड़कें स्वीकृत हुईं, जिनमें से लगभग [2]2,५०० किलोमीटर का निर्माण हो चुका है।

दिल्ली-मुम्बई एक्सप्रेसवे — देश का सबसे लम्बा, १,०१५ किलोमीटर — इस परियोजना का मुकुटमणि है। यह केवल एक सड़क नहीं है — यह भारत की दो सबसे बड़ी आर्थिक शक्तियों को जोड़ने वाला वह गलियारा है जो उद्योग, व्यापार, रोज़गार और समृद्धि की नई धाराएँ प्रवाहित करता है। इस पर यात्रा का समय पहले की तुलना में काफ़ी कम हो गया — और यह समय की बचत अर्थव्यवस्था की बचत है।

इन सड़कों का अर्थ जीवन में क्या है? एक किसान जिसकी उपज सड़क न होने के कारण मण्डी तक पहुँचने से पहले ही सड़ जाती थी, उसके लिए यह सड़क जीवन बदलने वाली है। एक युवा उद्यमी जो शहर से दूरदराज के उपभोक्ताओं तक नहीं पहुँच पाता था, उसके लिए यह एक्सप्रेसवे नए बाज़ार का द्वार है। ये सड़कें नहीं हैं

— ये भारत के आर्थिक तन्त्र की धमनियाँ हैं जिनमें विकास का रक्त प्रवाहित होता है।

रेलवे का रूपान्तरण उतना ही गहरा, किन्तु और भी भावपूर्ण था। 'वन्दे भारत एक्सप्रेस' — भारत की पहली पूर्णतः स्वदेशी अर्ध-उच्चगति रेलगाड़ी — का उद्घाटन फरवरी २०१९ में हुआ। इसे भारतीय रेल के इंजीनियरों, तकनीशियनों और कारीगरों ने बनाया — विदेशी तकनीक पर निर्भर हुए बिना। यह केवल एक तेज़ रेलगाड़ी नहीं थी — यह 'मेक इन इंडिया' की साँस लेती थी, यह भारत के आत्मविश्वास का जीवन्त प्रतीक थी।

दिसम्बर २०२५ तक १६४ वन्दे भारत सेवाएँ देश के २७४ ज़िलों में चल रही थीं और ७.५ करोड़ से अधिक यात्री इनमें यात्रा कर चुके थे। जनवरी २०२६ में वन्दे भारत स्लीपर संस्करण का उद्घाटन हुआ जो लम्बी रात-यात्राओं के लिए बनाया गया। दृष्टि है — वर्ष २०३० तक ८०० वन्दे भारत रेकें चलाने की। यह वन्दे भारत की यात्रा भी एक उपन्यास की भाँति है — शून्य से शुरू होकर, लक्ष्य की ओर निरन्तर।

यह वह प्रतीकात्मकता है जो इतिहास में दर्ज रहेगी — जिस रेलवे प्लेटफ़ॉर्म पर बालक नरेन्द्र ने चाय बेची थी, उसी भारतीय रेलवे को उस बालक ने प्रधानमंत्री बनकर एक नई गति, नई गरिमा और नई आधुनिकता दी। रेलवे स्टेशनों का भी आधुनिकीकरण हुआ — वातानुकूलित प्रतीक्षा कक्ष, स्वच्छ शौचालय, लिफ्ट और एस्केलेटर। एक यात्री जो वर्षों पहले रेलवे स्टेशन पर गया होगा और अब जाता है, उसे एक नए भारत की झलक मिलती है।

शहरों की बात करें तो मेट्रो रेल का विस्तार स्वयं में एक अध्याय है। वर्ष २०१४ में भारत में कुल मेट्रो नेटवर्क मात्र २४८ किलोमीटर था। मार्च २०२६ तक यह लम्बाई

१,०९५ किलोमीटर हो गई — एक दशक से कम में चार गुना से अधिक वृद्धि। यह विस्तार २६ नगरों में हुआ — दिल्ली, मुम्बई, बेंगलुरु, चेन्नई, हैदराबाद, पुणे, कोच्चि, नागपुर, अहमदाबाद, लखनऊ और अनेक अन्य। दिल्ली-मेरठ क्षेत्रीय रैपिड ट्रांज़िट सिस्टम के ५५ किलोमीटर भी इसमें सम्मिलित हैं। इस विस्तार से भारत विश्व का तीसरा सबसे बड़ा नगरीय रेल नेटवर्क बन गया।

मेट्रो का अर्थ उस कामकाजी व्यक्ति के लिए जो घंटों यातायात-जाम में फँसकर अपना समय और ईंधन गँवाता था — एक नई स्वतंत्रता है। यह पर्यावरण-अनुकूल है, सटीक समयसारिणी वाली है, और किफ़ायती है। और इसका सबसे बड़ा लाभार्थी वह महिला है जो देर रात अकेले मेट्रो में सुरक्षित घर पहुँचती है — जो पहले बस या रिक्शे में असम्भव लगता था।

आकाश की दिशा में 'उड़ान' (UDAN — उड़े देश का आम नागरिक) योजना — जो अक्टूबर २०१६ में घोषित हुई और अप्रैल २०१७ में दिल्ली-शिमला पहली उड़ान से व्यावहारिक रूप में आरम्भ हुई — ने हवाई यात्रा को उस आम नागरिक की पहुँच में लाने का कार्य किया जो कभी इसे केवल अमीरों की सुविधा मानता था। एक घंटे की हवाई यात्रा के लिए अधिकतम २,५०० रुपये का किराया — यह प्रतिबद्धता लेकर इस योजना ने उन मार्गों पर उड़ानें प्रारम्भ कीं जहाँ पहले कोई विमान नहीं जाता था, क्योंकि वे मार्ग आर्थिक दृष्टि से लाभदायक नहीं माने जाते थे।

अप्रैल २०२५ तक ९० हवाई अड्डों को — जिनमें दो जलमार्ग हवाई अड्डे भी सम्मिलित हैं — ६२५ मार्गों से जोड़ा जा चुका था। शिमला, तेज़पुर, जलगाँव, सेलम, कूच बिहार, देवघर, पोर्ट ब्लेयर — इन स्थानों के निवासियों के लिए हवाई यात्रा की सुलभता एक नई दुनिया के द्वार खोलती है। व्यवसाय के अवसर बढ़ते हैं,

पर्यटन बढ़ता है, और उन छोटे शहरों की आर्थिक सम्भावनाएँ राष्ट्रीय परिदृश्य से जुड़ती हैं।

इन सभी प्रयासों में एक बड़ी चुनौती थी जो भारत की अवसंरचना-योजना को दशकों से पीड़ित करती रही थी — विभागों के बीच समन्वय का अभाव। एक ही मार्ग पर सड़क बन रही है, उसके नीचे रेलवे की सुरंग का काम चल रहा है, उसी क्षेत्र में बिजली की लाइन खींची जा रही है, और ये विभाग एक-दूसरे की योजनाओं से अनजान हैं। इससे न केवल संसाधनों की बर्बादी होती थी, बल्कि परियोजनाएँ बार-बार रुकती थीं और लागत बढ़ती जाती थी।

इस अव्यवस्था को समाप्त करने के लिए १३ अक्टूबर २०२१ को 'पी.एम. गति शक्ति राष्ट्रीय मास्टर प्लान' का उद्घाटन हुआ। यह एक डिजिटल बहु-विधि अवसंरचना-योजना मंच है जो १६ मन्त्रालयों को एकीकृत करता है — सड़क, रेल, हवाई, बन्दरगाह, जलमार्ग, दूरसंचार और विद्युत-अवसंरचना की योजनाएँ एक ही डिजिटल मानचित्र पर दिखती हैं। नवीनतम आँकड़ों के अनुसार ४३४ परियोजनाओं में ११.१७ लाख करोड़ रुपये से अधिक का संचित निवेश पहचाना गया है। ९१ गति शक्ति मालवाहक टर्मिनल चालू हो चुके हैं। गति शक्ति ने यह सुनिश्चित किया कि कोई भी अवसंरचना परियोजना अकेले द्वीप न बने, बल्कि समग्र नेटवर्क का अभिन्न अंग बने।

ग्रामीण सड़कों की बात किए बिना यह अध्याय अधूरा है। 'प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना' को मोदी सरकार ने नई गति और नई महत्वाकांक्षा दी। दिसम्बर २०२५ तक इस योजना के अन्तर्गत ८,२५,११४ किलोमीटर ग्रामीण सड़कें स्वीकृत हुईं और ७,८७,५२० किलोमीटर पूर्ण हुईं। पीएमजीएसवाई-३ के अन्तर्गत सभी मौसमों में उपयोगी सड़कों के उन्नयन के लिए १,²2,३९३ किलोमीटर स्वीकृत हुए और

१,०१,६२३ किलोमीटर पूर्ण हुए। पीएमजीएसवाई-४ में आगामी चक्र हेतु २५,००० बसावटों को जोड़ने का लक्ष्य है।

एक पक्की सड़क का एक गाँव में आना कितना गहरा परिवर्तन लाती है — यह संख्याओं में नहीं नापा जा सकता। जिस गाँव में सड़क नहीं थी, वहाँ का बीमार बरसात में बाहर नहीं निकल सकता था। जिस गाँव में सड़क नहीं थी, वहाँ की बेटी को बरसात में किताबें भिगोकर विद्यालय जाना पड़ता था। जिस गाँव में सड़क नहीं थी, वहाँ के किसान की फसल उचित समय पर बाज़ार नहीं पहुँचती थी। एक सड़क ने यह सब बदला। और ऐसी लाखों सड़कों ने मिलकर ग्रामीण भारत का नक्शा ही बदल दिया।

अब यदि इस सम्पूर्ण दशक की अवसंरचना-यात्रा को एक ही दृश्य में देखें — राष्ट्रीय राजमार्ग ९१,२८७ से १,४६,३४२ किलोमीटर, एक्सप्रेसवे १,०२१ से ५,९३० किलोमीटर, मेट्रो २४८ से १,०९५ किलोमीटर, वन्दे भारत शून्य से १६४ सेवाएँ, उड़ान शून्य से ९० हवाई अड्डे और ६२५ मार्ग, गति शक्ति की ११.१७ लाख करोड़ की परियोजना-पाइपलाइन, और ७.८७ लाख किलोमीटर पूर्ण ग्रामीण सड़कें — तो एक अभूतपूर्व तस्वीर उभरती है। यह वह भारत है जिसने एक दशक में वह किया जो पहले की सरकारों को दशकों में भी सम्भव नहीं हो पाया था।

किन्तु यह तस्वीर केवल ईंट-पत्थर की नहीं है। हर सड़क के पीछे वह किसान है जिसकी उपज अब बाज़ार तक पहुँचती है। हर मेट्रो के पीछे वह नौकरीपेशा है जिसका सफ़र थोड़ा कम कठिन हुआ। हर वन्दे भारत के पीछे वह विद्यार्थी है जो दूर के विश्वविद्यालय में पढ़ता है और सप्ताहान्त में घर आता है। हर उड़ान के पीछे वह माँ है जो पहली बार हवाई जहाज़ में बैठकर बेटे से मिलने जाती है। और हर ग्रामीण

सड़क के पीछे वह बच्चा है जिसकी दुनिया अब उसके गाँव की मिट्टी से आगे तक फैल सकती है।

नरेन्द्र मोदी की अवसंरचना-दृष्टि ने भारत को एक ऐसी रीढ़ दी है जो सुदृढ़ है, गतिशील है, और आने वाली पीढ़ियों के बोझ को सहने में सक्षम है। यह रीढ़ इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि इसी पर टिका है वह भार जो भारत के अगले पाँच, दस, पच्चीस वर्षों में उठाना है — एक विकसित राष्ट्र बनने का भार, विश्व की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनने का भार, और डेढ़ अरब नागरिकों के स्वप्न को साकार करने का भार।

भारत के बन्दरगाहों का आधुनिकीकरण भी इस अवसंरचना-क्रान्ति का एक महत्वपूर्ण अंग रहा। 'सागरमाला परियोजना' के अन्तर्गत बन्दरगाहों का आधुनिकीकरण, तटीय शिपिंग का विस्तार, और बन्दरगाह-आधारित औद्योगिक विकास को प्रोत्साहन मिला। भारत की लम्बी तटरेखा — लगभग ७,५०० किलोमीटर — एक विशाल आर्थिक सम्भावना है जिसे इस काल में पहले से कहीं बेहतर रूप से दोहन किया गया। जब समुद्री मार्ग सुदृढ़ होते हैं, तो निर्यात बढ़ता है, और जब निर्यात बढ़ता है, तो रोज़गार और समृद्धि दोनों आते हैं।

'राष्ट्रीय लॉजिस्टिक्स नीति' — जो सितम्बर २०२२ में घोषित हुई — ने भारत की लॉजिस्टिक्स लागत को कम करने का लक्ष्य रखा। भारत में लॉजिस्टिक्स लागत जी.डी.पी. के लगभग १३-१४ प्रतिशत थी — विकसित देशों की तुलना में यह काफ़ी अधिक था। इस लागत को कम करने के लिए 'यूनिफाइड लॉजिस्टिक्स इंटरफेस प्लेटफ़ॉर्म' (ULIP) का निर्माण हुआ जो सड़क, रेल, बन्दरगाह और वायु-परिवहन के डेटा को एक मंच पर लाता है। जब लॉजिस्टिक्स कुशल हो जाती

है, तो उत्पादन की वास्तविक लागत कम होती है, और भारतीय वस्तुएँ वैश्विक बाज़ार में अधिक प्रतिस्पर्धी बन जाती हैं।

टेलीकम्युनिकेशन अवसंरचना भी इस काल में एक महत्वपूर्ण रूपान्तरण से गुज़री। '5G' प्रौद्योगिकी का शुभारम्भ अक्टूबर २०२२ में प्रधानमंत्री ने किया। और यहाँ एक महत्वपूर्ण बात है — 5G की तकनीक में भारतीय कम्पनियों ने स्वदेशी समाधान विकसित किए। 'टेलीकम्युनिकेशन टेक्नोलॉजी डेवलपमेंट फंड' ने ग्रामीण क्षेत्रों में दूरसंचार-अवसंरचना के विस्तार को सहायता दी। भारत में 5G की गति इतनी तीव्र रही कि विश्व में 5G नेटवर्क के मामले में भारत के आँकड़े विकसित देशों को भी चौंकाने वाले थे।

'प्रधानमंत्री ऊर्जा-साक्षरता अभियान' और 'पीएम सूर्यघर मुफ्त बिजली योजना' ने ऊर्जा-अवसंरचना के एक नए आयाम को खोला। सौर ऊर्जा को आम घरों तक पहुँचाना — जिससे घरेलू बिजली-बिल शून्य हो जाए — यह न केवल आर्थिक, बल्कि पर्यावरणीय दृष्टि से भी क्रान्तिकारी है। अब एक किसान अपने घर की छत पर सौर पैनल लगाकर बिजली पैदा कर सकता है, अपनी ज़रूरत पूरी कर सकता है, और अतिरिक्त बिजली ग्रिड को बेच सकता है। यह ऊर्जा-लोकतंत्र है — जहाँ हर नागरिक केवल उपभोक्ता नहीं, उत्पादक भी है।

इस अवसंरचना-यज्ञ की एक और विशेषता उल्लेखनीय है — वह है इसकी गति और पैमाने में समानान्तरता। पहले की सरकारों में प्रायः एक क्षेत्र पर ध्यान केन्द्रित होता था और दूसरे क्षेत्र उपेक्षित रह जाते थे। मोदी सरकार ने एक साथ — सड़क, रेल, हवाई, मेट्रो और ग्रामीण संपर्क — सभी पर समान ध्यान दिया। यह बहुआयामी दृष्टि ही 'गति शक्ति' के समन्वित मंच का मूल विचार है।

बिजली-क्षेत्र में भी इस काल में महत्वपूर्ण रूपान्तरण हुआ। 'उदय' (UDAY) योजना के अन्तर्गत राज्य-विद्युत-वितरण कम्पनियों के घाटे को कम करने और उनकी दक्षता बढ़ाने का प्रयास किया गया। 'एक राष्ट्र, एक ग्रिड' की अवधारणा को साकार किया गया जिससे देश के एक भाग में अतिरिक्त बिजली दूसरे भाग में घाटे वाले क्षेत्र तक पहुँच सके। नवीकरणीय ऊर्जा में भारत की छलाँग ने विश्व का ध्यान खींचा — सौर ऊर्जा क्षमता जो २०१४ में लगभग ३ गीगावाट थी, वह तेज़ी से बढ़कर सौ गीगावाट की दिशा में आगे बढ़ी। भारत ने 'अन्तरराष्ट्रीय सौर गठबन्धन' की स्थापना की जो विश्व-भर में सौर ऊर्जा के प्रसार के लिए एक साझा मंच बना।

ग्रामीण अवसंरचना की बात करें तो 'प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना' के अन्तर्गत उन गाँवों तक सड़कें पहुँचाई गईं जो वर्षों से सम्पर्क से वंचित थे। जब एक गाँव में पक्की सड़क पहुँचती है, तो उसका प्रभाव बहुआयामी होता है — किसान अपनी फसल मण्डी तक ले जा सकता है, बच्चे स्कूल तक पहुँच सकते हैं, और बीमार को अस्पताल तक पहुँचाया जा सकता है। यह सड़क केवल पत्थर और डामर नहीं है — यह अवसर की एक ऐसी रेखा है जो लोगों को जीवन की मुख्यधारा से जोड़ती है।

भारतमाला परियोजना ने न केवल नई सड़कें बनाईं, बल्कि उन क्षेत्रों को जोड़ा जो देश की मुख्यधारा से कटे हुए थे। उत्तर-पूर्व के राज्यों को जोड़ने वाले राजमार्ग, जम्मू-कश्मीर के दुर्गम क्षेत्रों में सुरंगें और सेतु — ये केवल सड़क-परियोजनाएँ नहीं हैं, ये राष्ट्रीय एकता की परियोजनाएँ हैं। जब एक दुर्गम क्षेत्र मुख्यभूमि से जुड़ता है, तो वहाँ के नागरिक को यह भाव मिलता है कि वह भी उसी राष्ट्र का अंग है जो उसे याद रखता है।

वन्दे भारत की सफलता ने एक नई सोच को जन्म दिया — कि भारतीय रेलवे केवल एक परिवहन-सेवा नहीं, बल्कि एक राष्ट्रीय गर्व का प्रतीक भी हो सकती है। स्वच्छ, आधुनिक, समयपालक और आरामदायक — ये गुण वन्दे भारत ने भारतीय रेल यात्रा को दिए। और जब भारतीय इंजीनियरों द्वारा निर्मित इन रेलगाड़ियों को निर्यात की सम्भावना भी दिखने लगी, तो यह स्पष्ट हो गया कि 'मेक इन इंडिया' और अवसंरचना एक-दूसरे की शक्ति बढ़ाते हैं।

'गति शक्ति' राष्ट्रीय मास्टर प्लान की एक और उपलब्धि है जो भविष्य में और अधिक फल देगी — वह है डेटा-आधारित योजना का उदय। पहले परियोजना-स्थल का चयन प्रायः राजनीतिक प्रभाव से होता था। अब उपग्रह-चित्रण, भौगोलिक सूचना-तन्त्र (GIS) और डेटा-विश्लेषण से यह तय होता है कि किस स्थान पर कौन-सी परियोजना सबसे अधिक प्रभावी होगी। यह वैज्ञानिक दृष्टिकोण भारत की परियोजना-योजना को एक नई परिपक्वता देता है।

उड़ान योजना का एक और सुखद परिणाम था — हवाई यात्रियों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि। छोटे शहरों के हवाई अड्डे जो वर्षों से बन्द थे या उपेक्षित थे, वे अब चहल-पहल से भरे हैं। पर्यटन का विस्तार हुआ, व्यापार बढ़ा, और उन शहरों के युवाओं को रोज़गार के नए अवसर मिले। यह उड़ान की वह ऊँचाई है जो न केवल आसमान में है, बल्कि उन छोटे शहरों की आर्थिक आकांक्षाओं में भी है।

जब हम भारत की अवसंरचना-क्रान्ति के इस दशक को देखते हैं, तो एक स्पष्ट सन्देश उभरता है — नरेन्द्र मोदी ने अवसंरचना को राजनीतिक घोषणा-पत्र नहीं, बल्कि राष्ट्रीय कर्तव्य माना। हर राजमार्ग, हर मेट्रो-स्टेशन, हर छोटा हवाई अड्डा, और हर ग्रामीण सड़क — ये सब उस संकल्प के प्रमाण हैं जो कहता है कि भारत का कोई भी नागरिक विकास की मुख्यधारा से बाहर नहीं रहेगा।

इस अवसंरचना-क्रान्ति का एक और महत्वपूर्ण पहलू है — रोज़गार-सृजन पर इसका प्रत्यक्ष प्रभाव। जब एक किलोमीटर राजमार्ग बनता है, तो उसमें प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से सैकड़ों लोगों को काम मिलता है — इंजीनियर, मज़दूर, सामग्री-आपूर्तिकर्ता, ट्रक चालक। जब एक मेट्रो लाइन बनती है, तो उसके आसपास के क्षेत्र में व्यापार फलता-फूलता है। जब एक छोटे शहर में हवाई अड्डा खुलता है, तो वहाँ होटल, टैक्सी, पर्यटन, और व्यापार का एक पूरा पारितंत्र विकसित होता है। इस प्रकार, अवसंरचना-निवेश एकबारगी व्यय नहीं है — यह एक ऐसा बीज है जो वर्षों तक रोज़गार और समृद्धि के फल देता रहता है।

और इस सम्पूर्ण भीतरी निर्माण की यात्रा के बाद — जन-धन की डिजिटल क्रान्ति से, मेक इन इंडिया की आत्मनिर्भरता से, ग़रीब के कल्याण से, और नए भारत की इस सुदृढ़ रीढ़ से — भारत अब विश्व-मंच की ओर मुड़ता है। वह मुड़ता है अपनी शक्ति से, अपनी सांस्कृतिक विरासत के गौरव से, और उस आत्मविश्वास के साथ जो केवल उसे होता है जो अपना घर पहले सँवार लेता है — उस वैश्विक यात्रा की कथा पुस्तक के अगले खण्ड में है।

खण्ड तीन — विश्व-मंच पर भारत

अध्याय १० — पड़ोसी पहले

कूटनीति की कला में एक प्राचीन सत्य निहित है — कि कोई भी राष्ट्र तब तक विश्व-मंच पर सशक्त नहीं हो सकता, जब तक उसका अपना पड़ोस सुदृढ़ और मैत्रीपूर्ण न हो। पड़ोसी देश वह आधार-भूमि है जिस पर किसी भी महाशक्ति की वैश्विक कूटनीति का महल खड़ा होता है। इतिहास इसका साक्षी है — अनेक बड़े राष्ट्र जब-जब अपने पड़ोस से विमुख हुए, उन्होंने अन्ततः अपनी वैश्विक भूमिका का मूल्य चुकाया। नरेन्द्र मोदी ने इस सत्य को न केवल बौद्धिक रूप से आत्मसात किया, बल्कि इसे अपनी विदेश-नीति का केन्द्रीय सिद्धान्त बना दिया — और इसका संकेत उन्होंने अपने कार्यकाल के पहले ही क्षण से दे दिया।

२६ मई २०१४ को जब नरेन्द्र मोदी ने प्रधानमंत्री पद की शपथ ली, तो उन्होंने एक ऐसा क़दम उठाया जो भारतीय कूटनीति के इतिहास में अभूतपूर्व था। परम्परागत रूप से प्रधानमंत्री के शपथ-ग्रहण समारोह में देश के वरिष्ठ नेता, न्यायाधीश और गणमान्य नागरिक उपस्थित होते थे — यह एक आन्तरिक राजनीतिक अवसर होता था। किन्तु नरेन्द्र मोदी ने इस परम्परा को तोड़ते हुए दक्षिण एशिया के सभी पड़ोसी देशों के राष्ट्राध्यक्षों और शासनाध्यक्षों को आमन्त्रित किया। अफ़ग़ानिस्तान के राष्ट्रपति, बांग्लादेश की प्रधानमन्त्री, भूटान के प्रधानमन्त्री, मालदीव के राष्ट्रपति, नेपाल के प्रधानमन्त्री, पाकिस्तान के प्रधानमन्त्री, और श्रीलंका के राष्ट्रपति — सभी नई दिल्ली के राष्ट्रपति भवन में उपस्थित हुए।

यह कोई साधारण कूटनीतिक शिष्टाचार नहीं था। यह एक सुविचारित, गहरे अर्थ से भरी घोषणा थी — कि नया भारत अपने पड़ोस को केवल भौगोलिक वास्तविकता के रूप में नहीं, बल्कि साझे भविष्य की नींव के रूप में देखता है। जिस क्षण में नई सरकार का पहला सार्वजनिक संकेत यह हो कि दक्षिण एशिया के हर देश का नेता भारत के प्रधानमंत्री की शपथ का गवाह बने — उस क्षण में 'पड़ोसी पहले' (Neighbourhood First) नीति जन्म से पहले ही घोषित हो जाती है। इस एक आमन्त्रण ने यह सन्देश दिया कि भारत अपने पड़ोस के साथ आत्मीयता, विश्वास और सहयोग का एक ऐसा सम्बन्ध बनाना चाहता है जो व्यापार, संस्कृति और सुरक्षा — तीनों स्तरों पर अर्थपूर्ण हो।

इस नीति को और गहराई देते हुए, नरेन्द्र मोदी ने प्रधानमंत्री के रूप में अपनी पहली विदेश-यात्रा के लिए भूटान को चुना — १५ और १६ जून २०१४ को। यह चुनाव अत्यन्त सुविचारित था। भूटान — हिमालय की गोद में बसा यह छोटा किन्तु विलक्षण राज्य — भारत का एक विशेष, परम्परागत और अटूट मित्र है। उसे प्रथम यात्रा का सम्मान देकर नरेन्द्र मोदी ने यह सन्देश दिया कि नया भारत अपने छोटे पड़ोसियों को भी उतना ही महत्व देता है जितना संसार की बड़ी शक्तियों को — बल्कि उनसे अधिक, क्योंकि वे पहले आए। थिम्फू की संसद में उन्होंने जो भाषण दिया उसमें भूटान के नागरिकों के लिए एक ऐसा उष्ण आत्मविश्वास था जो कहीं से भी मुखौटा नहीं लगता था। जलविद्युत-परियोजनाओं में सहयोग, सड़क-सम्पर्क, और शिक्षा के क्षेत्र में सहयोग के नए आयामों की नींव रखी गई। भूटान ने जो प्रसन्नता और उत्साह उस यात्रा में व्यक्त किया, वह एक पड़ोसी के प्रति भारत के ईमानदार मैत्री-भाव की स्वाभाविक प्रतिक्रिया थी।

भूटान के बाद, अगस्त २०१४ में नरेन्द्र मोदी ने नेपाल की यात्रा की। नेपाल के साथ भारत के सम्बन्धों में वर्षों से कुछ खटास थी — एक ऐसी भावना कि बड़ा पड़ोसी कभी-कभी छोटे को उचित सम्मान नहीं देता। नरेन्द्र मोदी ने इस भावना को मिटाने का प्रयास किया। पशुपतिनाथ मन्दिर में सच्चे श्रद्धालु की भाँति पूजा करना, नेपाल की संसद में ऐसा भाषण देना जिसमें हिमालय से गंगा तक की साझी संस्कृति की आत्मीय चर्चा हो — ये सब प्रतीकात्मक नहीं थे, बल्कि उस वास्तविक आत्मीयता की अभिव्यक्ति थे जो दो सभ्यताओं के बीच हज़ारों वर्षों से प्रवाहित है। अरुण-३ जलविद्युत परियोजना में सहयोग और व्यापार-सुगमता के नए उपाय — इन सब ने भारत-नेपाल सम्बन्धों में नई उष्मा भर दी।

दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग के लिए 'सार्क' (SAARC) नामक संस्था पहले से विद्यमान थी, किन्तु उसमें राजनीतिक मतभेदों के कारण — विशेषतः पाकिस्तान की भूमिका के कारण — प्रायः अवरोध उत्पन्न होते रहते थे। नरेन्द्र मोदी ने इस वास्तविकता को समझते हुए 'बिम्सटेक' (BIMSTEC — Bay of Bengal Initiative for Multi-Sectoral Technical and Economic Cooperation) को अधिक सक्रिय और प्रभावी बनाने पर ध्यान केन्द्रित किया। बिम्सटेक में श्रीलंका, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, म्यांमार और थाइलैंड सम्मिलित हैं — अर्थात् बंगाल की खाड़ी के दोनों तटों के देश। इस मंच ने क्षेत्रीय सहयोग को एक नई व्यावहारिकता दी जो सार्क की राजनीतिक पेचीदगियों से मुक्त थी। अगस्त २०१४ में काठमांडू में बिम्सटेक शिखर-सम्मेलन इसी नई सक्रियता का प्रतीक था।

बांग्लादेश के साथ सम्बन्धों में भी एक नया अध्याय खुला। दशकों से लम्बित भूमि-सीमा समझौते को अन्ततः मई २०१५ में दोनों संसदों द्वारा अनुसमर्थित किया गया — यह एक ऐतिहासिक कूटनीतिक सफलता थी जिसने हज़ारों परिवारों की

अनिश्चितता को समाप्त किया। मार्च २०२१ में बांग्लादेश की स्वतंत्रता की स्वर्ण-जयन्ती के अवसर पर नरेन्द्र मोदी ने ढाका की यात्रा की। यह यात्रा केवल दो सरकारों के बीच की नहीं थी — यह दो जनताओं के बीच की एक साझी स्मृति का उत्सव था, क्योंकि १९७१ में भारत ने बांग्लादेश की मुक्ति में जो भूमिका निभाई थी, उस ऐतिहासिक बन्धन को इस यात्रा ने पुनः जीवन्त किया।

श्रीलंका के साथ सम्बन्धों में भी गर्माहट का एक नया दौर आया। सिंहली-तमिल मसले की संवेदनशीलता के बावजूद, भारत ने श्रीलंका के पुनर्निर्माण और विकास में सहायक की भूमिका निभाई। और जब श्रीलंका को अपने इतिहास के सबसे गहरे आर्थिक संकट का सामना करना पड़ा — वर्ष २०२२ में जब वहाँ ईंधन, खाद्यान्न और औषधि की भारी कमी हो गई — तो भारत सबसे पहले पहुँचा। चार बिलियन डॉलर से अधिक की सहायता — ऋण, क्रेडिट लाइन, ईंधन और अनाज के रूप में — भारत ने इस संकट-काल में प्रदान की। यही 'पड़ोसी पहले' की नीति का जीवन्त प्रमाण था।

मालदीव के साथ भी भारत के सम्बन्धों में एक नई सजगता आई। यह द्वीपीय राज्य भारत-महासागर में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान पर स्थित है — इसकी भू-रणनीतिक स्थिति को किसी भी शक्ति ने नज़रअन्दाज़ नहीं किया। नरेन्द्र मोदी ने मालदीव में जब भी राजनीतिक संकट आया, भारत ने वहाँ के संवैधानिक तन्त्र की रक्षा में एक संतुलित और जिम्मेदार भूमिका निभाई। इस द्वीपराज्य को भारत की जो सहायता मिली — चाहे वह आपदा-राहत हो, चाहित्सा हो, या विकास-ऋण — उसने यह सिद्ध किया कि भारत का पड़ोसी-प्रेम शब्दों में नहीं, कर्म में है।

'पड़ोसी पहले' के साथ-साथ नरेन्द्र मोदी ने 'एक्ट ईस्ट' (Act East) नीति को भी एक नई और ऊर्जावान दिशा दी। वर्ष १९९१ में जो 'लुक ईस्ट' (Look East)

नीति प्रारम्भ हुई थी, वह मुख्यतः आर्थिक उद्देश्यों वाली और सम्बन्धतः निष्क्रिय नीति थी — भारत पूर्व की ओर देखता था, किन्तु उस देखने में वह ऊर्जा नहीं थी जो कार्य बनकर बाहर आए। नरेन्द्र मोदी ने नवम्बर २०१४ में नेपाय्डॉ (म्यांमार) में आसियान-भारत शिखर-सम्मेलन में घोषित किया कि भारत अब 'एक्ट ईस्ट' नीति अपनाएगा। यह केवल शब्दों का परिवर्तन नहीं था — यह एक मौलिक दृष्टिकोण-परिवर्तन था। निष्क्रिय अवलोकन से सक्रिय सहभागिता की ओर।

इस नीति के अन्तर्गत भारत ने म्यांमार, थाइलैंड, वियतनाम, सिंगापुर, इंडोनेशिया और फ़िलीपीन्स जैसे देशों के साथ अपने सम्बन्धों को नई गहराई दी। कलादान मल्टी-मॉडल ट्रांजिट ट्रांसपोर्ट प्रोजेक्ट के माध्यम से मिज़ोरम को म्यांमार के सित्वे बन्दरगाह से जोड़ने की परियोजना आगे बढ़ी। त्रिपक्षीय राजमार्ग जो भारत को म्यांमार के रास्ते थाइलैंड से जोड़ेगा — उसकी गति तेज़ हुई। ये परियोजनाएँ केवल अवसंरचना की परियोजनाएँ नहीं थीं; ये दक्षिण एशिया और दक्षिण-पूर्व एशिया के बीच एक नई भू-आर्थिक एकता की नींव थीं।

'एक्ट ईस्ट' ने भारत के पूर्वोत्तर राज्यों को एक नया महत्व और नई भूमिका दी। असम, मणिपुर, मिज़ोरम, त्रिपुरा, अरुणाचल प्रदेश, नागालैण्ड और मेघालय — ये राज्य अब केवल देश के सुदूर कोने नहीं रहे। वे भारत की 'एक्ट ईस्ट' नीति के जीवन्त प्रवेश-द्वार बने। इन राज्यों का विकास दो कारणों से राष्ट्रीय प्राथमिकता बनी — पहला, समता और समावेश के लिए; और दूसरा, इस भू-रणनीतिक वास्तविकता के लिए कि पूर्व की ओर बढ़ने का मार्ग इन्हीं राज्यों से होकर जाता है।

इस सम्पूर्ण कूटनीतिक दृष्टि के मूल में एक गहरा और सुसंगत दर्शन था। नरेन्द्र मोदी का मानना था कि भारत को क्षेत्रीय नेतृत्व की भूमिका अपने आकार और सामर्थ्य के अनुरूप निभानी चाहिए — किन्तु प्रभुत्व के भाव से नहीं, बल्कि सेवा और

सहयोग के भाव से। वे चाहते थे कि भारत उस अग्रज की भूमिका में हो जो अपने पड़ोसियों की प्रगति में अपनी प्रगति देखे, जो उनके संकट में सहारा बने, जो उनकी आकांक्षाओं को स्वर दे और उनकी सम्प्रभुता का सम्मान करे।

अप्रैल २०१५ में जब नेपाल में विनाशकारी भूकम्प आया और हज़ारों जीवन काल के ग्रास बन गए — 'ऑपरेशन मैत्री' के अन्तर्गत भारतीय सेना के जवान, एनडीआरएफ की टीमें, चिकित्सक और सामग्री सबसे पहले नेपाल पहुँचे। यह केवल एक राहत-अभियान नहीं था; यह 'पड़ोसी पहले' की नीति का सबसे मानवीय प्रमाण था।

नरेन्द्र मोदी ने पड़ोसी देशों को यह एहसास दिलाया कि भारत उन्हें अपनी विदेश-नीति की वस्तु नहीं, बल्कि अपने साझे भविष्य का भागीदार मानता है। इस भावना का प्रसार ही वह आधार बना जिस पर भारत की वैश्विक कूटनीति की विशाल इमारत खड़ी हुई। एक विश्वसनीय, मैत्रीपूर्ण और सम्मानजनक पड़ोस — यह भारत की उस महाशक्ति-यात्रा की अनिवार्य शर्त है जो अब आकार ले रही थी।

इस प्रकार, 'पड़ोसी पहले' और 'एक्ट ईस्ट' की नीतियाँ परस्पर पूरक बनकर भारत की विदेश-नीति को एक नया, सुसंगत और दूरदर्शी स्वरूप प्रदान करती हैं। शपथ-ग्रहण के उस पहले दिन से लेकर हर संकट-प्रतिक्रिया तक, हर द्विपक्षीय यात्रा से लेकर हर क्षेत्रीय सम्मेलन तक — 'पड़ोसी पहले' एक जीवन्त कूटनीतिक प्रतिबद्धता बना रहा, जिसे नरेन्द्र मोदी ने अपनी नीति और अपने आचरण में प्रमाणित किया।

यह वह नींव थी जिस पर खड़े होकर भारत ने विश्व के विशाल पटल पर अपना नया अध्याय लिखना आरम्भ किया — एक ऐसे आत्मविश्वासी राष्ट्र के रूप में जो अपने

घर को सँजोने के बाद ही दूर की यात्रा पर निकलता है, और जो हर दूरी पर भी अपनी जड़ों से जुड़ा रहता है।

पड़ोस की यह जड़ें जितनी गहरी, उतना ही ऊँचा विश्व-मंच पर भारत का कद — और यही कद अब हमें अगले अध्याय में विश्व के विशाल पटल पर दिखेगा।

अध्याय ११ — विश्व का आलिंगन

जून २०२६ तक नरेन्द्र मोदी ने एक सौ एक अन्तरराष्ट्रीय यात्राएँ कीं और इक्यासी देशों का दौरा किया। यह संख्या केवल एक सांख्यिकीय तथ्य नहीं है — यह उस नई कूटनीतिक ऊर्जा का परिमाप है जो नरेन्द्र मोदी ने भारत की विदेश-नीति में भर दी। वे भारत के इतिहास में सर्वाधिक यात्रा करने वाले प्रधानमंत्री बने। किन्तु इन यात्राओं की गणना उनकी कूटनीतिक उपलब्धियों को समझने का माध्यम है, उसका सार नहीं। सार तो उन प्रगाढ़ सम्बन्धों में है जो उन्होंने हर महाद्वीप पर, हर राजधानी में, हर शिखर-सम्मेलन में बनाए — एक ऐसे भारत की छवि गढ़ते हुए जो विश्व-समुदाय में आत्मविश्वास के साथ, बराबरी के स्तर पर खड़ा है।

इन यात्राओं में एक आन्तरिक संगीत था जो बाहर से सुनाई नहीं देता — वह परिश्रम, वह तैयारी, वह पूर्व-ध्यान जो हर मुलाकात को औपचारिकता से आगे ले जाकर एक वास्तविक संवाद में बदल देता था। नरेन्द्र मोदी जब किसी नेता से मिलते थे, तो वे केवल अपने प्रतिनिधिमण्डल की फ़ाइलें लेकर नहीं आते थे — वे उस देश के इतिहास, उसकी संस्कृति, उसकी जनता की आकांक्षाओं और उसके नेता की व्यक्तिगत रुचियों से परिचित होकर आते थे। इस तैयारी ने उनकी हर मुलाकात को असाधारण बना दिया।

अमेरिका के साथ भारत के सम्बन्धों की यात्रा इस काल में एक नई ऊँचाई पर पहुँची। सितम्बर २०१४ में न्यूयॉर्क में संयुक्त राष्ट्र महासभा के इतर राष्ट्रपति बराक

ओबामा से उनकी पहली भेंट हुई। दोनों नेताओं के बीच तुरन्त एक ऐसी आत्मीयता स्थापित हो गई जो औपचारिक वार्ताओं की परिधि से बाहर थी। जनवरी २०१५ में ओबामा भारत के गणतन्त्र दिवस के मुख्य अतिथि बने — यह पहली बार था जब किसी अमेरिकी राष्ट्रपति ने यह सम्मान स्वीकार किया। उस दिन दिल्ली के राजपथ पर भारत ने जो परेड प्रस्तुत की, उसमें एक विशेष उत्साह था — जैसे देश अपने इस आत्मविश्वास को दुनिया के सामने प्रदर्शित कर रहा हो कि यह मित्रता बराबरी की मित्रता है।

इससे भी अधिक अभूतपूर्व वह क्षण था जब ओबामा और मोदी ने साथ मिलकर 'मन की बात' रेडियो कार्यक्रम में भाग लिया — एक अमेरिकी राष्ट्रपति भारत के एक लोकप्रिय रेडियो कार्यक्रम में, भारतीय जनता से सीधे बात करते हुए। यह इतिहास में शायद पहली बार हुआ था। इस एक कार्यक्रम ने दोनों देशों की जनता के बीच जो भावनात्मक सेतु बनाया, वह किसी भी राजनयिक दस्तावेज़ से अधिक प्रभावशाली था।

जून २०१६ में नरेन्द्र मोदी ने पहली बार अमेरिकी संसद के संयुक्त अधिवेशन को सम्बोधित किया। कांग्रेस के दोनों सदनों के सांसद, जो प्रायः हर मुद्दे पर आपस में झगड़ते हैं, उस दिन बार-बार खड़े होकर तालियाँ बजाते रहे। यह सम्मान बहुत कम विश्व-नेताओं को प्राप्त होता है। और जून २०२३ में उन्होंने पुनः यही किया — इस बार राष्ट्रपति जो बाइडेन के आमन्त्रण पर राजकीय यात्रा के अवसर पर — जो उन्हें दोनों पार्टियों के सांसदों द्वारा खड़े होकर करतल-ध्वनि से स्वागत मिला, वह एक ऐतिहासिक दृश्य था। किसी भी नेता का दो बार अमेरिकी संसद को सम्बोधित करना एक दुर्लभ सम्मान है, और इस सम्मान ने भारत-अमेरिका सम्बन्धों की गहराई को विश्व के समक्ष स्पष्ट किया।

भारत-अमेरिका सम्बन्ध इस काल में 'व्यापक वैश्विक सामरिक भागीदारी' (Comprehensive Global Strategic Partnership) के स्तर तक पहुँचे। रक्षा के क्षेत्र में 'लेमोआ' (LEMOA, 2016) और 'कोमकासा' (COMCASA, 2018) जैसे आधारभूत समझौते हुए जिन्होंने दोनों सेनाओं के बीच परिचालन-सहयोग का ढाँचा तैयार किया। प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में 'इनिशिएटिव ऑन क्रिटिकल एण्ड इमर्जिंग टेक्नोलॉजी' (iCET) ने अर्धचालकों, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और अन्तरिक्ष जैसे भविष्य के क्षेत्रों में गहरे सहयोग की राह खोली।

रूस के साथ भारत की परम्परागत और ऐतिहासिक मित्रता को नरेन्द्र मोदी ने और अधिक सुदृढ़ किया। वार्षिक शिखर-सम्मेलनों की परम्परा को उन्होंने निरन्तर बनाए रखा — चाहे अन्तरराष्ट्रीय परिस्थितियाँ कैसी भी रहीं। यह बात उल्लेखनीय है कि यूक्रेन संघर्ष के बाद जब पश्चिम के दबाव में अनेक देश रूस से दूरी बनाने को विवश हो गए, तब भी भारत ने अपनी 'रणनीतिक स्वायत्तता' को बनाए रखा और रूस के साथ संवाद जारी रखा। २०१९ में व्लादिवोस्तोक के 'पूर्वी आर्थिक फ़ोरम' में भागीदारी, एस-४०० वायु-रक्षा प्रणाली का अधिग्रहण, और जुलाई २०२४ में मॉस्को की यात्रा — ये सब इस सन्तुलित किन्तु दृढ़ कूटनीति के प्रमाण थे। रूस के साथ 'विशेष और विशेषाधिकार-प्राप्त सामरिक भागीदारी' को पुष्ट करते हुए भारत ने यह सिद्ध किया कि वह अपनी विदेश-नीति में किसी के दबाव में नहीं आता।

जापान के साथ सम्बन्धों में 'विशेष सामरिक एवं वैश्विक भागीदारी' (Special Strategic and Global Partnership) की स्थापना इस काल की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि रही। जापान के पूर्व प्रधानमंत्री शिंज़ो आबे के साथ नरेन्द्र मोदी की व्यक्तिगत मित्रता विश्व-कूटनीति में एक अनूठे सम्बन्ध के रूप में देखी गई।

'डियर फ्रेंड' — एक-दूसरे को इस सम्बोधन से बुलाने वाले ये दोनों नेता न केवल अपने-अपने देशों के लिए, बल्कि समस्त इंडो-पैसिफ़िक क्षेत्र की स्थिरता और समृद्धि के लिए एक साझा दृष्टि रखते थे। जब आबे जी की दुखद हत्या हुई, तो नरेन्द्र मोदी का शोक व्यक्तिगत था — वह एक राजनीतिक प्रतिक्रिया नहीं, एक मित्र की वेदना थी। नवम्बर २०१६ में टोक्यो में दोनों देशों के बीच असैन्य परमाणु सहयोग समझौते पर हस्ताक्षर हुए — यह समझौता छह वर्षों की कठिन बातचीत के बाद सम्पन्न हुआ और दोनों देशों के बीच विश्वास की उस गहराई का प्रमाण था जो औपचारिकताओं से परे है।

पश्चिम एशिया के साथ भारत के सम्बन्धों में एक नया और ऐतिहासिक अध्याय खुला। अप्रैल २०१६ में नरेन्द्र मोदी ने सऊदी अरब की यात्रा की, जहाँ उन्हें 'ऑर्डर ऑफ़ किंग अब्दुलअज़ीज़' से अलंकृत किया गया। जुलाई २०१७ में उन्होंने इज़राइल की ऐतिहासिक यात्रा की — इज़राइल जाने वाले वे पहले भारतीय प्रधानमंत्री बने। तेल अवीव के बेन गुरियन हवाई अड्डे पर इज़राइली प्रधानमंत्री नेतन्याहू ने स्वयं उनका स्वागत किया — एक ऐसा प्रोटोकॉल जो असाधारण था। दोनों नेताओं ने साथ नेतन्याहू के परिवार के साथ समुद्र-तट पर नंगे पाँव टहले — इस एक छवि ने दोनों देशों के सम्बन्धों की प्रगाढ़ता को एक मानवीय धरातल पर प्रस्तुत किया जो किसी भी कूटनीतिक दस्तावेज़ से अधिक बोलती थी।

संयुक्त अरब अमीरात (यूएई) के साथ सम्बन्ध इस काल में सबसे अधिक प्रगाढ़ हुए। अगस्त २०१९ में नरेन्द्र मोदी को यूएई के सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'ऑर्डर ऑफ़ ज़ायेद' से अलंकृत किया गया। यूएई के शासक शेख़ मोहम्मद बिन ज़ायेद को मोदी ने 'मेरे भाई' (my brother) कहकर सम्बोधित किया — और यह सम्बोधन कोई राजनयिक अतिशयोक्ति नहीं थी, यह उस सच्ची आत्मीयता की

अभिव्यक्ति थी जो दोनों नेताओं के बीच विकसित हुई थी। इस आत्मीयता का प्रतिफल मई २०२२ में 'व्यापक आर्थिक भागीदारी समझौता' (CEPA) के रूप में सामने आया, जिसने द्विपक्षीय व्यापार को नई गति दी।

नरेन्द्र मोदी की कूटनीतिक शैली की एक विशेषता थी जो उन्हें परम्परागत राजनयिकों से अलग करती थी — उनकी 'आलिंगन कूटनीति' (Hug Diplomacy)। विश्व के बड़े-बड़े नेताओं के साथ उनका व्यवहार औपचारिक राजनयिक शिष्टाचार की सीमाओं को लाँघकर व्यक्तिगत आत्मीयता के धरातल पर उतर आता था। अमेरिकी राष्ट्रपतियों से लेकर रूसी राष्ट्रपति तक, फ्रांसीसी राष्ट्रपति से लेकर यूएई के शासक तक — नरेन्द्र मोदी का वह भरपूर, हार्दिक आलिंगन विश्व-मीडिया के लिए एक नई और अनूठी छवि बन गया। रॉयटर्स ने इसे 'हग डिप्लोमेसी' का नाम दिया। किन्तु यह केवल शारीरिक भाव-भंगिमा नहीं थी — यह उस आत्मीय कूटनीति का बाहरी प्रकटीकरण था जो राजनीतिक सम्बन्धों को व्यक्तिगत विश्वास की नींव पर खड़ा करती है।

इस शैली का एक ठोस उदाहरण वुहान और चेन्नई की अनौपचारिक वार्ताओं में मिलता है। चीन के साथ सम्बन्धों में जटिलता के बावजूद — सीमा-विवाद, व्यापार-असन्तुलन, और भू-राजनीतिक प्रतिस्पर्धा — नरेन्द्र मोदी ने संवाद के द्वार बन्द नहीं किए। अप्रैल-मई २०१८ में वुहान में 'वुहान स्पिरिट' और अक्टूबर २०१९ में चेन्नई में 'चेन्नई कनेक्ट' — ये अनौपचारिक शिखर-वार्ताएँ उस परिपक्व कूटनीति का उदाहरण थीं जो तनाव को प्रबन्धित करते हुए भी दीर्घकालिक सम्बन्धों को नष्ट नहीं करती।

बहुपक्षीय मंचों पर भारत की भूमिका इस काल में गुणात्मक रूप से बदली। 'क्वाड' (Quad — Quadrilateral Security Dialogue) — भारत,

अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया का चतुष्कोणीय संवाद-मंच — को एक सशक्त और संस्थागत रूप दिया गया। २०१७ में आसियान सम्मेलन के इतर पुनः सक्रिय हुआ यह मंच मार्च २०२१ में पहले नेता-स्तरीय शिखर-सम्मेलन तक पहुँचा। सितम्बर २०२४ में विल्मिंग्टन, डेलावेयर में छठे शिखर-सम्मेलन तक 'क्वाड' ने 'मैत्री' (MAITRI) समुद्री प्रशिक्षण कार्यक्रम, 'क्वाड कैंसर मूनशॉट', 'पोर्ट्स ऑफ़ द फ्यूचर' और अर्धचालक आपूर्ति-श्रृंखला नेटवर्क जैसी ठोस पहलें प्रारम्भ कीं। यह मंच केवल सुरक्षा-चर्चा का मंच नहीं रहा — यह समुद्री स्वतंत्रता, स्वास्थ्य, प्रौद्योगिकी और जलवायु-परिवर्तन पर सहयोग का एक जीवन्त ढाँचा बन गया।

'अन्तरराष्ट्रीय सौर गठबन्धन' (ISA) नरेन्द्र मोदी की एक दूरदर्शी और परिवर्तनकारी संस्थागत पहल थी। ३० नवम्बर २०१५ को पेरिस में 'कॉप-२१' जलवायु सम्मेलन के अवसर पर फ्रांस के राष्ट्रपति फ्रांस्वा ओलांद के साथ इसकी औपचारिक घोषणा की गई। आज इस गठबन्धन में एक सौ बारह से अधिक देश सदस्य हैं और इसका मुख्यालय भारत के गुरुग्राम में है। यह गठबन्धन उन देशों को एकजुट करता है जो स्वच्छ और किफ़ायती सौर ऊर्जा के विकास के लिए प्रतिबद्ध हैं — और इसकी सदस्यता में अफ्रीका से लेकर लैटिन अमेरिका, दक्षिण-पूर्व एशिया से लेकर प्रशान्त द्वीपों तक की विविधता है।

'आपदा-प्रतिरोधी अवसंरचना के लिए गठबन्धन' (CDRI) की स्थापना २०१९ में भारत की पहल पर हुई, जिसका उद्देश्य जलवायु-परिवर्तन और प्राकृतिक आपदाओं के विरुद्ध बुनियादी ढाँचे को सुदृढ़ करना है। इसके बारह संस्थापक सदस्यों में भारत और अमेरिका के अतिरिक्त यूनाइटेड किंगडम, ऑस्ट्रेलिया और जापान जैसे देश

शामिल थे। इस प्रकार भारत एक नियम-पालक देश की भूमिका से आगे बढ़कर नियम-निर्माता देश की भूमिका में आ गया।

जुलाई २०२२ में 'आई२यू२' (I2U2 — India, Israel, UAE, USA) का पहला वर्चुअल शिखर-सम्मेलन आयोजित हुआ। यह मंच खाद्य सुरक्षा, स्वच्छ ऊर्जा और बुनियादी ढाँचे के क्षेत्र में एक अभूतपूर्व सहयोग का ढाँचा प्रस्तुत करता है। इस मंच की रचना ही इस बात का प्रमाण है कि नरेन्द्र मोदी के भारत ने कूटनीतिक सृजनशीलता का एक नया स्तर स्थापित किया — ऐसे साझेदारों को एकजुट करना जो सामान्य कूटनीतिक समझ में एक साथ नहीं आते।

इस सम्पूर्ण कूटनीतिक यात्रा का सार यह है कि नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में भारत ने विश्व को केवल 'देखा' नहीं, बल्कि उसे 'आलिंगन' किया — पूरे आत्मविश्वास के साथ, पूरी गरिमा के साथ, और एक स्पष्ट राष्ट्रीय दृष्टि के साथ। अमेरिका से रूस तक, जापान से खाड़ी देशों तक, और इज़राइल से अफ्रीका तक — भारत अब किसी एक कक्षा में बँधा नहीं था। वह अपनी शर्तों पर, अपने हितों की रक्षा करते हुए, किन्तु सबके साथ मैत्री और सम्मान का सम्बन्ध बनाते हुए आगे बढ़ रहा था। यही 'सामरिक स्वायत्तता' का व्यावहारिक अर्थ है — और इस स्वायत्तता को नरेन्द्र मोदी ने हर क़दम पर जिया।

जब भारत ने विश्व को आलिंगन किया, तो विश्व ने भी भारत को — और इस आत्मीय आलिंगन की सबसे मार्मिक अभिव्यक्ति उन लाखों प्रवासी भारतीयों के हृदयों में हुई, जिनकी कथा अगले अध्याय में प्रतीक्षा कर रही है।

अध्याय १२ — प्रवासी भारत की शक्ति

विश्व-भर में फैला भारतीय प्रवासी समुदाय मानव इतिहास की सबसे बड़ी और सबसे विविधतापूर्ण प्रवासी जनसंख्याओं में से एक है। करोड़ों भारतवंशी — अमेरिका की सिलिकॉन वैली की प्रौद्योगिकी कम्पनियों से लेकर ब्रिटेन के राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा के अस्पतालों तक, खाड़ी के विशाल निर्माण-स्थलों से लेकर अफ्रीका और कैरिबियन के व्यापारिक प्रतिष्ठानों तक, और ऑस्ट्रेलिया के विश्वविद्यालयों से लेकर दक्षिण-पूर्व एशिया के शोध-केन्द्रों तक — अपने परिश्रम, प्रतिभा और मूल्यों के बल पर एक अमिट छाप छोड़ रहे हैं।

किन्तु इस छाप की एक पीड़ा भी थी। वर्षों तक बहुत-से प्रवासी भारतीयों ने एक अजीब द्वन्द्व में जीवन बिताया। एक ओर वे उन देशों में सफल, सम्मानित और स्थापित थे जहाँ वे रह रहे थे — दूसरी ओर उनके मन में यह प्रश्न बना रहता था कि उनकी भारतीय पहचान — उनकी भाषा, उनके संस्कार, उनका रहन-सहन — विश्व की दृष्टि में कितना मूल्यवान है? क्या भारत एक ऐसा देश है जिस पर गर्व किया जाए? यह द्वन्द्व सूक्ष्म था, किन्तु वास्तविक था। नरेन्द्र मोदी ने इस द्वन्द्व को समझा, और उन्होंने इसे मिटाने के लिए एक ऐसी भव्य, आत्मीय और ऐतिहासिक पहल की जिसका प्रभाव पीढ़ियों तक रहेगा।

इसका पहला और सबसे नाटकीय उदाहरण २८ सितम्बर २०१४ को सामने आया, जब अपनी पहली अमेरिका-यात्रा के दौरान नरेन्द्र मोदी न्यूयॉर्क के विख्यात मैडिसन

स्क्वायर गार्डन पहुँचे। यह वही ऐतिहासिक सभागार है जहाँ विश्व के सबसे बड़े संगीत-कार्यक्रम, खेल-प्रतियोगिताएँ और सांस्कृतिक आयोजन होते हैं। उस दिन वहाँ उन्नीस से बीस हज़ार भारतीय-अमेरिकी जमा थे। वातावरण में एक ऐसा उत्साह था जो शब्दों में पूरी तरह नहीं उतरता।

उस भीड़ को देखते हुए सोचिए — डॉक्टर और इंजीनियर, प्रोफ़ेसर और व्यापारी, युवा और प्रौढ़, पहली पीढ़ी के आप्रवासी और दूसरी-तीसरी पीढ़ी के अमेरिकी-भारतीय — सब एक स्थान पर, सब एक भाव से। कुछ के हाथों में तिरंगा था, कुछ के चेहरे पर भावुकता के आँसू थे, और हर व्यक्ति के हृदय में एक प्रश्न था — क्या यह भारत वाकई बदल रहा है? क्या यह नेता वाकई वैसा है जैसा वह दिखता है?

जब नरेन्द्र मोदी ने माइक थामा, तो उस कमरे की हवा बदल गई। उन्होंने इन प्रवासी भारतीयों को 'अनिवासी भारतीय' नहीं कहा — उन्होंने इन्हें 'राष्ट्रदूत' कहा। उन्होंने कहा कि भारत को सेनाओं की ज़रूरत नहीं क्योंकि आप हैं — आप विश्व के हर देश में भारत का सबसे प्रभावशाली प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। उन्होंने उनकी भारतीयता को एक अभिशाप नहीं बल्कि एक अलंकरण बताया। यह भाषण एक साधारण राजनीतिक सम्बोधन नहीं था — यह उन सभी लोगों की आत्मा को छूने वाला एक ऐसा संवाद था जो अपनी जड़ों से दूर होकर भी उनसे जुड़े रहे थे।

उस रात मैडिसन स्क्वायर गार्डन में जो हुआ, वह केवल एक कार्यक्रम नहीं था — वह एक मनोवैज्ञानिक क्रान्ति की शुरुआत थी। भारतीय-अमेरिकी समुदाय — जो अमेरिका की सबसे शिक्षित, सर्वाधिक आय वाली और सबसे प्रभावशाली अल्पसंख्यक जनसंख्याओं में से एक है — उस रात एक नई पहचान के साथ घर लौटा। एक पहचान जो न झिझकती है, न संकोच करती है, बल्कि गर्व से कहती है: 'मैं भारतीय हूँ।'

इस परम्परा का सबसे भव्य और ऐतिहासिक अध्याय २२ सितम्बर २०१९ को ह्यूस्टन में लिखा गया, जब 'हाउडी मोदी' कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। एनआरजी स्टेडियम में लगभग पचास हज़ार भारतीय-अमेरिकी उपस्थित थे। किन्तु इस आयोजन को सचमुच अभूतपूर्व बनाने वाली बात यह थी कि स्वयं अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प उपस्थित हुए और नरेन्द्र मोदी के साथ मंच साझा किया। एक भारतीय प्रधानमंत्री और एक अमेरिकी राष्ट्रपति, कंधे से कंधा मिलाकर, पचास हज़ार भारतीय-अमेरिकियों के समक्ष खड़े — यह दृश्य किसी भी कूटनीतिक पाठ्यपुस्तक में नहीं मिलता। यह किसी विदेशी नेता के सम्मान में अमेरिकी धरती पर उस समय तक आयोजित सबसे बड़े कार्यक्रमों में से एक था।

उस स्टेडियम में गूँजती 'अब की बार, ट्रम्प सरकार' की गूँज — जो नरेन्द्र मोदी ने हास्य और आत्मीयता के साथ कही — और 'हाउडी मोदी' के नारे, सब मिलकर एक ऐसी ध्वनि-दृश्य-स्थिति बना रहे थे जो बता रही थी कि भारत-अमेरिका सम्बन्ध केवल सरकारों के बीच नहीं, जनताओं के बीच भी उतना ही जीवन्त है। राष्ट्रपति ट्रम्प ने मोदी की प्रशंसा में जो शब्द कहे, वे भविष्य के लिए एक ऐसा कूटनीतिक सन्देश थे जिसे विश्व ने सुना।

इस 'हाउडी मोदी' के उत्तर में भारत ने फरवरी २०२० में 'नमस्ते ट्रम्प' का आयोजन किया। २४ फरवरी २०२० को अहमदाबाद के नवनिर्मित नरेन्द्र मोदी स्टेडियम में — जो विश्व का सबसे बड़ा क्रिकेट स्टेडियम है और जिसकी क्षमता एक लाख पन्द्रह हज़ार से अधिक है — एक लाख से एक लाख पचीस हज़ार लोगों की उपस्थिति में अमेरिकी राष्ट्रपति का स्वागत हुआ। यह अभूतपूर्व था। किसी विदेशी राष्ट्राध्यक्ष के सम्मान में किसी भी देश में इतनी बड़ी जनसभा शायद इतिहास में पहले कभी नहीं

हुई। इस आयोजन में तीन बिलियन अमेरिकी डॉलर के रक्षा-समझौतों की भी घोषणा हुई।

इन तीन विशाल आयोजनों के परे भी नरेन्द्र मोदी ने विश्व के कोने-कोने में प्रवासी भारतीयों से संवाद स्थापित किया। सिंगापुर, सिडनी, टोरंटो, जोहान्सबर्ग, लंदन, दुबई — जहाँ भी वे गए, वहाँ के भारतीय समुदाय से उन्होंने न केवल मुलाकात की, बल्कि उन्हें सुना। उनकी चिन्ताएँ सुनीं — भारत में उनके परिवारों की, भारत की प्रगति की, और अपनी नई पीढ़ी की भारत से दूरी की चिन्ताएँ।

इस प्रवासी-कूटनीति के पीछे एक गहरी रणनीतिक समझ थी। भारतीय-मूल के लोग अमेरिका, यूनाइटेड किंगडम, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया जैसे लोकतान्त्रिक देशों की राजनीति, व्यापार और संस्कृति में उत्तरोत्तर प्रभावशाली स्थान प्राप्त कर रहे हैं। अमेरिका के कांग्रेस में, ब्रिटेन की संसद में, और अनेक देशों की मन्त्रिमण्डलों में भारतीय-मूल के प्रतिनिधि हैं। ये लोग न केवल उन देशों के नागरिक हैं — वे भारत के स्वाभाविक समर्थक भी हो सकते हैं, यदि उनके हृदय में भारत के प्रति आस्था और गर्व का भाव जीवित हो।

नरेन्द्र मोदी ने इस भाव को जगाया। उन्होंने प्रवासी भारतीयों को यह एहसास दिलाया कि उनकी भारतीयता गर्व का विषय है — क्योंकि जो भारत चन्द्रमा के अनछुए दक्षिणी ध्रुव पर पहुँच सकता है, जो विश्व की पाँचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन सकता है, जो 'जी-२०' की अध्यक्षता करने योग्य है — उस देश का नागरिक होने में गर्व के अलावा और क्या हो सकता है?

इस नई आत्म-छवि ने एक मनोवैज्ञानिक रूपान्तरण किया। जो लोग कभी अपनी भारतीय पहचान को लेकर झिझकते थे, वे अब उसे गर्व के साथ धारण करने लगे।

जिनके बच्चे अपनी भारतीयता को भूल रहे थे, उनमें से अनेक ने माता-पिता की भाषा, संगीत और परम्पराओं की ओर नए सिरे से आकर्षण अनुभव किया। यह एक सांस्कृतिक पुनर्जागरण था जो दूर देशों में जन्म ले रहा था।

'प्रवासी भारतीय दिवस' के आयोजनों में नई ऊर्जा आई। 'भारत को जानो' कार्यक्रम के माध्यम से युवा प्रवासी भारतीयों को अपनी जड़ों से जोड़ने के प्रयास हुए। भारत में निवेश के लिए प्रवासी भारतीयों को विशेष सुविधाएँ और प्रोत्साहन दिए गए। यह सब मिलकर एक ऐसे पारस्परिक सम्बन्ध का निर्माण कर रहा था जिसमें प्रवासी भारत और भारत — दोनों एक-दूसरे को पोषित करते हैं।

इस प्रकार, नरेन्द्र मोदी ने प्रवासी भारत की शक्ति को पहचाना, उसे सम्मान दिया, उसे जागृत किया, और उसे माँ भारती के विश्व-अभियान का एक अपरिहार्य और सक्रिय अंग बना दिया। करोड़ों हाथ, करोड़ों हृदय — विदेश में रहते हुए भी भारत से गहराई से जुड़े — यही वह अदृश्य किन्तु अजेय शक्ति है जिसे एक दूरदर्शी नेता ने पहचाना, और जिसे अपनी मातृभूमि की ऊँचाई में साझा कर लिया।

प्रवासी भारत की यह शक्ति जब अपनी पूर्ण क्षमता में प्रकट होती है, तभी भारत की असली महानता दिखती है — और यही भावना उस संकट-काल में और भी गहरी और उज्ज्वल हुई जब भारत ने स्वयं संबल बनकर विश्व के सामने खड़े होने का साहस दिखाया।

अध्याय १३ — संकट में संबल

किसी राष्ट्र का वास्तविक चरित्र उसकी सम्पन्नता के दिनों में नहीं, बल्कि संकट के क्षणों में प्रकट होता है। शान्ति में प्रत्येक राष्ट्र अपनी उदारता और मानवता का दावा कर सकता है — किन्तु जब विपत्ति का तूफान उठता है, जब मानवता को सहारे की आवश्यकता होती है, तब कौन आगे आता है और कौन पीछे हट जाता है — यही परीक्षा की घड़ी है। नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में भारत ने इक्कीसवीं सदी के कुछ सबसे बड़े वैश्विक संकटों में न केवल अपने नागरिकों के लिए संबल बनकर खड़े होने का साहस दिखाया, बल्कि सम्पूर्ण मानवता के प्रति एक ऐसी नैतिक प्रतिबद्धता का प्रदर्शन किया जिसने भारत को विश्व-समुदाय में एक नई नैतिक ऊँचाई पर प्रतिष्ठित किया।

इस कहानी का सबसे उज्ज्वल अध्याय तब लिखा गया जब कोविड-१९ महामारी ने विश्व को एक अभूतपूर्व और विनाशकारी संकट में डाल दिया। वर्ष २०२० के आरम्भ में जो वायरस चीन के वुहान से उठा, उसने कुछ ही महीनों में सम्पूर्ण पृथ्वी को अपनी चपेट में ले लिया। अस्पताल भर गए, श्मशान-घाट कम पड़ने लगे, और समृद्ध से समृद्ध देश भी अपनी चिकित्सा-व्यवस्था को ढहते देख रहे थे। ऑक्सीजन की कमी, औषधियों का अभाव, और सबसे बढ़कर — टीकों की अनुपलब्धता — ये विश्व की सबसे बड़ी चिन्ताएँ बन गईं।

ऐसे समय में भारत ने एक ऐसा निर्णय लिया जो उसकी सभ्यतागत आत्मा की अभिव्यक्ति था। भारत ने केवल अपने नागरिकों के लिए टीके बनाने और उपलब्ध कराने तक ही सीमित नहीं रहा — उसने 'वैक्सीन मैत्री' (Vaccine Maitri) का संकल्प लिया। यह संकल्प था कि भारत जो टीके बनाएगा, उनसे वह सम्पूर्ण विश्व को — विशेषकर उन देशों को जो स्वयं टीके खरीदने में असमर्थ हैं — लाभान्वित करेगा।

२० जनवरी २०२१ को 'कोविशील्ड' और 'कोवैक्सीन' की औपचारिक डिलीवरी आरम्भ हुई। पहली खेप 'गिफ्ट मोड' में — अर्थात् निःशुल्क अनुदान के रूप में — भूटान और मालदीव को भेजी गई। इसके बाद तो मानो एक धारा-सी बह निकली। नेपाल, बांग्लादेश, म्यांमार, श्रीलंका, अफ़ग़ानिस्तान, मॉरीशस, सेशल्स, बारबाडोस, डोमिनिका, त्रिनिदाद — एशिया, अफ्रीका और कैरिबियन के देशों तक भारत के टीके पहुँचने लगे।

२१ फरवरी २०२२ तक, इस अभियान के लगभग तेरह महीनों में, भारत ने सोलह करोड़ उनतीस लाख (१६.२९ करोड़) से अधिक टीकों की खुराकें छियानवे देशों तक पहुँचाईं। इनमें से एक करोड़ तैंतालीस लाख खुराकें निःशुल्क अनुदान के रूप में दी गईं, दस करोड़ इकहत्तर लाख वाणिज्यिक आधार पर, और चार करोड़ पन्द्रह लाख 'कोवैक्स' (COVAX) तन्त्र के माध्यम से। यह एक ऐसी उपलब्धि थी जो किसी एक देश की क्षमता और उदारता की सीमाओं को नई परिभाषा देती है।

बारबाडोस की प्रधानमन्त्री मिया मोटली ने कहा कि भारत ने उनके देश को 'भयंकर अन्धकार में प्रकाश की किरण' दी। एंटीगुआ के प्रधानमन्त्री ने कहा कि भारत ने जो किया वह उन्हें कभी नहीं भूलेगा। नेपाल, श्रीलंका और अफ्रीका के अनेक देशों के नेताओं ने अत्यन्त भावुक शब्दों में भारत की कृतज्ञता व्यक्त की।

अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष की तत्कालीन मुख्य अर्थशास्त्री और भारतीय मूल की गीता गोपीनाथ ने इस अभियान को वैश्विक आर्थिक पुनरुद्धार के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण बताया।

'विश्व की फार्मेसी' — यह उपाधि जो भारत ने जेनेरिक औषधियों के निर्माण में पहले ही अर्जित कर ली थी, अब 'वैक्सीन मैत्री' के माध्यम से और भी गहरे अर्थ में विश्व-समुदाय द्वारा स्वीकार की गई। यह अभियान एक गहरे सभ्यतागत सन्देश का वाहक था — 'वसुधैव कुटुम्बकम्' अर्थात् 'सम्पूर्ण पृथ्वी एक परिवार है' — यह केवल एक संस्कृत उद्धरण नहीं, यह भारत का जीवन-दर्शन है जो कठिनतम परिस्थितियों में भी अपनी उदारता नहीं छोड़ता।

संकट में संबल बनने का एक और गौरवशाली अध्याय फरवरी-मार्च २०२२ में लिखा गया, जब यूक्रेन पर रूस के सैन्य आक्रमण के साथ एक भयावह युद्ध आरम्भ हुआ। खारकीव, मारियुपोल, कीव और अन्य नगरों में बमबारी होने लगी। युद्ध की इस आकस्मिक स्थिति में हज़ारों भारतीय छात्र — जो यूक्रेन के विभिन्न शहरों के मेडिकल कॉलेजों में पढ़ रहे थे — फँस गए। उनके परिवार भारत में बदहवास थे। उनकी सुरक्षित वापसी एक तात्कालिक और जटिल चुनौती बन गई।

२६ फरवरी २०२२ को 'ऑपरेशन गंगा' की घोषणा हुई। यह नाम ही अपने आप में सन्देश था — गंगा जैसी पवित्र, जीवन-दायिनी और निरन्तर बहने वाली। इस अभियान में रोमानिया, हंगरी, पोलैंड, स्लोवाकिया और मोल्दोवा — पाँच देशों की सीमाओं का उपयोग किया गया। भारतीय वायुसेना के विशाल सी-१७ ग्लोबमास्टर विमानों के साथ-साथ एयर इंडिया, इंडिगो, स्पाइसजेट, एयर इंडिया एक्सप्रेस और गो-फर्स्ट ने अपनी सेवाएँ प्रदान कीं। ११ मार्च २०२२ तक, लगभग चौदह दिनों में, पचीस हज़ार से अधिक भारतीय नागरिकों को सुरक्षित निकाल लिया गया।

इस अभियान के दौरान नरेन्द्र मोदी ने व्यक्तिगत रूप से इसकी निगरानी की। उन्होंने राष्ट्रपति पुतिन से और राष्ट्रपति ज़ेलेंस्की से दोनों से सीधे टेलीफ़ोन पर बात की। इस असाधारण क़दम में भारत की 'सामरिक स्वायत्तता' का व्यावहारिक अर्थ सामने आया — कि भारत दोनों पक्षों से बात कर सकता था, क्योंकि वह किसी एक का पिछलग्गू नहीं था। इसी तटस्थता और विश्वसनीयता ने भारत को यह सम्भव किया कि वह युद्धग्रस्त देश में भी अपने नागरिकों के लिए सुरक्षित मार्ग निकाल सका।

एक दृश्य की कल्पना करें — यूक्रेन की सीमा पर, ठण्ड में, रात के अन्धेरे में, बोझ उठाए हुए भारतीय छात्र जो बस की प्रतीक्षा कर रहे हैं — और जब वे सीमा पार करते हैं, तो वहाँ भारतीय दूतावास के अधिकारी, राहत-सामग्री, और उन्हें घर ले जाने का विमान उपस्थित है। उस क्षण में उन छात्रों के मन में जो भाव उठे होंगे — अपने देश के प्रति कृतज्ञता, अपनी सरकार के प्रति विश्वास — वह भाव किसी भी राजनीतिक भाषण से अधिक शक्तिशाली होता है।

'ऑपरेशन गंगा' अकेला नहीं था। भारत ने इससे पहले यमन में 'ऑपरेशन राहत' (२०१५) में सत्रह देशों के नागरिकों सहित पाँच हज़ार से अधिक भारतीयों को निकाला था, लीबिया में 'ऑपरेशन सेफ होमकमिंग' में नागरिकों की सुरक्षित वापसी सुनिश्चित की थी, और नेपाल भूकम्प में 'ऑपरेशन मैत्री' के अन्तर्गत एनडीआरएफ की टीमें और सहायता-सामग्री भेजी थी। ये सब मिलकर एक ऐसी कूटनीतिक शक्ति और संगठन-क्षमता की तस्वीर बनाते हैं जो 'पहले आने वाले मित्र' का प्रमाण है।

जनवरी २०२३ में 'वॉयस ऑफ़ ग्लोबल साउथ समिट' का आयोजन इस कहानी का एक और महत्वपूर्ण अध्याय था। १२ और १३ जनवरी २०२३ को ऑनलाइन प्रारूप में

आयोजित इस शिखर-वार्ता में एक सौ से अधिक विकासशील और उदीयमान अर्थव्यवस्थाओं के देशों ने भाग लिया। इस मंच का उद्देश्य था — एशिया, अफ्रीका, लैटिन अमेरिका और कैरिबियन के उन देशों की सामूहिक आवाज़ को एक सुसंगठित रूप देना जो प्रायः अन्तरराष्ट्रीय नीति-निर्माण की प्रक्रिया में हाशिये पर रहे हैं।

भारत ने इस मंच के माध्यम से जलवायु-वित्त में विकसित देशों की प्रतिबद्धताओं को पूरा करने की माँग उठाई, विकासशील देशों पर ऋण-बोझ की समस्या को अन्तरराष्ट्रीय ध्यान में लाया, और प्रौद्योगिकी-हस्तांतरण के लिए एक न्यायपूर्ण व्यवस्था की माँग की। यह भारत का स्वयं को 'ग्लोबल साउथ' के स्वाभाविक प्रवक्ता के रूप में स्थापित करने का एक सफल प्रयास था — और इसकी प्रतिध्वनि सितम्बर २०२३ के 'जी-२०' शिखर-सम्मेलन में भी सुनाई दी।

इस प्रकार, 'वैक्सीन मैत्री' की उदारता हो, 'ऑपरेशन गंगा' की दृढ़ता हो, या 'वॉयस ऑफ़ ग्लोबल साउथ' की नेतृत्व-क्षमता — इन सभी में एक ही धागा है: वह है भारत की नैतिक शक्ति, उसका मानवीय बोध, और उसकी वह सभ्यतागत उदारता जो संकट में अपने को नहीं, दूसरों को पहले देखती है। नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में यह नैतिक शक्ति कोरी बातों में नहीं रही — वह कार्य में, निर्णय में, और परिणाम में परिवर्तित हुई।

संकट में संबल बनने की यह क्षमता ही किसी राष्ट्र को महान बनाती है। और इसी महानता की स्वीकृति विश्व ने उन सम्मानों के रूप में दी जिनकी श्रृंखला अगले अध्याय में हमारे सामने आती है।

यही संबल-भाव, यही सेवा-भाव, आगे चलकर उन सम्मानों में परावर्तित हुआ जो विश्व ने इस नेता को और उनके माध्यम से माँ भारती को प्रदान किए।

अध्याय १४ — सम्मानों की श्रृंखला

जब किसी राष्ट्र का नेता विदेशी सरकारों द्वारा सम्मानित किया जाता है, तो वह क्षण कूटनीति और मानवीयता के संगम का एक अनूठा स्वर होता है। उस क्षण में वे वर्षों की मेहनत, अनेक यात्राओं की थकान, और परस्पर विश्वास के धैर्यपूर्ण निर्माण की एक प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति होती है। नरेन्द्र मोदी को जो सम्मान मिले, वे उसी श्रृंखला की कड़ियाँ हैं — किन्तु इनका महत्व इनकी चमक में नहीं, इनके पीछे की गाथा में है।

अपने कार्यकाल के दौरान नरेन्द्र मोदी को एक दर्जन से अधिक देशों के सर्वोच्च राष्ट्रीय सम्मानों से अलंकृत किया गया। यह किसी भी भारतीय नेता के लिए एक असाधारण उपलब्धि है — किन्तु जो बात इसे और अधिक उल्लेखनीय बनाती है, वह इन सम्मानों की भौगोलिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक विविधता है। ये सम्मान खाड़ी के इस्लामी राजतन्त्रों से आए, पूर्व सोवियत महाशक्ति से आए, पश्चिम के उदार लोकतन्त्र से आए, और एशिया के पड़ोसी देशों से आए। इस विविधता में ही नरेन्द्र मोदी की उस कूटनीतिक सफलता का सार है जो किसी एक गुट या विचारधारा की बाधाओं से मुक्त थी।

इस सम्मान-श्रृंखला का आरम्भ ३ अप्रैल २०१६ को हुआ, जब सऊदी अरब ने नरेन्द्र मोदी को अपने सर्वोच्च नागरिक पुरस्कार 'ऑर्डर ऑफ़ किंग अब्दुलअज़ीज़' (King Abdulaziz Sash) से अलंकृत किया। इस सम्मान

को समझने के लिए उस पृष्ठभूमि को समझना आवश्यक है। सऊदी अरब — मक्का और मदीना का संरक्षक, अरब विश्व का एक अत्यन्त प्रभावशाली राष्ट्र, और भारत के लाखों कामगार-नागरिकों का निवास-स्थान — इस देश के साथ सम्बन्धों का एक विशेष आयाम है। उस 'किंग अब्दुलअज़ीज़ सैश' में न केवल भारत-सऊदी सरकारी सम्बन्धों की प्रगाढ़ता है, बल्कि उन लाखों भारतीय परिवारों का परिश्रम और निष्ठा भी है जिन्होंने सऊदी अरब में काम करते हुए दोनों देशों के बीच एक अदृश्य किन्तु अटूट बन्धन बुना है।

इसके दो महीने बाद, ४ जून २०१६ को अफ़ग़ानिस्तान ने नरेन्द्र मोदी को अपने सर्वोच्च सम्मान 'ऑर्डर ऑफ़ अमीर अमानुल्लाह ख़ान' से सम्मानित किया। अमानुल्लाह ख़ान अफ़ग़ानिस्तान के वे शासक थे जिन्होंने बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में अपने देश को ब्रिटिश प्रभाव से मुक्त कर आधुनिकता की राह दिखाई थी। उनके नाम पर दिया गया यह सम्मान अफ़ग़ान जनता की कृतज्ञता का प्रतीक था — उस भारत के प्रति जिसने अफ़ग़ानिस्तान में शिक्षा, संसद-भवन, जल-बाँध, सड़क, और बुनियादी ढाँचे के निर्माण में अरबों डॉलर का निवेश किया। भारत ने वहाँ जो 'सलमा बाँध' बनाया, जिसे 'भारत-अफ़ग़ानिस्तान मित्रता बाँध' भी कहते हैं, उससे लाखों अफ़ग़ान किसानों को सिंचाई का जल मिला। यह सम्मान उन किसानों की, उन बच्चों की, उन महिलाओं की कृतज्ञता था जिनके जीवन में भारत के सहयोग से थोड़ा उजियारा आया था।

अगस्त २०१९ में संयुक्त अरब अमीरात ने नरेन्द्र मोदी को अपने सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'ऑर्डर ऑफ़ ज़ायेद' (Order of Zayed) से अलंकृत किया। यह सम्मान यूएई के संस्थापक और वास्तुशिल्पी शेख़ ज़ायेद बिन सुल्तान अल नाहयान के नाम पर है — वह महान शासक जिन्होंने रेगिस्तान में एक आधुनिक राष्ट्र का

निर्माण किया। यह यूएई का सर्वोच्च राजकीय अलंकरण है। इस सम्मान का महत्व इसलिए और अधिक है क्योंकि यूएई में भारत के तीस लाख से अधिक नागरिक निवास करते हैं — वे उस देश की अर्थव्यवस्था, उसके अस्पतालों, उसके विद्यालयों, और उसके बाज़ारों में एक अनिवार्य उपस्थिति हैं। नरेन्द्र मोदी और शेख़ मोहम्मद बिन ज़ायेद के बीच जो व्यक्तिगत सम्बन्ध विकसित हुआ, उसमें 'मेरे भाई' का सम्बोधन महज़ शब्द नहीं था — वह दोनों देशों की जनताओं के बीच की आत्मीयता का प्रतिबिम्ब था।

२१ दिसम्बर २०२० को अमेरिका ने नरेन्द्र मोदी को 'लीजन ऑफ़ मेरिट' (Legion of Merit, Chief Commander) से सम्मानित किया। यह अमेरिकी रक्षा-प्रतिष्ठान का एक प्रतिष्ठित सम्मान है जो उन विदेशी राष्ट्राध्यक्षों को दिया जाता है जिन्होंने अमेरिका के साथ रक्षा और सुरक्षा सहयोग में असाधारण योगदान दिया हो। भारत-अमेरिका रक्षा सम्बन्धों की गहराई — 'लेमोआ', 'कोमकासा' और 'बेका' जैसे आधारभूत समझौते, 'क्वाड' में सक्रिय भागीदारी, और इंडो-पैसिफ़िक क्षेत्र में साझी सामरिक दृष्टि — इस सम्मान की अदृश्य पृष्ठभूमि है। जब अमेरिका किसी विदेशी नेता को इस सम्मान से नवाज़ता है, तो वह वास्तव में अपनी जनता को यह सन्देश देता है कि यह नेता हमारा एक विश्वसनीय और सम्मानित सहयोगी है।

और फिर ९ जुलाई २०२४ को आया वह क्षण जो इस श्रृंखला का एक विशेष रत्न है। रूस ने नरेन्द्र मोदी को अपने सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'ऑर्डर ऑफ़ सेंट एंड्रयू द अपॉसल' (Order of St Andrew the Apostle) से अलंकृत किया। यह रूस का सर्वोच्च राज्य सम्मान है — पीटर महान के काल से चला आ रहा,

शताब्दियों पुराना, और रूस की परम्परा और गरिमा का प्रतीक। इसे उन्हीं व्यक्तियों को दिया जाता है जिन्होंने रूस और उसके लोगों के लिए असाधारण सेवाएँ की हों।

यहाँ वह बात है जो इस श्रृंखला को सचमुच असाधारण बनाती है — और जिसे समझना आवश्यक है। अमेरिका और रूस — विश्व की दो प्रमुख महाशक्तियाँ जो शीत-युद्ध से लेकर यूक्रेन-संघर्ष तक, दशकों से परस्पर प्रतिद्वन्द्वी रही हैं — दोनों ने नरेन्द्र मोदी को अपने-अपने सर्वोच्च सम्मानों से अलंकृत किया। एक ही नेता को अमेरिका का 'लीजन ऑफ़ मेरिट' और रूस का 'ऑर्डर ऑफ़ सेंट एंड्रयू' — यह विश्व-कूटनीति में एक ऐसी दुर्लभ उपलब्धि है जो केवल उस नेता के भाग्य में आती है जो किसी एक गुट का पिछलग्गू नहीं, बल्कि एक स्वतन्त्र और विश्वसनीय राष्ट्र का प्रतिनिधि है।

भारत की 'सामरिक स्वायत्तता' — अपने राष्ट्रीय हितों के आधार पर स्वतन्त्र निर्णय लेने की क्षमता — का इससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकता है कि दो परस्पर प्रतिद्वन्द्वी महाशक्तियाँ एक ही नेता को अपना सर्वोच्च सम्मान दें? इसका अर्थ है कि दोनों शक्तियाँ नरेन्द्र मोदी और भारत में एक ऐसे साझेदार को देखती हैं जो उनके साथ है — उनके विरोधी के विरुद्ध नहीं, बल्कि अपने हित और विश्व-हित के आधार पर।

इन प्रमुख सम्मानों के अतिरिक्त भी अनेक देशों ने नरेन्द्र मोदी को अपने राष्ट्रीय सम्मानों से अलंकृत किया। अफ़ग़ानिस्तान, फ़िजी, फ़िलिस्तीन, बहरीन और अन्य देशों ने अपने सर्वोच्च नागरिक पुरस्कार प्रदान किए। मध्य-२०२४ तक एक दर्जन से अधिक ऐसे सम्मान संचित हो चुके थे — यह किसी भी भारतीय नेता के लिए एक ऐसा रिकॉर्ड है जो इतिहास में पहले नहीं था।

किन्तु इन सम्मानों की वास्तविक महत्ता उनकी गणना में नहीं है। प्रत्येक सम्मान के पीछे एक कूटनीतिक यात्रा है। सऊदी अरब के सम्मान के पीछे वे घण्टे हैं जो नरेन्द्र मोदी ने रियाध में बिताए — नेताओं से मिलकर, व्यापारियों से बात कर, और उन भारतीय श्रमिकों की परिस्थितियों में सुधार के लिए काम कर। यूएई के सम्मान के पीछे वे वर्ष हैं जिनमें दोनों देशों के बीच व्यापार, निवेश और सांस्कृतिक आदान-प्रदान का ढाँचा बुना गया। रूस के सम्मान के पीछे वह दृढ़ता है जिसके साथ भारत ने अन्तरराष्ट्रीय दबाव के बावजूद अपनी सामरिक स्वायत्तता बनाए रखी।

इन सम्मानों का एक और आयाम है — वे भारत की बढ़ती 'सॉफ्ट पावर' अर्थात् सांस्कृतिक और कूटनीतिक प्रभाव का भी प्रतीक हैं। एक ऐसा नेता जिसे संसार के विभिन्न कोनों से, विभिन्न संस्कृतियों से, विभिन्न राजनीतिक परम्पराओं से सम्मान मिले — वह नेता न केवल अपने देश का, बल्कि एक वैश्विक दृष्टिकोण का प्रतिनिधि है।

जब ये पदक और अलंकरण नरेन्द्र मोदी के वक्ष पर सजाए गए, तो प्रत्येक बार एक सन्देश गया — कि भारत अब विश्व-मंच पर वह स्थान पा चुका है जो उसकी सभ्यता और उसके सामर्थ्य के योग्य है। वडनगर की उस चाय की दुकान से निकले एक साधारण बालक ने, जिसने हिमालय की चोटियों में साधना की और जिसने जन-सेवा को अपना धर्म बनाया — उसने भारत को विश्व की दृष्टि में एक नई पहचान दिलाई।

सऊदी अरब की मरुभूमि में उठे उस सम्मान में, यूएई की अरबी खाड़ी से आए उस अलंकरण में, अमेरिकी राजधानी में प्रदत्त उस 'लीजन ऑफ़ मेरिट' में, और मॉस्को की शताब्दियों पुरानी परम्परा में दिए गए उस 'सेंट एंड्रयू ऑर्डर' में — सबमें एक ही बात कही गई: कि भारत आ गया है, और यह आना स्थायी है।

ये सम्मान माँ भारती के मुकुट में जड़े रत्न हैं। और जिस पुत्र ने इन्हें अर्जित किया, उसकी यात्रा यहाँ नहीं रुकती — यह तो उस महान कथा की एक सुनहरी कड़ी है जो आगे के अध्यायों में और भी भव्य रूप में प्रकट होने वाली है।

ये सम्मान हमें स्मरण कराते हैं कि भारत की वैश्विक यात्रा एक क्षण की उपलब्धि नहीं — यह एक सतत, गतिशील और महत्वाकांक्षी यात्रा है जो विश्व के साथ भारत के उस स्थायी और सम्मानजनक सम्बन्ध का निर्माण कर रही है जो उसकी सभ्यता और उसके सामर्थ्य के अनुरूप है।

खण्ड चार — उभरती महाशक्ति के चिह्न

अध्याय १५ — चाँद और मंगल तक

इतिहास के पन्नों पर कुछ तिथियाँ ऐसी अंकित होती हैं जो केवल किसी एक घटना का विवरण नहीं होतीं, बल्कि किसी समूचे राष्ट्र की आत्मा के जागरण का क्षण होती हैं। जिस प्रकार अमेरिका के लिए २० जुलाई १९६९ — जब नील आर्मस्ट्रॉन्ग ने चन्द्रमा की धूल में अपना पहला क़दम रखा — एक राष्ट्रीय पहचान का क्षण बन गया, उसी प्रकार भारत के लिए दो तिथियाँ हैं जो सदा के लिए इस राष्ट्र की चेतना में अंकित हो गई हैं — २४ सितम्बर २०१४ और २३ अगस्त २०२३। एक वह दिन जब भारत का मंगलयान लाल ग्रह की कक्षा में प्रविष्ट हुआ, और दूसरा वह दिन जब चन्द्रयान-३ का विक्रम लैंडर चन्द्रमा के दक्षिणी ध्रुव के निकट उतरा। ये दोनों क्षण केवल वैज्ञानिक उपलब्धियाँ नहीं थे — ये एक सभ्यता के आत्म-घोष थे, उस भारत के जो यह कह सकता था: हम भी आकाश को छू सकते हैं, और अपनी शर्तों पर छू सकते हैं।

मंगलयान की कथा उस दिन से आरम्भ होती है जब ५ नवम्बर २०१३ को आन्ध्र प्रदेश के श्रीहरिकोटा स्थित सतीश धवन अंतरिक्ष केन्द्र से पी.एस.एल.वी.-सी२५ यान आकाश में उठा। इस यान पर आसीन था भारत का 'मंगल ऑर्बिटर मिशन' — जिसे जन-भाषा में 'मंगलयान' कहा गया। इस यंत्र का प्रक्षेपण-भार एक हज़ार तीन सौ सैंतीस दशमलव दो किलोग्राम था, जिसमें से आठ सौ बावन किलोग्राम केवल प्रणोदन-ईंधन था। यह एक ऐसा अंतरिक्षयान था जिसे भारतीय वैज्ञानिकों ने अपनी मौलिक प्रतिभा, अपनी मितव्ययी अभियांत्रिकी और अपनी अदम्य

जिजीविषा से गढ़ा था। इस सम्पूर्ण अभियान की स्वीकृत परियोजना लागत थी लगभग चार सौ पचास करोड़ रुपये — लगभग तिहत्तर मिलियन अमेरिकी डॉलर। यह आँकड़ा सुनकर विश्व के बड़े अंतरिक्ष संस्थान चकित रह गए।

बी.बी.सी. ने उस काल लिखा कि यह मिशन 'आश्चर्यजनक रूप से किफ़ायती' था। तुलना के लिए बताया गया कि उसी वर्ष प्रदर्शित हॉलीवुड फ़िल्म 'ग्रेविटी' का निर्माण-बजट मंगलयान की पूरी परियोजना-लागत से अधिक था। भारतीय वैज्ञानिकों ने इस उपलब्धि से यह सिद्ध कर दिया कि 'अधिक परिणाम, कम लागत में' — यह केवल भारत की आर्थिक विवशता नहीं, बल्कि उसकी अभियांत्रिकी-प्रतिभा का सर्वोत्तम स्वरूप है। उन्होंने हॉमैन ट्रांसफर कक्षा का उपयोग किया, यान को अत्यधिक हल्का और सुव्यवस्थित रखा, सिद्ध पी.एस.एल.वी. प्रक्षेपक का उपयोग किया, और एक दीर्घवृत्तीय मंगल-कक्षा का चुनाव किया जिसमें कम ईंधन लगे। यह वही 'मितव्ययी अभियांत्रिकी' थी जिसने भारत को सूचना-प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भी विश्व का नेता बनाया था।

दो सौ अट्ठानवे दिनों की लम्बी अंतरिक्ष-यात्रा के पश्चात्, २४ सितम्बर २०१४ को — जब नरेन्द्र मोदी की सरकार को सत्ता सँभाले मात्र चार महीने हुए थे — मंगलयान ने मंगल ग्रह की कक्षा में सफलतापूर्वक प्रवेश किया। उस ऐतिहासिक क्षण को देखने के लिए प्रधानमंत्री स्वयं बेंगलुरु के इसरो मुख्यालय में उपस्थित थे। जब मिशन कंट्रोल रूम में 'ऑर्बिट इनसर्शन' की पुष्टि हुई, तो वैज्ञानिकों ने एक-दूसरे को आलिंगन में भर लिया — उनके चेहरों पर वह भाव था जिसे शब्दों में पकड़ पाना कठिन है। प्रधानमंत्री मोदी ने उन वैज्ञानिकों के पास जाकर उनसे हाथ मिलाया, उन्हें बधाई दी, और उस क्षण को वह राष्ट्रीय गरिमा दी जो ऐसी उपलब्धि को मिलनी चाहिए।

इस उपलब्धि की दो विशेषताएँ इसे और भी असाधारण बनाती थीं। प्रथम — भारत विश्व का एकमात्र ऐसा राष्ट्र बना जिसने अपने पहले ही प्रयास में मंगल की कक्षा में सफलतापूर्वक प्रवेश किया। अमेरिका अपने पहले प्रयास में विफल रहा था; सोवियत संघ और यूरोप भी पहले प्रयास में मंगल तक नहीं पहुँच पाए थे। भारत एकमात्र अपवाद था। द्वितीय — भारत एशिया का पहला ऐसा राष्ट्र बना जिसने मंगल की कक्षा में प्रवेश किया। जापान और चीन के पूर्व के प्रयास विफल रहे थे। इन दोनों विशेषताओं को मिलाकर देखें तो यह स्पष्ट होता है कि भारत का यह अंतरिक्ष-अभियान केवल एक वैज्ञानिक सफलता नहीं, बल्कि एक ऐतिहासिक 'पहली बार' था।

मंगलयान में पाँच वैज्ञानिक उपकरण थे — 'लाइमैन-अल्फ़ा फ़ोटोमीटर' जो हाइड्रोजन और ड्यूटेरियम का अध्ययन करता था; 'थर्मल इन्फ्रारेड इमेजिंग स्पेक्ट्रोमीटर' जो मंगल की सतह के ताप और खनिज-संरचना का मापन करता था; 'मार्स कलर कैमरा' जो मंगल के चित्र लेता था; 'मार्स एक्सोस्फेरिक न्यूट्रल कम्पोज़िशन एनेलाइज़र' जो वहाँ के बाह्य वायुमण्डल का विश्लेषण करता था; और 'मीथेन सेंसर फ़ॉर मार्स' जो मंगल पर मीथेन की खोज करता था। इन उपकरणों ने मात्र छह महीनों के लिए डिज़ाइन किए गए इस यान को लगभग सात से आठ वर्षों तक सक्रिय रखा — मंगल के वायुमण्डल, उसकी सतह, और उसके अंतरिक्ष-पर्यावरण के विषय में बहुमूल्य भारतीय आँकड़े एकत्र करते हुए। यह उस भारतीय अभियांत्रिकी की स्थायित्व-शक्ति का प्रमाण था जो अपेक्षित से कहीं अधिक देती है।

किन्तु अंतरिक्ष-विजय की यह गाथा मंगल पर विश्राम नहीं लेती। इसका अगला महत्वपूर्ण अध्याय लिखा गया २२ जुलाई २०१९ को, जब भारत का 'चन्द्रयान-२'

अभियान आरम्भ हुआ। इस अभियान में एलवीएम३-एम१ प्रक्षेपक से एक ऑर्बिटर, एक लैंडर 'विक्रम' (एक हज़ार चार सौ इकहत्तर किलोग्राम) और एक रोवर 'प्रज्ञान' (सत्ताईस किलोग्राम) भेजे गए। मिशन निदेशक रितु करिधाल और परियोजना निदेशक एम. वनिता के नेतृत्व में यह अभियान प्रारम्भ हुआ। ७ सितम्बर २०१९ को जब विक्रम लैंडर चन्द्रमा की सतह पर उतरने की प्रक्रिया में था, तब अन्तिम फ़ाइन-ब्रेकिंग चरण में — चन्द्रमा से मात्र दो दशमलव एक किलोमीटर ऊपर — एक अनपेक्षित थ्रस्ट-रोल-ब्रेकिंग विसंगति के कारण उससे सम्पर्क टूट गया।

बेंगलुरु के नियन्त्रण-कक्ष में उपस्थित प्रधानमंत्री मोदी ने उस क्षण जो किया, वह एक नेता की संवेदनशीलता का वह प्रमाण है जो लोगों के हृदय में घर कर जाता है। उन्होंने इसरो के तत्कालीन अध्यक्ष डॉ. के. सिवन को — जिनकी आँखों में आँसू थे — सान्त्वना देते हुए गले लगाया। वह दृश्य — एक देश के प्रधानमंत्री और एक वैज्ञानिक का वह आलिंगन — करोड़ों भारतीयों के हृदय में समा गया। उन्होंने उन वैज्ञानिकों को सम्बोधित करते हुए कहा कि राष्ट्र उनके साथ है, कि यह यात्रा यहाँ समाप्त नहीं हुई, और कि विज्ञान में असफलताएँ भी ज्ञान का एक स्रोत हैं। यह सन्देश वैज्ञानिक समुदाय के लिए एक संजीवनी था। इसरो के वैज्ञानिकों ने उस असफलता से सीखा, चन्द्रयान-२ के ऑर्बिटर ने कार्य जारी रखा और मूल्यवान आँकड़े देता रहा, तथा अगले अभियान की तैयारी आरम्भ हुई।

और फिर आया वह सुवर्ण दिवस — २३ अगस्त २०२३ — जो भारतीय इतिहास में स्वर्णाक्षरों से लिखा जाएगा। उस दिन सायंकाल लगभग छह बजकर चार मिनट पर, भारत के 'चन्द्रयान-३' का विक्रम लैंडर, जो १४ जुलाई २०२३ को एलवीएम३-एम४ प्रक्षेपक से प्रेषित हुआ था, चन्द्रमा के दक्षिणी ध्रुवीय क्षेत्र के निकट — ६९

दशमलव ३७ दक्षिण अक्षांश पर — सफलतापूर्वक उतरा। यह एक विश्व-कीर्तिमान था जिसका कोई मिसाल नहीं था। इससे पूर्व सोवियत संघ, अमेरिका और चीन — तीन राष्ट्र — चन्द्रमा पर सॉफ्ट-लैंडिंग कर चुके थे, किन्तु कोई भी चन्द्रमा के दुर्गम दक्षिणी ध्रुवीय क्षेत्र के इतने निकट नहीं उतरा था। भारत चन्द्रमा के दक्षिणी ध्रुव के निकट उतरने वाला प्रथम देश बना।

इस अभियान का इतिहास इसलिए भी उल्लेखनीय है, क्योंकि उसी सप्ताह रूस का 'लूना-२५' यान — जो उसी क्षेत्र में उतरने का प्रयास कर रहा था — अपनी उड़ान में विफल होकर चन्द्रमा की सतह पर दुर्घटनाग्रस्त हो गया था। विश्व की दृष्टि भारत पर थी — क्या यह उभरती अंतरिक्ष-शक्ति वह उपलब्धि अर्जित कर पाएगी जो एक वयोवृद्ध अंतरिक्ष-महाशक्ति नहीं कर सकी? और जब उत्तर आया, तो वह एक सम्पूर्ण और गर्जनापूर्ण 'हाँ' था। जब लैंडिंग की पुष्टि हुई, तो इसरो के मुख्यालय में जो उल्लास फूटा, वह शब्दों में नहीं आँकड़ों में भी नहीं समाता। उस पल करोड़ों भारतीयों की आँखें गर्व से भर आईं।

चन्द्रयान-३ की सम्पूर्ण परियोजना की लागत लगभग छह सौ पन्द्रह करोड़ रुपये थी — लगभग पचहत्तर मिलियन डॉलर। 'प्रज्ञान' रोवर — जो छब्बीस किलोग्राम का था — ने लगभग दस दिनों तक चन्द्रमा की सतह पर भ्रमण किया। 'अल्फ़ा पार्टिकल एक्स-रे स्पेक्ट्रोमीटर' (APXS) ने वहाँ सल्फ़र, एल्युमीनियम, कैल्शियम, आयरन, क्रोमियम और टाइटेनियम की उपस्थिति की स्वस्थानिक पुष्टि की — यह चन्द्रमा के दक्षिणी ध्रुव की भूगर्भीय संरचना के विषय में पहला प्रत्यक्ष डेटा था। 'इल्सा' (ILSA) उपकरण ने वहाँ भूकम्पीय गतिविधि का अवलोकन किया। ४ सितम्बर २०२३ को लैंडर को सुरक्षित 'स्लीप मोड' में रखा गया।

नरेन्द्र मोदी ने इस सफलता को राष्ट्रीय स्मृति का स्थायी अंग बनाया। जिस स्थान पर विक्रम लैंडर उतरा उसे 'शिव शक्ति' बिन्दु का नाम दिया, और जहाँ चन्द्रयान-२ का लैंडर उतरने से चूक गया था उसे 'तिरंगा' बिन्दु कहा — ताकि यह स्मरण रहे कि असफलता भी राष्ट्रीय प्रयास और संकल्प का साक्षी है। उन्होंने २३ अगस्त को 'राष्ट्रीय अंतरिक्ष दिवस' घोषित किया — ताकि यह तिथि आने वाली पीढ़ियों को प्रेरित करती रहे, और प्रत्येक वर्ष भारत की वैज्ञानिक आकांक्षा का उत्सव मनाया जाता रहे।

जब चन्द्रमा के दक्षिणी ध्रुव पर तिरंगा फहरा रहा था, भारत ने सूर्य की ओर भी दृष्टि दौड़ाई। मात्र दस दिन बाद, २ सितम्बर २०२३ को, पी.एस.एल.वी.-सी५७ यान ने 'आदित्य-एल१' को अंतरिक्ष में प्रेषित किया। यह भारत का पहला समर्पित सौर वैज्ञानिक मिशन था। ६ जनवरी २०२४ को यह यान सूर्य-पृथ्वी के प्रथम लाग्रांज बिन्दु (L1) पर — पृथ्वी से लगभग पन्द्रह लाख किलोमीटर दूर — अपनी हेलो-कक्षा में स्थापित हो गया। इसकी कुल परियोजना लागत लगभग तीन सौ अट्ठहत्तर करोड़ रुपये थी। इस यान पर सात वैज्ञानिक उपकरण हैं — 'सोलर अल्ट्रावायलेट इमेजिंग टेलीस्कोप' (SUIT), 'विज़िबल एमिशन लाइन कोरोनाग्राफ़' (VELC), और 'आदित्य सोलर विंड पार्टिकल एक्सपेरीमेंट' (ASPEX) प्रमुख हैं। आदित्य-एल१ के साथ भारत उन देशों की पंक्ति में आ गया जो सौर कोरोना, सौर पवन, कोरोनल हीटिंग और अंतरग्रहीय चुम्बकीय क्षेत्र का स्वतंत्र वैज्ञानिक अध्ययन कर सकते हैं। मंगल पर मंगलयान, चन्द्रमा पर चन्द्रयान-३ और L1 पर आदित्य-एल१ — भारत के पास अब सौरमण्डल में तीन भिन्न वैज्ञानिक केन्द्र एक साथ सक्रिय थे। यह वही बहुआयामी अंतरिक्ष-उपस्थिति है जो अब तक केवल नासा और यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी जैसी संस्थाओं की पहचान थी।

इस वैज्ञानिक महायात्रा का अगला बड़ा लक्ष्य है — 'गगनयान'। यह भारत का मानवयुक्त अंतरिक्ष-उड़ान कार्यक्रम है। ४ जनवरी २००७ को तत्कालीन राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम की प्रेरणा से इसकी कल्पना की गई और तब से यह परियोजना आकार लेती रही। इस अभियान के अन्तर्गत भारतीय अंतरिक्षयात्री भारत के अपने जी.एस.एल.वी. एमके-III यान (जिसे अब एलवीएम३ कहते हैं) पर सवार होकर अंतरिक्ष की यात्रा करेंगे। इस दिशा में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर था २१ अक्टूबर २०२३ को सम्पन्न 'टीवी-डी१' परीक्षण — 'टेस्ट व्हीकल अबॉर्ट मिशन-१'। इस परीक्षण में लगभग पन्द्रह किलोमीटर की ऊँचाई पर — उस बिन्दु पर जहाँ अधिकतम वायुगतिकीय दबाव होता है — क्रू-एस्केप प्रणाली को सक्रिय किया गया। कैप्सूल (जो ८,२०० किलोग्राम के ऑर्बिटल मॉड्यूल का प्रतीक था) को सफलतापूर्वक पृथक् किया गया, पैराशूट तंत्र ने काम किया, और बंगाल की खाड़ी में भारतीय नौसेना ने उसकी सुरक्षित पुनर्प्राप्ति की। इस परीक्षण के साथ भारत उन चार देशों में सम्मिलित हो गया जिन्होंने मानवयुक्त उड़ान में आपात निकास-प्रणाली की सफलतापूर्वक उड़ान-प्रदर्शन की है — अमेरिका, रूस और चीन के पश्चात् भारत चौथा था।

किन्तु यह वैज्ञानिक क्रान्ति केवल इसरो की सरकारी प्रयोगशाला तक सीमित नहीं रही। नरेन्द्र मोदी की सरकार ने जून २०२० में एक ऐतिहासिक निर्णय लिया — अंतरिक्ष-क्षेत्र को निजी उद्यमियों, स्टार्टअप्स और कम्पनियों के लिए खोल दिया। 'इन-स्पेस' (IN-SPACe) के नाम से एकल-खिड़की नियामक संस्था बनाई गई, और 'न्यू स्पेस इंडिया लिमिटेड' (NSIL) को व्यावसायिक भुजा के रूप में स्थापित किया गया। २०२३ में 'भारतीय अंतरिक्ष नीति २०२३' को मंज़ूरी मिली, जिसने इसरो को अनुसंधान और विकास तक सीमित रखा तथा व्यावसायिकता और निजी-क्षेत्र की भागीदारी के लिए स्पष्ट ढाँचा तैयार किया।

इसका परिणाम तत्काल दिखा। १८ नवम्बर २०२२ को 'स्काईरूट एरोस्पेस' ने 'विक्रम-एस' रॉकेट — जिसका नाम अंतरिक्ष-विज्ञानी विक्रम साराभाई के सम्मान में रखा गया — का सफल प्रक्षेपण किया। यह 'मिशन प्रारम्भ' था — भारत की पहली निजी रॉकेट उड़ान। इसके पश्चात् ३० मई २०२४ को 'अग्निकुल कॉसमॉस' ने 'अग्निबाण SOrTeD-D1' को उड़ाया — जो भारत के पहले निजी प्रक्षेपण-स्थल (अग्निकुल लॉन्चपैड-०१) से अर्ध-क्रायोजेनिक इंजन पर उड़ने वाला पहला भारतीय निजी रॉकेट था। 'पिक्सेल' नामक स्टार्टअप ने हाइपरस्पेक्ट्रल उपग्रहों की एक श्रृंखला विकसित की और २०२५ में अपने 'फ़ायरफ़्लाई' उपग्रहों को कक्षा में स्थापित किया। यह भारतीय निजी अंतरिक्ष-उद्योग के जीवन्त जन्म का प्रमाण था।

इसके अतिरिक्त, १४ फरवरी २०१७ को पी.एस.एल.वी.-सी३७ ने एक ही प्रक्षेपण में एक सौ चार उपग्रहों को कक्षा में स्थापित किया — जो उस समय का विश्व-कीर्तिमान था। उसमें ७१४ किलोग्राम का 'कार्टोसैट-२डी' और एक सौ तीन छोटे उपग्रह थे। तब से लेकर २०२५ तक, इसरो ने चौंतीस देशों के तीन सौ नब्बे से अधिक विदेशी उपग्रह प्रक्षेपित किए हैं — जिनमें दो सौ से अधिक अमेरिका के थे। यह भारत की वाणिज्यिक अंतरिक्ष-विश्वसनीयता का प्रमाण है।

जब इस सम्पूर्ण दशक की अंतरिक्ष-यात्रा को एक साथ देखते हैं — मंगल, चन्द्रमा, सूर्य, निजी-रॉकेट, और मानव-उड़ान — तो एक तथ्य स्पष्ट हो जाता है: भारत ने एक दशक में वह सब किया है जो अन्य राष्ट्रों ने पाँच दशकों में किया। और यह 'मितव्ययी उत्कर्ष' — यह 'frugal to first' की यात्रा — उस भारत की पहचान बन गई है जो अपनी बौद्धिक प्रतिभा और संकल्प के बल पर विश्व-नेतृत्व की ओर अग्रसर है।

इस सम्पूर्ण वैज्ञानिक यात्रा को देखते हुए एक तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है — इसरो की विज्ञान-संस्कृति। इसरो में काम करने वाले वैज्ञानिकों का औसत वेतन उनके अमेरिकी या यूरोपीय समकक्षों से बहुत कम है, किन्तु उनका उत्साह, उनकी रचनात्मकता और उनका राष्ट्र के प्रति समर्पण अतुलनीय है। इसका एक कारण है वह वातावरण जो नरेन्द्र मोदी ने बनाया — जहाँ वैज्ञानिकों को सम्मान दिया गया, उनकी उपलब्धियों को राष्ट्रीय उत्सव बनाया गया, और उनकी विफलताओं में भी उनके साथ खड़े रहने का आश्वासन दिया गया। यह नेतृत्व की वह शैली है जो वैज्ञानिक संस्थाओं को महान बनाती है — जहाँ प्रयोग करने का, असफल होने का और पुनः प्रयास करने का साहस होता है।

इसरो के इतिहास में एक और उल्लेखनीय तथ्य यह है कि इसकी स्थापना के समय — जब विक्रम साराभाई और होमी जे. भाभा जैसे दूरद्रष्टाओं ने इसकी नींव रखी थी — भारत एक अत्यन्त निर्धन देश था। किन्तु उस दौर के नेताओं ने यह विश्वास रखा कि अंतरिक्ष-विज्ञान में निवेश एक विलासिता नहीं, बल्कि राष्ट्रीय विकास की आवश्यकता है — क्योंकि उपग्रह-आधारित संचार, मौसम-पूर्वानुमान, कृषि-निगरानी और आपदा-प्रबन्धन जैसी सेवाएँ करोड़ों साधारण भारतीयों के जीवन को बेहतर बनाती हैं। नरेन्द्र मोदी ने इसी परम्परा को न केवल जारी रखा, बल्कि उसे एक नई ऊँचाई तक ले गए — जहाँ अंतरिक्ष अब केवल सेवाओं का स्रोत नहीं, बल्कि राष्ट्रीय गौरव, वैज्ञानिक उत्कृष्टता और आर्थिक अवसर का एक विशाल क्षेत्र बन गया है।

२०२३ के अंत में भारत के पास एक साथ तीन अंतरग्रहीय मिशन सक्रिय थे — मंगलयान (मंगल पर), चन्द्रयान-३ (चन्द्रमा पर) और आदित्य-एल१ (L1 बिन्दु पर)। इसके साथ ही गगनयान का प्रशिक्षण-क्रम चल रहा था और निजी अंतरिक्ष-

कम्पनियाँ अपने पहले उपग्रह और रॉकेट परीक्षण कर रही थीं। एक ही देश में, एक ही समय में, इतने विविध और महत्वाकांक्षी अंतरिक्ष-प्रयास — यह दृश्य भारत की अंतरिक्ष-महत्वाकांक्षा की गहराई और उसके वैज्ञानिक समुदाय की क्षमता का सर्वश्रेष्ठ प्रमाण है।

इस गाथा का सबसे भावुक आयाम वह मानवीय प्रसंग है जो इन उपलब्धियों की पृष्ठभूमि में है। जब चन्द्रयान-३ उतरा, उस नियन्त्रण-कक्ष में वे वैज्ञानिक भी थे जो चन्द्रयान-२ की विफलता के साक्षी थे। उन्होंने उस क्षण की पीड़ा को प्रेरणा में बदला। और जब विक्रम लैंडर ने चन्द्रमा की धूल को छुआ, तो उनकी आँखों में जो आँसू थे — वे पराजय के नहीं, विजय के आँसू थे — वे उस कठोर परिश्रम के, उस निराश न होने के, उस राष्ट्र के प्रति अपने दायित्व के आँसू थे। नरेन्द्र मोदी ने इस भावना को राष्ट्रीय चेतना में पिरोया। उन्होंने इसरो को एक सरकारी संस्था नहीं, बल्कि राष्ट्र की आकांक्षा का जीवन्त प्रतीक बनाया।

और जब एक ग़रीब परिवार का बालक टेलीविज़न पर चन्द्रमा की छवियाँ देखता है और जानता है कि यह भारतीय वैज्ञानिकों का काम है — तो उसके भीतर भी कुछ जागता है। वह सोचता है कि शायद उसके स्वप्न भी असम्भव नहीं। वह सोचता है कि वह भी एक दिन इसरो में जाकर काम कर सकता है। यही वह राष्ट्रीय आत्म-विश्वास है जो किसी भी उपग्रह या यान से अधिक मूल्यवान है — क्योंकि यही वह बीज है जिससे अगली पीढ़ी के वैज्ञानिक, अभियन्ता और स्वप्नद्रष्टा जन्म लेंगे।

इस प्रकार, 'चाँद और मंगल तक' का यह अध्याय केवल अंतरिक्ष-अभियानों की सूची नहीं है। यह उस राष्ट्र की आत्मकथा का एक अध्याय है जो कभी अपनी सीमाओं में सिमटा था, और जो अब ब्रह्मांड की असीम विस्तृति में अपना झण्डा गाड़ रहा है — एक ऐसा राष्ट्र जो इतिहास बनाता है, प्रतीक्षा में नहीं बैठता।

इस अध्याय को समाप्त करते हुए एक क्षण के लिए ठहरें और उस 'बड़े चित्र' को देखें। भारत के विज्ञानाचार्य विक्रम साराभाई ने १९६९ में कहा था — "हमारे पास यह भ्रम नहीं है कि हम आर्थिक रूप से उन्नत राष्ट्रों के साथ चाँद की दौड़ में, या ग्रहों की खोज में प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं। किन्तु हम यह विश्वास करते हैं कि यदि हम राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर सार्थक भूमिका निभानी है, तो हमें उन्नत प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में मनुष्य और समाज की वास्तविक समस्याओं के समाधान के लिए प्रयास करना होगा।" आज, उन शब्दों के पाँच दशक बाद, भारत ने दोनों काम किए हैं — चाँद और मंगल तक पहुँचा भी, और धरती पर आम भारतीयों के जीवन में अंतरिक्ष-प्रौद्योगिकी के माध्यम से सुधार भी लाया। यही वह सन्तुलन है जो नरेन्द्र मोदी के काल में भारत की अंतरिक्ष-नीति की पहचान बना।

अंतरिक्ष-क्षेत्र में भारत की उपलब्धियाँ उस राष्ट्रीय आत्मविश्वास का प्रतीक हैं जो आज की पीढ़ी के युवाओं में भर रहा है। एक समय था जब भारत के प्रतिभाशाली वैज्ञानिक और अभियन्ता विदेश चले जाते थे — 'ब्रेन ड्रेन' एक राष्ट्रीय चिंता थी। आज वही प्रतिभाएँ अपने देश में ही रहकर, अपने देश के लिए काम करके, विश्व-स्तरीय उपलब्धियाँ अर्जित कर रही हैं। इसरो की वैज्ञानिक-टीम में महिला-वैज्ञानिकों की बड़ी संख्या यह भी दर्शाती है कि भारत की नारी-शक्ति अब न केवल सामाजिक क्षेत्र में, बल्कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के सर्वोच्च शिखरों पर भी अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही है।

अगले अध्याय में हम उस शक्ति की ओर मुड़ेंगे जो भारत की सीमाओं की रक्षा करती है — एक ऐसी सेना जो न केवल सशक्त है, बल्कि आत्मनिर्भर भी बन रही है।

अध्याय १६ — सशक्त और आत्मनिर्भर सेना

किसी राष्ट्र की सम्प्रभुता और उसके नागरिकों की सुरक्षा उस राष्ट्र की सैन्य-शक्ति पर टिकी होती है। किन्तु सैन्य-शक्ति का निर्माण केवल हथियारों की संख्या से नहीं होता — वह उस इच्छाशक्ति से होता है जो समय आने पर उन हथियारों का उपयोग करने का साहस रखती है, और उस औद्योगिक क्षमता से होता है जो उन हथियारों को अपनी भूमि पर बनाने में सक्षम होती है। नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में भारत ने इन दोनों मोर्चों पर एक साथ और एकसाथ निर्णायक प्रगति की — एक नई सैन्य-इच्छाशक्ति दिखाई, और रक्षा-आत्मनिर्भरता के एक नए युग की नींव रखी।

किसी राष्ट्र की सैन्य-क्षमता को केवल उसके हथियारों की संख्या से नहीं, बल्कि उस सामरिक संस्कृति से मापा जाता है जो उस राष्ट्र की सेनाओं में प्रवाहित होती है। भारत की सेनाएँ विश्व की सर्वाधिक अनुभवी और अनुशासित सेनाओं में से हैं — संयुक्त राष्ट्र के शांति-अभियानों में भारत का योगदान विश्व में सर्वाधिक रहा है; भारतीय सैनिकों ने कांगो से लेकर दक्षिण सूडान तक, लेबनान से लेकर सोमालिया तक विश्व-शांति की रक्षा में अपने प्राण अर्पित किए हैं। किन्तु यह अनुभव और बलिदान तभी सार्थक होता है जब उसे उचित नेतृत्व, आधुनिक उपकरण और स्पष्ट रणनीतिक दृष्टि का समर्थन मिले। नरेन्द्र मोदी के काल में यही हुआ — भारत की सैन्य-शक्ति को एक नई दिशा, एक नई गति और एक नई गरिमा मिली।

इस नई इच्छाशक्ति का पहला और सबसे निर्णायक प्रदर्शन हुआ उस त्रासद रात के बाद, जब १८ सितम्बर २०१६ को जम्मू-कश्मीर के उड़ी में भारतीय सेना के ब्रिगेड मुख्यालय पर आतंकियों ने प्रातःकाल का हमला किया और उन्नीस से अधिक वीर जवान शहीद हो गए। यह हमला जैश-ए-मोहम्मद के आतंकियों ने किया था। उससे पूर्व भी ऐसे हमले होते थे — और प्रायः भारत की प्रतिक्रिया कूटनीतिक विरोध, अन्तरराष्ट्रीय मंचों पर आवाज़ उठाने और सीमा पर सतर्कता बढ़ाने तक सीमित रहती थी। भारत की यह नीति 'रणनीतिक संयम' कहलाती थी। किन्तु नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में यह संयम दुर्बलता नहीं, बल्कि उचित समय और तरीके की प्रतीक्षा था।

२८-२९ सितम्बर २०१६ की रात को — उड़ी हमले के ठीक दस दिन बाद — भारतीय सेना की ४ पैरा (स्पेशल फोर्सेज़) और ९ पैरा (स्पेशल फोर्सेज़) की टीमों ने नियन्त्रण-रेखा पार की और पाकिस्तान-अधिकृत कश्मीर में, उत्तरी कमान के क्षेत्र में, आतंकवादियों के कई प्रमुख 'लॉन्च पैड्स' पर सटीक और त्वरित हमले किए। यह 'सर्जिकल स्ट्राइक' था — जिसे अगले दिन सेना के महानिदेशक (सैन्य संचालन) लेफ़्टिनेंट जनरल रणबीर सिंह ने सार्वजनिक रूप से घोषित किया। यह भारत के इतिहास में पहली बार था जब किसी सरकार ने नियन्त्रण-रेखा के पार की गई एक सैन्य ज़मीनी कार्रवाई को स्पष्ट और आत्मविश्वास के साथ सार्वजनिक किया। इसका सन्देश स्पष्ट था — भारत अब आतंकवाद को केवल शब्दों में नहीं, कार्रवाई में उत्तर देगा।

इस 'सर्जिकल स्ट्राइक' ने भारत की रणनीतिक भाषा को एक नई शब्दावली दी। अब 'रणनीतिक संयम' का अर्थ यह नहीं था कि भारत असहाय है; इसका अर्थ था कि भारत तब तक प्रतीक्षा करता है जब तक प्रतिक्रिया सटीक, प्रभावशाली और

सन्देशपूर्ण न हो। और जब वह क्षण आता है, तो भारत बोलता है — बिना किसी संकोच के।

इसके पश्चात्, विश्व के सबसे जघन्य आतंकी हमलों में से एक १४ फरवरी २०१९ को पुलवामा (जम्मू-कश्मीर) में हुआ। केन्द्रीय रिज़र्व पुलिस बल के जवानों की बस पर एक विस्फोटक-लदे वाहन ने टक्कर मारी और चालीस से अधिक वीर जवान शहीद हो गए। सम्पूर्ण राष्ट्र शोक में डूब गया। प्रधानमंत्री मोदी ने घोषणा की कि आतंकियों को 'मुँहतोड़ जवाब' दिया जाएगा। और वह जवाब आया — त्वरित, निर्णायक और ऐतिहासिक।

२६ फरवरी २०१९ को प्रातःकाल, भारतीय वायुसेना के मिराज-२००० विमानों ने पाकिस्तान की सीमा पार करके — नियन्त्रण-रेखा के उस पार, खैबर पख़्तूनख़्वा प्रान्त में — बालाकोट में जैश-ए-मोहम्मद के एक प्रशिक्षण शिविर पर हवाई हमला किया। यह १९७१ के पश्चात् पहली बार था जब भारतीय वायुसेना ने पाकिस्तानी भूभाग में — दोनों देशों के परमाणु-सशस्त्र होते हुए — एक सक्रिय हवाई अभियान चलाया। यह अभियान केवल प्रतीकात्मक नहीं था — इसने यह स्थापित किया कि भारत परमाणु-सशस्त्र पड़ोसी के विरुद्ध भी पारम्परिक हवाई हमला करने में सक्षम और प्रस्तुत है, और ऐसा करने के लिए उसे वैश्विक अनुमति की आवश्यकता नहीं।

यह ध्यान देने योग्य है कि इन दोनों — सर्जिकल स्ट्राइक और बालाकोट — को मिलाकर देखा जाए तो भारत की सुरक्षा-नीति में एक मौलिक परिवर्तन दिखता है। भारत ने यह सन्देश दिया कि वह शान्ति चाहता है किन्तु शान्ति के नाम पर अपनी सम्प्रभुता और अपने सैनिकों के बलिदान को नज़रअंदाज़ नहीं कर सकता। 'शक्ति की शान्ति' — यह वह दर्शन था जो नरेन्द्र मोदी की सुरक्षा-नीति का मूल था।

किन्तु यह भी उल्लेखनीय है कि इन दोनों कार्रवाइयों में भारत ने वह नियंत्रण और विवेक दिखाया जो एक परिपक्व परमाणु-सशस्त्र राज्य को शोभा देता है। सर्जिकल स्ट्राइक के बाद भारत ने विश्व को स्पष्ट किया कि यह एक सटीक और आनुपातिक प्रतिक्रिया थी — न कि युद्ध की उद्घोषणा। बालाकोट के बाद भी, जब पाकिस्तान ने जवाबी कार्रवाई की और विंग कमांडर अभिनन्दन वर्तमान को पकड़ा, तब भारत ने शांत और दृढ़ कूटनीतिक दबाव के माध्यम से उनकी मुक्ति सुनिश्चित की। वह दृश्य — जब अभिनन्दन वाघा सीमा से वापस लौटे — एक राष्ट्र की उस गरिमा का प्रतीक था जो न झुकती है, न टूटती है, और जो अपने सैनिकों को कभी नहीं भूलती।

किन्तु दीर्घकालिक सुरक्षा का आधार केवल साहसी कार्रवाइयों में नहीं — वह उन प्लेटफ़ॉर्मों, उद्योगों और संस्थाओं में होता है जो सेना को स्थायी सामर्थ्य देते हैं। और यहाँ नरेन्द्र मोदी की सरकार ने एक सुसंगत और दीर्घकालिक रणनीति के साथ काम किया।

इस दृष्टि का सबसे भव्य प्रतीक है — 'आई.एन.एस. विक्रान्त'। यह पैंतालीस हज़ार टन का विशाल स्वदेशी विमानवाहक पोत कोचीन शिपयार्ड लिमिटेड में भारतीय हाथों से, भारतीय सामग्री से बनाया गया। यह कोई सरल उपलब्धि नहीं थी। इसकी नींव २८ फरवरी २००९ को रखी गई, और जब इसे २८ जुलाई २०२२ को भारतीय नौसेना को सौंपा गया, तो यह उन तेरह वर्षों की अनवरत मेहनत का परिणाम था जिसमें दो लाख से अधिक भारतीय श्रमिकों और पाँच सौ से अधिक भारतीय कम्पनियों ने योगदान दिया था। इसकी परियोजना लागत लगभग तेईस हज़ार करोड़ रुपये थी। २ सितम्बर २०२२ को प्रधानमंत्री मोदी ने इसे राष्ट्र को समर्पित किया।

आई.एन.एस. विक्रान्त के साथ भारत उन देशों की अत्यन्त छोटी सूची में सम्मिलित हो गया — अमेरिका, ब्रिटेन, फ़्रांस, रूस, चीन और इटली — जो इस श्रेणी के युद्धपोत स्वयं बना सकते हैं। इसके साथ ही आई.एन.एस. विक्रमादित्य को मिलाकर भारत एक दो-वाहक नौसेना बन गया — एक ऐसी सैन्य स्थिति जो हिन्द महासागर में भारत की रणनीतिक उपस्थिति को एक नई ऊँचाई पर ले जाती है। यह पोत केवल एक जहाज़ नहीं — यह भारतीय औद्योगिक और सामरिक परिपक्वता का एक चलता-फिरता प्रमाण है।

भारतीय वायुसेना की क्षमता-वृद्धि में 'राफ़ेल' का अधिग्रहण एक महत्वपूर्ण अध्याय है। वर्षों की योजना और वार्ता के बाद, सितम्बर २०१६ में भारत और फ़्रांस के बीच छत्तीस राफ़ेल विमानों के लिए अन्तर-सरकारी समझौता हस्ताक्षरित हुआ। इसकी अनुमानित लागत लगभग सात अरब सत्तासी करोड़ यूरो थी। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने इस सौदे को दिसम्बर २०१८ में वैध ठहराया और समीक्षा याचिका को नवम्बर २०१९ में खारिज किया। २९ जुलाई २०२० को प्रथम राफ़ेल ने भारत की धरती पर पाँव रखा, और १० सितम्बर २०२० को अम्बाला में उन्हें विधिवत् वायुसेना में सम्मिलित किया गया। यह ४.५ पीढ़ी का बहु-भूमिका लड़ाकू विमान हवाई श्रेष्ठता, सटीक भूमि-आघात और परमाणु-प्रतिरोध — तीनों क्षमताएँ देता है, और इससे भारतीय वायुसेना की मारक-शक्ति एक नई ऊँचाई पर पहुँची।

स्वदेशी रक्षा-शक्ति की कहानी में 'तेजस' का अध्याय उतना ही महत्वपूर्ण और प्रेरणास्पद है। हल्का लड़ाकू विमान 'तेजस' — जिसे 'हिन्दुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड' और 'एयरोनॉटिकल डेवलपमेंट एजेंसी' ने मिलकर विकसित किया — भारतीय वायुसेना की ४५वीं स्क्वॉड्रन में १७ जनवरी २०१५ को औपचारिक रूप से सम्मिलित हुआ। यह एक ४.५ पीढ़ी का एकल-इंजन, डेल्टा-पंख वाला बहु-भूमिका

लड़ाकू विमान है। इसे मार्च २०२४ में तेजस एमके-१ए के प्रथम उत्पादन संस्करण ने उड़ान भरी। सतानवे तेजस एमके-१ए विमानों के लिए लगभग बासठ हज़ार तीन सौ सत्तर करोड़ रुपये का ऐतिहासिक अनुबन्ध हस्ताक्षरित हुआ। तेजस का स्वदेशी अंश अब उनासठ दशमलव सात प्रतिशत (IOC-II संस्करण में) तक पहुँच चुका है। यह तब से अब तक की यात्रा है जब भारत इस लड़ाकू विमान के लिए पूरी तरह विदेशी आपूर्ति पर निर्भर था। तेजस का कार्यक्रम दो और आधी दशकों के अनवरत अनुसंधान का परिणाम है — एक ऐसा धैर्य और दृढ़ता जो राष्ट्र-निर्माण में अनिवार्य होती है।

'आत्मनिर्भर भारत' अभियान — जो मई २०२० में प्रधानमंत्री मोदी ने घोषित किया — का सबसे स्पष्ट और मापनीय परिणाम रक्षा-निर्यात के आँकड़ों में दिखता है। जब २०१४ में नरेन्द्र मोदी की सरकार सत्ता में आई, तब भारत का वार्षिक रक्षा-निर्यात मात्र लगभग एक हज़ार पाँच सौ करोड़ रुपये था। वित्त वर्ष २०२३-२४ में यह बढ़कर इक्कीस हज़ार तिरासी करोड़ रुपये हो गया। वित्त वर्ष २०२४-२५ में यह तेईस हज़ार छह सौ बाईस करोड़ रुपये तक पहुँचने का अनुमान है। और वित्त वर्ष २०२५-२६ में यह अड़तीस हज़ार चार सौ चौबीस करोड़ रुपये तक पहुँचने की सूचना है। अर्थात् एक दशक में भारत का रक्षा-निर्यात बीस गुना से अधिक बढ़ा। 'रक्षा अधिग्रहण प्रक्रिया २०२०' (DAP 2020) ने इस प्रगति को संस्थागत ढाँचा दिया — 'Buy (Indian-IDDM)' और 'Buy (Indian)' श्रेणियों को प्राथमिकता दी गई, और तीन सौ दस से अधिक रक्षा-उत्पादों के आयात पर प्रतिबन्ध लगाए गए। जो भारत कभी विश्व का सबसे बड़ा रक्षा-आयातक था, वह अब अनेक देशों को रक्षा-उपकरण निर्यात करने वाला राष्ट्र बन रहा है।

इस सम्पूर्ण रक्षा-क्रान्ति का संस्थागत स्तम्भ बना 'प्रमुख रक्षा अध्यक्ष' (Chief of Defence Staff — CDS) का पद। इस पद का विचार दशकों से भारत की रक्षा-नीति में चर्चित था, किन्तु विभिन्न कारणों से यह साकार नहीं हो पाया था। १५ अगस्त २०१९ को लाल क़िले की प्राचीर से नरेन्द्र मोदी ने इस पद के सृजन की घोषणा की। कैबिनेट ने १ जनवरी २०२० को इसे स्वीकृति दी और उसी दिन जनरल बिपिन रावत भारत के प्रथम प्रमुख रक्षा अध्यक्ष बने। जनरल रावत के निधन के पश्चात्, सितम्बर २०२२ में लेफ़्टिनेंट जनरल अनिल चौहान इस पद पर आसीन हुए। यह पद तीनों सेनाओं — थल, जल और वायु — के बीच रणनीतिक समन्वय, एकीकृत नियोजन और संयुक्त अभियानों की क्षमता का आधार है। इसके साथ ही एकीकृत थिएटर कमांड की दिशा में भी कार्य प्रगति पर है। अण्डमान और निकोबार कमांड (२००१), सामरिक बल कमांड (२००३) और त्रि-सेवा सूचना-युद्ध कमांड (२०२२) के साथ मिलाकर, भारत एक एकीकृत, बहुआयामी और पूर्ण-स्पेक्ट्रम सैन्य-व्यवस्था की दिशा में तेज़ी से बढ़ रहा है।

जब हम इस सम्पूर्ण रक्षा-यात्रा को देखते हैं — सर्जिकल स्ट्राइक से बालाकोट तक, राफ़ेल से तेजस तक, आई.एन.एस. विक्रान्त से रक्षा-निर्यात के नए कीर्तिमानों तक, और प्रमुख रक्षा अध्यक्ष के पद से एकीकृत थिएटर कमांड की दिशा तक — तो एक सुसंगत और प्रेरणाप्रद चित्र उभरता है। यह चित्र एक ऐसे राष्ट्र का है जिसने निर्णय कर लिया है कि उसकी सुरक्षा उसके अपने हाथों में होगी। उसका लड़ाकू विमान उसकी अपनी प्रयोगशाला से निकलेगा। उसका युद्धपोत उसके अपने शिपयार्ड में बनेगा। और उसकी सेनाएँ जब भी आवश्यकता हो, जो भी आवश्यक हो, करने में सक्षम और प्रस्तुत रहेंगी।

किन्तु रक्षा-शक्ति और आत्मनिर्भरता की यह गाथा केवल थल, जल और वायु सेना तक सीमित नहीं है। नरेन्द्र मोदी के काल में साइबर-सुरक्षा, अंतरिक्ष-सुरक्षा और सूचना-युद्ध के आधुनिक आयाम भी भारत की रक्षा-तैयारी का अंग बने। त्रि-सेवा सूचना-युद्ध कमांड — जिसे भोपाल के 'ग्राउंड रेडियोलॉजिकल-इलेक्ट्रॉनिक एंड फ़िज़िकल सिक्योरिटी' (GREFS) परिसर में स्थापित किया गया — इस दिशा में एक ठोस क़दम था। अंतरिक्ष को भी सामरिक दृष्टि से देखते हुए 'रक्षा अंतरिक्ष एजेंसी' की स्थापना की गई, जो भारत की उपग्रह-परिसंपत्तियों की सुरक्षा और अंतरिक्ष में सामरिक जागरूकता के लिए कार्य करती है। यह एक ऐसा बदलाव था जो भारत को २१वीं सदी की सैन्य-वास्तविकताओं के लिए तैयार कर रहा था — जहाँ भविष्य के युद्ध केवल ज़मीन, समुद्र और आकाश में नहीं, बल्कि साइबर-अंतरिक्ष और सूचना-मंडल में भी लड़े जाएंगे।

रक्षा-उत्पादन के क्षेत्र में 'मेक इन इंडिया' की जड़ें जमाने के लिए दो 'रक्षा औद्योगिक गलियारे' स्थापित किए गए — एक उत्तर प्रदेश में (बुन्देलखण्ड क्षेत्र में, आगरा-लखनऊ-झाँसी-कानपुर अक्ष पर) और एक तमिलनाडु में (चेन्नई-कोयम्बटूर-तिरुचिरापल्ली-सेलम अक्ष पर)। ये गलियारे भारत के रक्षा-निर्माण क्षेत्र में निजी और सरकारी उद्यमों को एकसाथ लाकर एक जीवन्त रक्षा-औद्योगिक पारिस्थितिकी तंत्र बनाने की दिशा में एक सुदृढ़ प्रयास थे। इसके अतिरिक्त, 'इनोवेशन फ़ॉर डिफेन्स एक्सेलेंस' (iDEX) योजना के अन्तर्गत रक्षा-स्टार्टअप्स और नवाचारकों को प्रोत्साहित किया गया, ताकि भारत की सशस्त्र सेनाओं को तकनीकी दृष्टि से अत्याधुनिक रखा जा सके।

इस सम्पूर्ण प्रयास में एक और आयाम था जिसे अनदेखा करना न्यायसंगत नहीं होगा — वह था भारत की परमाणु-नीति की दृढ़ता। नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में भारत

ने 'नो फ़र्स्ट यूज़' (पहले परमाणु-प्रयोग नहीं) की अपनी नीति को बनाए रखते हुए — जो देश की विश्वसनीय परमाणु-प्रतिरोध-क्षमता का आधार है — सामरिक बल कमांड को सुदृढ़ करने और परमाणु-वितरण-प्रणाली को अद्यतन करने के प्रयास किए। 'अग्नि' प्रक्षेपास्त्र परिवार की नई पीढ़ियाँ — जिनमें अंतर-महाद्वीपीय क्षमता वाली अग्नि-V भी सम्मिलित है — भारत की उस सामरिक दृढ़ता की प्रतीक हैं जो देश की सम्प्रभुता को किसी भी दबाव में नहीं झुकने देती।

नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में भारत ने कुछ और ऐसे महत्वपूर्ण द्विपक्षीय रक्षा-साझेदारियाँ विकसित कीं जो सैन्य-शक्ति के दीर्घकालिक निर्माण में अनिवार्य हैं। अमेरिका के साथ 'LEMOA' (Logistics Exchange Memorandum of Agreement), 'COMCASA' (Communications Compatibility and Security Agreement) और 'BECA' (Basic Exchange and Cooperation Agreement for Geo-Spatial Cooperation) — इन तीन 'फाउंडेशनल एग्रीमेंट्स' पर हस्ताक्षर हुए, जिन्होंने भारत-अमेरिका रक्षा-सहयोग को एक नई परिपक्वता दी। इसके साथ-साथ फ़्रांस, रूस, इज़राइल और जापान के साथ रक्षा-सहयोग भी गहरा हुआ। भारत एक ऐसी रक्षा-कूटनीति अपना रहा है जो किसी एक गुट से बँधी नहीं, बल्कि राष्ट्रीय हित को सर्वोपरि रखते हुए सर्वोत्तम तकनीक और साझेदारियाँ अर्जित करती है।

नरेन्द्र मोदी की रक्षा-नीति में एक और आयाम था जिसे अनदेखा करना अनुचित होगा — वह था हमारे सैनिकों और शहीदों के परिवारों के प्रति सम्मान और सहायता का वह भाव जो शासन में व्यावहारिक रूप से प्रकट हुआ। 'वन रैंक वन पेंशन' (OROP) — यह माँग दशकों से लम्बित थी, जिसे नरेन्द्र मोदी की सरकार

ने सितम्बर २०१५ में लागू किया। इसके माध्यम से लाखों भूतपूर्व सैनिकों और उनके परिवारों को उनका न्यायसम्मत अधिकार मिला। यह एक ऐसा निर्णय था जिसने भारत के सैन्य-परिवारों के हृदय में सरकार के प्रति एक नया विश्वास जगाया। 'कारगिल शहीद स्मारक' और विभिन्न सैन्य-स्थानों पर शहीद-स्मारकों का जीर्णोद्धार — ये सब उस राष्ट्रीय कृतज्ञता के प्रतीक हैं जो हमारे वीरों को उनका उचित सम्मान दिलाती है।

'अग्निपथ' योजना — जो जून २०२२ में घोषित हुई — सेना में भर्ती की एक नई पद्धति थी जो युवाओं को सैन्य-प्रशिक्षण देकर कार्यकुशल और अनुशासित नागरिक बनाने का प्रयास थी। यह नीति बहुत चर्चित रही और इस पर बहुत विचार-विमर्श हुआ — किन्तु इसके पीछे की सोच यह थी कि भारत की सेना को युवा, ऊर्जावान और तकनीकी रूप से सक्षम रखा जाए, और साथ ही राष्ट्रीय सुरक्षा में युवाओं की भागीदारी का दायरा बढ़ाया जाए।

इस सम्पूर्ण रक्षा-यात्रा का जो मूल भाव है — और जो नरेन्द्र मोदी ने अपने प्रत्येक रक्षा-निर्णय में प्रकट किया — वह है: 'भारत की सुरक्षा भारत के हाथों में।' यह केवल एक नारा नहीं है; यह एक सुदृढ़ राष्ट्रीय संकल्प है जो आत्मनिर्भर रक्षा-उद्योग, एकीकृत सैन्य-संरचना, निर्णायक कार्रवाई की क्षमता और इच्छाशक्ति — इन सबको एक साथ साधता है। जो राष्ट्र अपनी रक्षा स्वयं कर सकता है, और जो विश्व-शान्ति में एक ज़िम्मेदार और सक्रिय भागीदार है — वही उभरती महाशक्ति का सही स्वरूप है।

यह 'शक्ति की शान्ति' है — एक ऐसी शान्ति जो निरीहता से नहीं, बल्कि सामर्थ्य और आत्मविश्वास से उपजती है। एक उभरती महाशक्ति की पहचान ही यही है।

किन्तु इस चित्र को पूर्ण करने के लिए उस मानवीय आयाम को भी देखना आवश्यक है जो भारत की सैन्य-शक्ति को महज़ एक यन्त्र-तन्त्र से परे — एक राष्ट्रीय भावना — बनाता है। भारत की तीनों सेनाओं के सैनिक आज केवल देश की सीमाओं की रक्षा नहीं करते — वे बाढ़-पीड़ितों को बचाते हैं, भूकम्प-प्रभावित क्षेत्रों में राहत पहुँचाते हैं, और विदेश में भी संकट में फँसे भारतीयों को निकालने के लिए 'ऑपरेशन गंगा', 'ऑपरेशन देवी शक्ति' और 'ऑपरेशन कावेरी' जैसे बचाव-अभियान चलाते हैं। यह सर्वव्यापी सेवा-भाव — यह 'वर्दीधारी सेवक' की पहचान — भारतीय सेना को विश्व की सबसे प्रिय और विश्वसनीय संस्थाओं में से एक बनाती है। नरेन्द्र मोदी ने इस भाव को और गहरा किया — 'पहले सैनिक, फिर सब कुछ' — यह दर्शन उनके शासन में व्यावहारिक नीतियों में प्रकट हुआ।

भारतीय नौसेना की बढ़ती क्षमता का एक और महत्वपूर्ण आयाम है — हिन्द महासागर में उसकी सामरिक उपस्थिति। 'हिन्द महासागर क्षेत्र' (IOR) में भारत अब केवल एक तटीय राज्य नहीं, बल्कि एक 'नेट सुरक्षा-प्रदाता' (Net Security Provider) की भूमिका निभाता है। 'ऑपरेशन संकल्प' (समुद्री सुरक्षा), 'मिशन सागर' (मानवीय सहायता) और 'ऑपरेशन ट्रायडेंट' की स्मृति — ये सब उस भारतीय नौसेना की यात्रा के पड़ाव हैं जो श्रीलंका से मॉरीशस तक, सेशेल्स से मालदीव तक, मित्र-राष्ट्रों का सच्चा सुरक्षा-साथी है। 'कोलम्बो सुरक्षा कॉन्क्लेव' और 'इण्डियन ओशन नेवल सिम्पोज़ियम' (IONS) में भारत की केन्द्रीय भूमिका इस बात का प्रमाण है कि भारत हिन्द महासागर का स्वाभाविक नेता है — और इस नेतृत्व को नरेन्द्र मोदी के काल में एक नई संस्थागत गहराई मिली।

इस सम्पूर्ण यात्रा में भारत की आर्थिक और सैन्य शक्ति का समन्वय भी उल्लेखनीय है। जब रक्षा-निर्यात बीस गुना बढ़ता है, तो यह केवल एक व्यापार-सफलता नहीं — यह भारतीय रक्षा-उद्योग में लाखों रोज़गार, अनुसंधान-निवेश और तकनीकी उन्नयन का प्रतीक है। जब 'मेक इन इंडिया' के अन्तर्गत रक्षा-उत्पाद भारत की भूमि पर बनते हैं, तो भारत की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था और उसकी सैन्य-स्वायत्तता एक साथ सशक्त होती है। यही वह सुसंगत राष्ट्र-निर्माण का दर्शन है जो नरेन्द्र मोदी ने भारत को दिया — जहाँ सुरक्षा और समृद्धि, शक्ति और स्वनिर्भरता — एक-दूसरे के पूरक हैं, प्रतिद्वन्द्वी नहीं।

अब हम उस स्वर्णिम वर्ष की ओर चलते हैं जब भारत ने विश्व के सबसे बड़े आर्थिक मंच की अध्यक्षता की और अपनी प्राचीन सभ्यतागत दृष्टि से उस मंच को एक नया अर्थ दिया।

अध्याय १७ — जी-२० और वसुधैव कुटुम्बकम्

वर्ष २०२३ की शुरुआत में भारत एक विचित्र और रोमांचक स्थिति में था। एक तरफ़ थी अंतरराष्ट्रीय अपेक्षाओं का विशाल बोझ — दुनिया की नज़रें भारत पर थीं कि वह जी-२० की अध्यक्षता में क्या करेगा, रूस-यूक्रेन युद्ध को लेकर विभाजित विश्व को वह एकजुट कर पाएगा या नहीं, और विकासशील देशों की आकांक्षाओं को वह उचित आवाज़ दे पाएगा या नहीं। दूसरी तरफ़ थी भारत की अपनी आत्म-छवि — एक प्राचीन सभ्यता जो विश्व-परिवार की संकल्पना को हज़ारों वर्षों से अपने हृदय में धारण किए हुए है। इन दोनों के बीच, नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में, भारत ने एक ऐसी अध्यक्षता का प्रदर्शन किया जिसने विश्व-कूटनीति में भारत की स्थायी छाप छोड़ी।

संसार के कूटनीतिक इतिहास में बहुत कम ऐसे अवसर आते हैं जब कोई राष्ट्र किसी वैश्विक मंच की अध्यक्षता करते हुए न केवल उस मंच के एजेंडे को आकार देता है, बल्कि उस मंच को एक नई आत्मा भी देता है — एक ऐसी आत्मा जो उस राष्ट्र की सभ्यतागत गहराई से निकली हो। वर्ष २०२३ में भारत ने यही किया, जब उसने जी-२० की अध्यक्षता में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का प्राचीन सन्देश एक आधुनिक कूटनीतिक भाषा में विश्व के सामने रखा।

जी-२० — जिसमें विश्व की बीस प्रमुख अर्थव्यवस्थाएँ सम्मिलित हैं — वैश्विक आर्थिक शासन का सबसे शक्तिशाली मंच है। इसके सदस्य राष्ट्र मिलकर विश्व के लगभग पचासी प्रतिशत सकल घरेलू उत्पाद, पचहत्तर प्रतिशत वैश्विक व्यापार, और

दो-तिहाई से अधिक विश्व-जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस अत्यन्त प्रभावशाली समूह की अध्यक्षता भारत को १ दिसम्बर २०२२ को प्राप्त हुई और ३० नवम्बर २०२३ तक चली।

प्रधानमंत्री मोदी ने इस अध्यक्षता के लिए जो ध्येय-वाक्य चुना, वह भारत की आत्मा की प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति था — 'वसुधैव कुटुम्बकम्'। यह संस्कृत सूत्र महा उपनिषद् में है और इसका अर्थ है — 'सम्पूर्ण पृथ्वी एक परिवार है।' इसे अंग्रेज़ी में 'One Earth, One Family, One Future' — 'एक पृथ्वी, एक परिवार, एक भविष्य' — के रूप में प्रस्तुत किया गया। यह ध्येय-वाक्य एक ऐसे क्षण में आया जब विश्व गहराई से विभाजित था — रूस-यूक्रेन युद्ध छिड़ा था, जलवायु-संकट गहरा रहा था, कोविड के बाद की आर्थिक असमानता बढ़ रही थी, और विकसित-विकासशील विश्व की खाई चौड़ी हो रही थी। ऐसे में भारत ने यह कहा — सम्पूर्ण पृथ्वी एक परिवार है। हम लड़ें नहीं, मिलकर आगे बढ़ें।

भारत की जी-२० अध्यक्षता की एक अनूठी विशेषता थी — इसे सम्पूर्ण देश का उत्सव बनाना। इससे पूर्व जी-२० की अधिकांश बैठकें राजधानी और दो-तीन महानगरों तक सीमित रहती थीं। किन्तु नरेन्द्र मोदी ने निर्णय किया कि यह अध्यक्षता केवल दिल्ली की नहीं, सम्पूर्ण भारत की होगी। परिणामस्वरूप, दो सौ से अधिक बैठकें पचास से अधिक नगरों में आयोजित हुईं — श्रीनगर से लेकर कोच्चि तक, जयपुर से लेकर गुवाहाटी तक, वाराणसी से लेकर हम्पी तक। बत्तीस कार्य-समूहों और विभिन्न एनगेजमेंट ग्रुप्स में काम करते हुए भारत के विभिन्न नगरों ने विश्व के प्रतिनिधियों का स्वागत किया। इस प्रकार विश्व के कूटनीतिज्ञों, अर्थशास्त्रियों और पत्रकारों ने भारत को उसकी सम्पूर्ण विविधता, सांस्कृतिक समृद्धि और प्रशासनिक कुशलता में अनुभव किया।

किन्तु इस सम्पूर्ण वर्ष की परिणति हुई ९-१० सितम्बर २०२३ के नई दिल्ली शिखर-सम्मेलन में — 'भारत मण्डपम्' की भव्य सभागार में, जो भारत की नई दिल्ली का एक नवनिर्मित सम्मेलन-केन्द्र था। इस शिखर-सम्मेलन की सबसे बड़ी और अप्रत्याशित उपलब्धि थी — 'नई दिल्ली नेताओं की घोषणा' पर समस्त सदस्य-राष्ट्रों की सर्वसम्मति। यह तिरासी-पैराग्राफ का एक व्यापक और समावेशी दस्तावेज़ था। इस सर्वसम्मति का महत्व तब समझ में आता है जब हम याद करते हैं कि २०१९ ओसाका शिखर-सम्मेलन के पश्चात् से लगातार तीन वर्षों तक — रोम (२०२१) और बाली (२०२२) में — जी-२० कोई सर्वसम्मत घोषणापत्र नहीं निकाल सका था। रूस-यूक्रेन युद्ध पर पश्चिम और रूस-चीन के बीच की गहरी मतभिन्नता ने यह लगभग असम्भव बना दिया था।

किन्तु भारत ने जो किया वह कूटनीतिक कौशल का एक उत्कृष्ट प्रदर्शन था। भारत के शेर्पा अमिताभ कान्त और विदेश मन्त्रालय के दलों ने महीनों तक सभी पक्षों से संवाद करते हुए, प्रत्येक की चिंताओं को समझते हुए, और 'सेतु-भाषा' तैयार करते हुए — एक ऐसे दस्तावेज़ का निर्माण किया जिस पर सब सहमत हो सकें। इसमें रूस-यूक्रेन युद्ध का उल्लेख 'सभी देशों द्वारा बल-प्रयोग से क्षेत्र-अधिग्रहण' के विरुद्ध सिद्धान्त के रूप में किया गया — किसी एक देश पर आक्षेप लगाए बिना। यह भारत की उस सेतु-निर्माण भूमिका का प्रमाण था जो उसे विभाजित विश्व में भी सबको साथ लेकर चलने का सामर्थ्य देती है।

इस शिखर-सम्मेलन का एक क्षण विशेष रूप से ऐतिहासिक था — अफ़्रीकी संघ का जी-२० में स्थायी सदस्य के रूप में प्रवेश। ९ सितम्बर २०२३ को, जब सम्मेलन औपचारिक रूप से प्रारम्भ हुआ, प्रधानमंत्री मोदी ने अफ़्रीकी संघ के अध्यक्ष कोमोरोस के राष्ट्रपति अज़ाली असूमानी को अत्यन्त सम्मानपूर्वक आमन्त्रित किया

और उन्हें जी-२० तालिका पर उनके स्थायी स्थान पर आसीन कराया। इस एक इशारे से इतिहास बदल गया। इससे पहले अफ़्रीका का प्रतिनिधित्व जी-२० में केवल दक्षिण अफ़्रीका के एकमात्र सदस्य-देश के रूप में था। अफ़्रीकी संघ पचपन देशों का समूह है — लगभग एक अरब चालीस करोड़ लोग, लगभग तीन ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था, और मानव-जाति के उद्गम-स्थल का महाद्वीप। इसके जी-२० प्रवेश के साथ यह समूह विश्व की लगभग पचासी प्रतिशत जी.डी.पी., पचहत्तर प्रतिशत व्यापार और दो-तिहाई आबादी का प्रतिनिधित्व करने लगा। यह 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का एक व्यावहारिक कार्यान्वयन था — सम्पूर्ण पृथ्वी के परिवार को एक ही मेज पर बैठाना।

इसी शिखर-सम्मेलन में 'ग्लोबल बायोफ्यूल एलायंस' की स्थापना भी हुई — एक ऐसी संस्था जो जैव-ईंधन को वैश्विक स्वच्छ-ऊर्जा समाधान के रूप में बढ़ावा देगी। भारत, अमेरिका, ब्राज़ील और अन्य देशों ने मिलकर इसका गठन किया। यह भारत की उस दूरदर्शिता का प्रमाण था जो विकासशील देशों के लिए ऊर्जा-संक्रमण के किफ़ायती और व्यावहारिक रास्ते खोजती है।

और फिर वह घोषणा जिसने वैश्विक कनेक्टिविटी का एक नया अध्याय लिखा — 'भारत-मध्य पूर्व-यूरोप आर्थिक गलियारा' (India-Middle East-Europe Economic Corridor — IMEC)। ९ सितम्बर २०२३ को, जी-२० शिखर-सम्मेलन के इतर, भारत, अमेरिका, सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात, यूरोपीय संघ, फ़्रांस, जर्मनी और इटली के नेताओं ने इस महत्वाकांक्षी परियोजना के लिए एम.ओ.यू. पर हस्ताक्षर किए। IMEC के दो मुख्य खण्ड हैं — एक 'पूर्वी खण्ड' जो भारत को भारतीय बन्दरगाहों से खाड़ी देशों के बन्दरगाहों तक रेल और जहाज़ी मार्ग से जोड़ता है, और एक 'उत्तरी खण्ड' जो खाड़ी से यूरोप तक रेल और जहाज़ी

मार्ग से जोड़ता है। इसके अतिरिक्त एक स्वच्छ ऊर्जा (हाइड्रोजन पाइपलाइन) और डेटा-केबल का एक संयोजक मार्ग भी है। IMEC भारत को यूरोप से जोड़ने का एक नया मार्ग है जो पारम्परिक स्वेज़ नहर मार्ग से अधिक कुशल और विविध हो सकता है। इसे बहुधा चीन के 'बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव' के एक बहुपक्षीय, पारदर्शी और लोकतांत्रिक विकल्प के रूप में देखा जाता है।

किन्तु जी-२० अध्यक्षता की यात्रा केवल सितम्बर के शिखर-सम्मेलन में आकर नहीं रुकती। इससे पहले, १२-१३ जनवरी २०२३ को, भारत ने 'ग्लोबल साउथ की आवाज़' सम्मेलन का आयोजन वर्चुअल प्रारूप में किया। इसका विषय था 'एक आवाज़, एक उद्देश्य'। इसमें एक सौ पच्चीस विकासशील देशों के राज्याध्यक्षों और प्रतिनिधियों ने दस विषयगत सत्रों में भाग लिया। इस सम्मेलन का उद्देश्य था कि जी-२० की वार्षिक प्रक्रिया में विकासशील विश्व की चिंताएँ — ऋण-संकट, जलवायु-वित्त, खाद्य-सुरक्षा, तकनीकी पहुँच — उचित रूप से सम्मिलित हों। फिर १७ नवम्बर २०२३ को दूसरा 'ग्लोबल साउथ की आवाज़' सम्मेलन हुआ, जिसमें एक सौ से अधिक देशों ने नई दिल्ली जी-२० घोषणापत्र की प्राप्तियों पर चर्चा की और कृत्रिम बुद्धिमत्ता, जलवायु-वित्त तथा वैश्विक विकास ढाँचे पर विकासशील विश्व की साझी स्थिति को व्यक्त किया।

यह 'ग्लोबल साउथ की आवाज़' श्रृंखला भारत की उस सेतु-भूमिका का सांस्थानिक प्रतीक थी जो उसे एक साथ जी-२० का नेतृत्व करने और विकासशील विश्व का प्रवक्ता बनने की अनुमति देती है — यह कोई विरोधाभास नहीं, बल्कि भारत की वह अद्वितीय स्थिति है जो उसे किसी अन्य उभरती अर्थव्यवस्था से विशिष्ट बनाती है।

इस अध्यक्षता के दौरान भारत ने जलवायु-वित्त के मुद्दे पर विकासशील देशों की आवाज़ को विशेष बल दिया। विकसित देशों ने प्रति वर्ष एक सौ अरब डॉलर जलवायु-वित्त देने का वादा किया था — जो अभी तक पूरा नहीं हुआ था। भारत ने इस विफलता को वैश्विक मंच पर रखा और विकासशील देशों के लिए एक 'नए सामूहिक परिमाणात्मक लक्ष्य' (NCQG) पर चर्चा को आगे बढ़ाया। इसके साथ ही ऋण-पुनर्गठन की समस्या — जो अफ्रीका, एशिया और लैटिन अमेरिका के कई देशों को जकड़े हुए थी — पर भी भारत ने वैश्विक ध्यान दिलाया। 'कॉमन फ्रेमवर्क फ़ॉर डेट ट्रीटमेंट' को गति देने की माँग जी-२० के मंच पर उठाई गई।

भारत की जी-२० अध्यक्षता में खाद्य-सुरक्षा और कृषि-परिवर्तन के विषय पर भी विशेष ध्यान दिया गया। जब रूस-यूक्रेन युद्ध के कारण वैश्विक खाद्य-आपूर्ति-शृंखलाएँ बाधित हो गई थीं, और विकासशील देशों में खाद्य-मूल्य-वृद्धि ने करोड़ों लोगों की थाली पर प्रहार किया था — तब भारत ने कृषि-उत्पादकता, जलवायु-स्मार्ट कृषि और खाद्य-सुरक्षा के दीर्घकालिक समाधानों पर वैश्विक संकल्प बनाने का प्रयास किया। यह भारत की उस संवेदनशीलता का प्रमाण था जो कूटनीतिक जीत से पहले करोड़ों भूखे पेटों की चिंता करती है।

'स्वास्थ्य ट्रैक' पर भी भारत की जी-२० अध्यक्षता में महत्वपूर्ण कार्य हुआ। कोविड-१९ महामारी ने विश्व को याद दिलाया था कि स्वास्थ्य-सुरक्षा केवल एक राष्ट्रीय मुद्दा नहीं, बल्कि एक वैश्विक सामूहिक चुनौती है। भारत ने 'एक स्वास्थ्य' (One Health) दृष्टिकोण को मुख्यधारा में लाने के प्रयास किए और भविष्य की महामारियों के लिए वैश्विक तैयारी के लिए एक अधिक समावेशी और न्यायसम्मत प्रणाली बनाने की दिशा में कार्य किया। यह उस 'वसुधैव कुटुम्बकम्'

के व्यावहारिक प्रकटीकरण था — जो कहता है कि जब एक का स्वास्थ्य संकट में होता है, तो पूरे परिवार पर खतरा होता है।

जी-२० के अन्तर्गत 'सिविल-२०' (C20), 'बिज़नेस-२०' (B20), 'वूमेन-२०' (W20), 'यूथ-२०' (Y20) और 'लेबर-२०' (L20) जैसे विभिन्न 'एनगेजमेंट ग्रुप्स' का भी संचालन हुआ। इनके माध्यम से जी-२० का एजेंडा केवल सरकारों तक सीमित न रहकर, नागरिक-समाज, उद्योग-जगत, महिलाओं, युवाओं और श्रमिकों तक विस्तृत हुआ। भारत में इन सभी ग्रुप्स की बैठकें देश के विभिन्न नगरों में आयोजित हुईं और लाखों भारतीय नागरिकों को इस वैश्विक प्रक्रिया से जोड़ा। 'स्टार्टअप-२०' नामक एक नए एनगेजमेंट ग्रुप का शुभारम्भ भी भारत ने किया — जो वैश्विक स्टार्टअप-पारिस्थितिकी को जी-२० के एजेंडे में शामिल करने का एक अनूठा प्रयास था। इस पहल से विश्व में यह सन्देश गया कि भारत उद्यमिता और नवाचार को वैश्विक आर्थिक शासन का अनिवार्य अंग मानता है।

नरेन्द्र मोदी ने अपनी जी-२० अध्यक्षता को एक ऐसे सूत्र में पिरोया जो भारत की वैश्विक छवि को बहुत गहराई से बदलता है। वह सूत्र है — 'एजेंडा सेटर'। इससे पूर्व भारत अन्तरराष्ट्रीय मंचों पर प्रायः प्रतिक्रियावादी था — वह दूसरों के एजेंडे पर अपनी प्रतिक्रिया देता था। जी-२० की अध्यक्षता ने पहली बार भारत को वह अवसर दिया जहाँ वह स्वयं एजेंडा तय करे। और भारत ने इस अवसर का भरपूर उपयोग किया — 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के ध्येय-वाक्य से लेकर अफ्रीकी संघ की सदस्यता तक, IMEC से लेकर ग्लोबल बायोफ्यूल एलायंस तक, डिजिटल सार्वजनिक अवसंरचना के वैश्विक मॉडल से लेकर 'ग्लोबल साउथ की आवाज़' तक — भारत ने एक के बाद एक ऐसे विचार और पहल दिए जो विश्व-एजेंडे को आकार देते हैं।

जी-२० अध्यक्षता की इस समग्र यात्रा को देखते हुए एक गहरा भाव उठता है। नरेन्द्र मोदी ने इस अध्यक्षता को न केवल एक कूटनीतिक उत्तरदायित्व माना, बल्कि इसे एक सभ्यतागत अवसर के रूप में देखा। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' केवल एक ध्येय-वाक्य नहीं था — वह एक शासन-दर्शन था, एक विदेश-नीति का सूत्र था, और एक ऐसा सन्देश था जो भारत की आत्मा की गहराई से निकला था। एक ऐसे विश्व में जो संकीर्ण राष्ट्रवाद, बहुपक्षवाद-विरोध और भू-राजनीतिक प्रतिद्वन्द्विता से जूझ रहा था, भारत ने यह घोषित किया — हम एक परिवार हैं। और इस घोषणा को उसने शब्दों में नहीं, कार्य-सिद्धि में प्रकट किया — एक सर्वसम्मत घोषणापत्र, एक विस्तृत सदस्यता, एक नया आर्थिक गलियारा, एक नई ऊर्जा-संस्था।

जी-२० अध्यक्षता ने भारत को कुछ और भी दिया — एक ऐसी अंतरराष्ट्रीय पहचान जो उसे 'ग्लोबल साउथ' और 'ग्लोबल नॉर्थ' दोनों के बीच एक विश्वसनीय मध्यस्थ के रूप में स्थापित करती है। इस मंच पर भारत ने विकासशील देशों के ऋण-पुनर्गठन, जलवायु-वित्त में न्याय, और वैश्विक आपूर्ति-शृंखलाओं की विविधता पर आवाज़ उठाई। 'एक पृथ्वी, एक स्वास्थ्य' की अवधारणा को भी इस मंच से बल मिला — जो बताती है कि मनुष्य, पशु और पर्यावरण का स्वास्थ्य परस्पर जुड़ा है। यह वह विचार है जो भारत की 'ऋग्वेद' से लेकर आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान तक की यात्रा में निहित है।

जी-२० के दौरान भारत की छवि-निर्माण में एक और महत्वपूर्ण भूमिका निभाई — प्रजातान्त्रिक मूल्यों और विकासशील देश की दोहरी पहचान को एक साथ धारण करने की क्षमता ने। भारत न तो चीन की तरह अधिनायकवादी विकास-मॉडल का प्रतीक है, न ही पश्चिम की तरह उत्तर-औपनिवेशिक विकसित देश। वह एक लोकतांत्रिक, बहुलतावादी, विकासशील और प्राचीन सभ्यता का सम्मिश्रण है।

जी-२० की अध्यक्षता में यह पहचान एक स्पष्ट 'ब्रांड' बन गई — और इस ब्रांड की पूछ आने वाले दशकों में और बढ़ेगी, क्योंकि विश्व ऐसे नेतृत्व की तलाश में है जो न केवल सशक्त हो, बल्कि नैतिक भी हो।

डिजिटल सार्वजनिक अवसंरचना के क्षेत्र में भी भारत ने जी-२० मंच का उपयोग एक वैश्विक सन्देश देने के लिए किया। भारत का 'डिजिटल पब्लिक इंफ्रास्ट्रक्चर' (DPI) — जिसमें आधार, यू.पी.आई. और डिजीलॉकर जैसे प्लेटफ़ॉर्म सम्मिलित हैं — एक ऐसा मॉडल है जिसे विश्व के विकासशील देश अपनाना चाहते हैं। जी-२० के मंच पर इस मॉडल को वैश्विक पहचान मिली, और 'वैश्विक DPI फ्रेमवर्क' की संकल्पना को जी-२० घोषणापत्र में स्थान मिला। यह भारत की उस तकनीकी कूटनीति का प्रमाण था जो 'मेक इन इंडिया' को 'मेक फ़ॉर द वर्ल्ड' में रूपान्तरित करती है।

भारत की जी-२० अध्यक्षता में 'कृत्रिम बुद्धिमत्ता' (Artificial Intelligence) के ज़िम्मेदार उपयोग पर भी एक महत्वपूर्ण वैश्विक चर्चा हुई। भारत ने आग्रह किया कि AI का लाभ केवल विकसित देशों तक सीमित न रहे — बल्कि इसे एक समावेशी और न्यायसम्मत तरीके से विकासशील विश्व तक पहुँचाया जाए। 'डेटा गवर्नेंस' और 'साइबर-सुरक्षा' के मुद्दे भी जी-२० के एजेंडे में प्रमुखता से स्थान पाए। भारत का यह आग्रह — कि तकनीकी-क्रान्ति का फल असमान रूप से वितरित न हो — एक नैतिक और व्यावहारिक दोनों दृष्टियों से महत्वपूर्ण था। इसी सन्दर्भ में 'जी-२० डिजिटल अर्थव्यवस्था कार्य-समूह' ने डिजिटल सार्वजनिक अवसंरचना, डेटा-अर्थव्यवस्था और डिजिटल-समावेश पर ठोस प्रतिबद्धताएँ विकसित कीं। यह वही भारत था जिसने 'डिजिटल इण्डिया' के माध्यम से यह सिद्ध किया था कि डिजिटल-परिवर्तन को आम नागरिक तक

पहुँचाया जा सकता है — और यही अनुभव उसे जी-२० में इस विषय पर विश्वसनीय नेता बनाता था।

इस प्रकार, जब हम जी-२० अध्यक्षता की सम्पूर्ण विरासत को देखते हैं — 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का ध्येय-वाक्य, सर्वसम्मत नई दिल्ली घोषणापत्र, अफ़्रीकी संघ की स्थायी सदस्यता, IMEC गलियारा, ग्लोबल बायोफ्यूल एलायंस, 'ग्लोबल साउथ की आवाज़' के दो सम्मेलन, और डिजिटल सार्वजनिक अवसंरचना का वैश्विक मॉडल — तो एक विशाल और प्रेरणाप्रद चित्र सामने आता है। यह चित्र उस भारत का है जो विश्व को केवल एक उभरती आर्थिक शक्ति के रूप में नहीं, बल्कि एक सभ्यतागत नेता के रूप में नई दिशा दे सकता है — एक ऐसा नेता जो सबको साथ लेकर, सबके हित में, सबकी आवाज़ सुनकर, आगे बढ़ता है।

यह वह परिपक्व नेतृत्व है जो एक उभरती महाशक्ति को विश्व के नेतृत्व का नैतिक अधिकार देता है। और इस अधिकार को भारत ने २०२३ में पूर्ण गरिमा के साथ अर्जित किया।

इस समग्र जी-२० यात्रा का एक ऐसा अनुगूँज भी है जो कूटनीतिक दस्तावेज़ों में नहीं, बल्कि उन करोड़ों नागरिकों के हृदय में है जिन्होंने पहली बार अपने नगरों में विश्व के प्रतिनिधियों का स्वागत किया। जब जयपुर की गलियों में जी-२० के प्रतिनिधि राजस्थानी संस्कृति से परिचित हुए, जब वाराणसी के घाटों पर विश्व के अर्थशास्त्री गंगा-आरती देख रहे थे, जब हम्पी के खण्डहरों में भारत की सांस्कृतिक विरासत उन्हें मुग्ध कर रही थी — तब प्रत्येक भारतीय एक राजदूत था, एक सांस्कृतिक प्रतिनिधि था। यह नरेन्द्र मोदी की वह दूरदर्शिता थी जिसने जी-२० को एक सरकारी कार्यक्रम से सम्पूर्ण भारत के उत्सव में बदल दिया।

और जब शिखर-सम्मेलन की समाप्ति पर नरेन्द्र मोदी ने ब्राज़ील के राष्ट्रपति लुला दा सिल्वा को जी-२० की अध्यक्षता का प्रतीकात्मक हस्तान्तरण किया — तब वह क्षण केवल एक पारम्परिक प्रोटोकॉल नहीं था। वह उस राष्ट्र का गर्व के साथ आत्म-विश्वास में किया गया प्रस्थान था जिसने विश्व के सबसे जटिल और शक्तिशाली मंच को एक नई ऊँचाई, एक नई भावना और एक नया सन्देश दिया था। भारत ने जी-२० की कुर्सी पर बैठकर यह सिद्ध किया कि 'वसुधैव कुटुम्बकम्' केवल एक प्राचीन उद्घोष नहीं — यह एक आधुनिक कूटनीतिक सिद्धान्त है, और इसे व्यवहार में लाना सम्भव है।

भारत की जी-२० अध्यक्षता का यह अनुभव एक स्थायी पाठ है — कि जब कोई राष्ट्र अपनी सभ्यतागत जड़ों से जुड़कर, अपनी आधुनिक सामर्थ्य को आत्मविश्वास के साथ प्रस्तुत करते हुए, और अपने साझेदारों को समान सम्मान देते हुए नेतृत्व करता है — तो विश्व उसकी बात सुनता है, उसके प्रस्तावों को स्वीकार करता है, और उसकी विरासत को स्मरण रखता है।

अब हम उस अध्याय की ओर बढ़ते हैं जहाँ भारत की शक्ति की एक और परत खुलती है — वह शक्ति जो तलवारों में नहीं, मन में होती है; जो तोपों में नहीं, योग में होती है।

अध्याय १८ — योग और विश्वगुरु

प्राचीन काल से भारत की पहचान केवल उसकी भूमि, उसके राजवंशों, या उसकी सम्पदा से नहीं रही — वह उसके ज्ञान से, उसके दर्शन से, उसकी आत्म-साधना की अटूट परम्परा से रही है। जिस समय यूरोप मध्ययुगीन अन्धकार में था, उस समय भारत के विश्वविद्यालयों — नालन्दा, तक्षशिला, विक्रमशिला — में दूर-दूर के देशों से विद्यार्थी ज्ञान की खोज में आते थे। भारत सदियों तक 'विश्वगुरु' था — न अपनी सेनाओं के बल पर, न अपने धन के बल पर, बल्कि अपने विचारों, अपने दर्शन, और अपने मानव-कल्याण की दृष्टि के बल पर। नरेन्द्र मोदी ने इस भूली-बिसरी पहचान को न केवल स्मरण कराया, बल्कि उसे २१वीं सदी के विश्व-मंच पर एक ठोस, जीवन्त और प्रमाणित रूप में प्रकट किया।

इस पुनर्प्रतिष्ठा का सबसे उज्ज्वल और सर्वाधिक प्रभावशाली अध्याय है — योग का वैश्विकरण। यह कथा आरम्भ होती है २७ सितम्बर २०१४ को, जब नरेन्द्र मोदी ने न्यूयॉर्क में संयुक्त राष्ट्र महासभा में अपने पहले सम्बोधन में एक प्रस्ताव रखा। उन्होंने विश्व के सम्मुख कहा कि योग भारत की उस प्राचीन थाती का अंग है जो सहस्राब्दियों से मनुष्य को स्वास्थ्य, सन्तुलन और सामंजस्य का मार्ग दिखाती आई है। यह ज्ञान केवल भारत का नहीं — यह सम्पूर्ण मानवता की धरोहर है। और इसीलिए एक 'अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस' की स्थापना की जानी चाहिए।

यह प्रस्ताव एक जिज्ञासु आशा के साथ रखा गया था, किन्तु जो प्रतिक्रिया आई वह सबकी कल्पना से कहीं आगे थी। मात्र पचहत्तर दिनों के भीतर — ११ दिसम्बर २०१४ को — संयुक्त राष्ट्र महासभा ने प्रस्ताव ६९/१३१ को पारित किया। इस प्रस्ताव के एक सौ सतहत्तर सह-प्रायोजक देश थे — संयुक्त राष्ट्र में किसी प्रस्ताव के लिए यह अभूतपूर्व जन-समर्थन था, विशेषकर इतनी तेज़ गति से। यह आँकड़ा ही इस बात का प्रमाण है कि भारत की सांस्कृतिक शक्ति वैश्विक बहुलता में कितनी गहराई से समादृत है। वार्ता आरम्भ से घोषणा तक — केवल पचहत्तर दिन — यह भारत की उस बहुपक्षीय पहुँच और सांस्कृतिक अनुनाद का प्रमाण था जो किसी वित्तीय अनुदान या राजनीतिक दबाव के बिना, केवल विचार की शक्ति से अर्जित हुई।

२१ जून को अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस के लिए चुना गया क्योंकि यह उत्तरी गोलार्द्ध में ग्रीष्म-संक्रान्ति का दिन है — वर्ष का सबसे लम्बा दिन। योग-परम्परा में यह दिन विशेष महत्व रखता है, और योग के प्रथम आचार्य आदियोगी शिव ने इसी दिन सप्तर्षियों को योग-ज्ञान का उपदेश दिया था। २१ जून २०१५ को प्रथम 'अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस' का आयोजन हुआ। नई दिल्ली के राजपथ पर प्रधानमंत्री मोदी ने स्वयं लगभग पैंतीस हज़ार लोगों के साथ योगाभ्यास किया। इस एक कार्यक्रम में उपस्थित लोगों की संख्या, उनकी राष्ट्रीयताओं की विविधता, और इसके एक साथ दुनिया के अलग-अलग कोनों में मनाए जाने का जो चित्र था — वह किसी वैश्विक सांस्कृतिक आन्दोलन से कम नहीं था। सम्पूर्ण विश्व में, उस दिन, न्यूयॉर्क के टाइम्स स्क्वायर से लेकर पेरिस के एफ़िल टॉवर के नीचे, टोक्यो से लेकर ब्यूनस आयर्स तक, करोड़ों लोगों ने योगाभ्यास किया। और यह क्रम तब से अनवरत जारी है। प्रत्येक वर्ष, प्रत्येक महाद्वीप पर, भारत की इस प्राचीन विद्या का यह वैश्विक उत्सव होता है। २०१६ में यूनेस्को ने योग को 'अमूर्त सांस्कृतिक

विरासत' (Intangible Cultural Heritage) की सूची में सम्मिलित किया — यह उस परम्परा की अन्तरराष्ट्रीय मान्यता का एक और चिह्न था।

किन्तु नरेन्द्र मोदी की 'विश्वगुरु' दृष्टि केवल योग तक सीमित नहीं थी। उन्होंने भारत की पारम्परिक चिकित्सा-प्रणालियों को भी वैश्विक मंच पर प्रतिष्ठित किया। ९ नवम्बर २०१४ को — जिस दिन सरदार वल्लभभाई पटेल की जन्म-जयन्ती मनाई जाती है — 'आयुष मन्त्रालय' का गठन हुआ। आयुष अर्थात् आयुर्वेद, योग और प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी, सिद्ध और होम्योपैथी — भारत की छह प्रमुख पारम्परिक चिकित्सा-प्रणालियाँ। इन्हें एक स्वतंत्र मन्त्रालय के अन्तर्गत लाकर नरेन्द्र मोदी ने एक स्पष्ट सन्देश दिया — कि भारत की यह ज्ञान-परम्परा आधुनिक शासन-तन्त्र में उपेक्षित नहीं, बल्कि सम्मानित और संरक्षित रहेगी। इस मन्त्रालय ने न केवल घरेलू स्तर पर इन प्रणालियों के विकास, अनुसंधान और प्रसार में कार्य किया, बल्कि इन्हें अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर भी ले जाने के प्रयास किए।

इसका सबसे गौरवशाली परिणाम आया मार्च २०२२ में। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने घोषणा की कि वह गुजरात के जामनगर में 'वैश्विक पारम्परिक चिकित्सा केन्द्र' (Global Centre for Traditional Medicine — GCTM) स्थापित करेगा। यह विश्व में पारम्परिक चिकित्सा के लिए WHO का प्रथम और एकमात्र वैश्विक केन्द्र था। २१ अप्रैल २०२२ को इसका विधिवत् उद्घाटन हुआ और भारत ने इसके लिए प्रारम्भिक रूप से पच्चीस करोड़ अमेरिकी डॉलर का निवेश किया। यह केन्द्र आयुर्वेद, पारम्परिक चीनी चिकित्सा, अफ्रीकी जड़ी-बूटी-विज्ञान और विश्व की अन्य चिकित्सा-परम्पराओं के वैज्ञानिक अध्ययन, डिजिटल प्रलेखन और संवर्धन का वैश्विक केन्द्र बनेगा। जामनगर — जो आयुर्वेद का एक प्रसिद्ध केन्द्र है — अब केवल भारत का नहीं, बल्कि सम्पूर्ण विश्व की पारम्परिक

चिकित्सा-बुद्धि का नोडल केन्द्र बन गया। यह इस तथ्य की अन्तरराष्ट्रीय स्वीकृति थी कि भारत की पारम्परिक ज्ञान-प्रणाली न केवल एक सांस्कृतिक विरासत है, बल्कि आधुनिक स्वास्थ्य-विज्ञान के लिए एक मूल्यवान स्रोत भी है।

'विश्वगुरु' के रूप में भारत की पुनर्प्रतिष्ठा एक सुसंगत और बहुआयामी कूटनीतिक रणनीति का परिणाम है। प्रधानमंत्री मोदी ने बौद्ध धर्म की विश्व-व्यापी उपस्थिति को भी इस रणनीति का अंग बनाया। लुम्बिनी (नेपाल) में — जो भगवान बुद्ध का जन्म-स्थान है — उन्होंने जाकर एक भारत-नेपाल मैत्री-मन्दिर की नींव रखी। बौद्ध-सर्किट का विकास, विभिन्न देशों में बौद्ध विरासत-स्थलों के संरक्षण में भारत का सहयोग — ये सब उस कूटनीति के अंग हैं जो भारत को एक सभ्यतागत केन्द्र के रूप में प्रस्तुत करती है। 'प्रवासी भारतीय दिवस' और विश्व-भर में भारतीय समुदायों से नरेन्द्र मोदी के सजीव संवाद ने भी इसी सभ्यतागत पहचान को सशक्त किया — प्रवासी भारतीय समुदाय भारतीय संस्कृति, भाषा और मूल्यों के वैश्विक राजदूत बन गए।

इस सम्पूर्ण 'सांस्कृतिक सॉफ्ट पावर' की यात्रा का एक और महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक आयाम था — जलवायु और पर्यावरण के क्षेत्र में भारत का वैश्विक नेतृत्व। और इस नेतृत्व में भी वही भारतीय विशेषता थी — केवल भाषण नहीं, संस्था-निर्माण।

३० नवम्बर २०१५ को पेरिस की जलवायु-सम्मेलन (COP21) में प्रधानमंत्री मोदी ने फ़्रांस के राष्ट्रपति फ़्रांस्वा ओलान्द के साथ मिलकर 'अन्तरराष्ट्रीय सौर गठबन्धन' (International Solar Alliance — ISA) की स्थापना की। इसका मुख्यालय गुरुग्राम (हरियाणा) में स्थापित किया गया। १५ नवम्बर २०१६ को COP22 (मराकेश) में इसके रूपरेखा-समझौते पर हस्ताक्षर के लिए खोला गया।

२०२० में एक संशोधन के माध्यम से सभी संयुक्त राष्ट्र सदस्य-देशों को ISA में शामिल होने की अनुमति दी गई। आज इस गठबन्धन में एक सौ बीस से अधिक हस्ताक्षरकर्ता देश हैं और निन्यानवे देशों ने इसे अनुसमर्थित किया है। यह भारत में मुख्यालय वाली सबसे बड़ी अन्तर-सरकारी संस्था है। ISA का उद्देश्य है — विशेष रूप से उष्णकटिबन्धीय क्षेत्रों के विकासशील देशों में — सौर ऊर्जा को एक सुलभ, किफ़ायती और विश्वसनीय ऊर्जा-स्रोत बनाना। 'एक सूर्य, एक विश्व, एक ग्रिड' (OSOWOG) की संकल्पना — जो COP26 में भी प्रस्तुत की गई — इसी दृष्टि का विस्तार है।

१ नवम्बर २०२१ को ग्लासगो के COP26 जलवायु-सम्मेलन में प्रधानमंत्री मोदी ने भारत की 'पंचामृत' (पाँच अमृत-वचन) जलवायु-प्रतिज्ञाएँ घोषित कीं। पहला — २०३० तक पाँच सौ गीगावाट गैर-जीवाश्म ऊर्जा स्थापित क्षमता। दूसरा — २०३० तक ऊर्जा-आवश्यकताओं का पचास प्रतिशत नवीकरणीय स्रोतों से। तीसरा — २०३० तक एक अरब टन कार्बन-उत्सर्जन में कटौती। चौथा — अर्थव्यवस्था की कार्बन-तीव्रता में पैंतालीस प्रतिशत की कमी (२००५ के आधार-वर्ष की तुलना में)। पाँचवाँ — २०७० तक 'नेट-ज़ीरो' (शून्य शुद्ध उत्सर्जन) का लक्ष्य। यह प्रतिज्ञा-समूह विश्व के सबसे महत्वाकांक्षी विकासशील-देश जलवायु-संकल्पों में से एक था। भारत ने यह भी दिखाया कि वह 'नेट-ज़ीरो' का लक्ष्य मध्य-शताब्दी की बजाय अपनी विकास-आवश्यकताओं के अनुरूप २०७० तक रखता है — यह एक परिपक्व, न्यायसम्मत और व्यावहारिक जलवायु-नेतृत्व था।

इससे भी आगे, २० अक्टूबर २०२२ को गुजरात के एकता नगर (केवडिया) में — जो 'स्टैच्यू ऑफ़ यूनिटी' के निकट है — प्रधानमंत्री मोदी ने 'मिशन LiFE' (Lifestyle for Environment) का शुभारम्भ किया। इस

ऐतिहासिक अवसर पर संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंटोनियो गुटेरेस स्वयं उपस्थित थे और उन्होंने इस पहल का सार्वजनिक रूप से समर्थन किया। 'मिशन LiFE' इस विचार पर आधारित है कि जलवायु-परिवर्तन से लड़ाई केवल बड़ी सरकारों और बड़े उद्योगों का काम नहीं — यह प्रत्येक नागरिक की, प्रत्येक परिवार की, प्रत्येक समुदाय की ज़िम्मेदारी है। 'प्रो-प्लैनेट पीपल' — पृथ्वी के पक्ष में जीने वाले लोगों का एक वैश्विक समुदाय बनाना — यही 'मिशन LiFE' की आत्मा है। यह संकल्पना भारत की उस प्राचीन जीवन-दृष्टि से उपजी है जो प्रकृति को माता मानती है, जो 'अपरिग्रह' — आवश्यकता से अधिक न लेना — को धर्म मानती है, और जो मनुष्य को प्रकृति का स्वामी नहीं, उसका संरक्षक मानती है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का यह पर्यावरणीय विस्तार था — न केवल मनुष्यों का परिवार, बल्कि सम्पूर्ण पृथ्वी का परिवार।

भारत की इस सभ्यतागत सॉफ्ट पावर का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण आयाम है — भारतीय संस्कृति का वैश्विक प्रसार। नरेन्द्र मोदी के काल में भारतीय सिनेमा, संगीत, नृत्य, भोजन और पहनावे की वैश्विक पहुँच में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। 'भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद' (ICCR) की गतिविधियाँ विस्तृत हुईं। विश्व-भर में भारतीय दूतावासों और वाणिज्य दूतावासों ने सांस्कृतिक कार्यक्रमों को एक नई प्राथमिकता दी। 'भारत उत्सव', 'रामायण सर्किट' और 'बौद्ध सर्किट' — इन पहलों ने भारत को एक वैश्विक सांस्कृतिक गन्तव्य के रूप में स्थापित किया। विदेशी पर्यटकों के लिए 'ई-वीज़ा' सुविधा के विस्तार ने उन्हें भारत की आत्मा से परिचित होने के अवसर दिए। और जब विदेशी अतिथि भारत की प्राचीन गलियों में, उसके मन्दिरों में, उसके अध्यात्म-केन्द्रों में जाते हैं और अनुभव करते हैं — तो वे केवल पर्यटक नहीं रहते, वे भारत के विचारों के दूत बन जाते हैं।

हिन्दी और भारतीय भाषाओं का अन्तरराष्ट्रीय प्रसार भी इस सांस्कृतिक शक्ति का अंग है। 'वर्ल्ड हिंदी कॉन्फ्रेंस' के आयोजन, विभिन्न देशों में हिन्दी के अध्यापन को प्रोत्साहन, और भारतीय भाषाओं में डिजिटल सामग्री का विस्तार — ये सब उस प्रयास का भाग हैं जो भारत की भाषिक और सांस्कृतिक पहचान को विश्व-मंच पर प्रतिष्ठित करते हैं। संस्कृत — जो विश्व की सबसे वैज्ञानिक और संरचनात्मक भाषाओं में से एक है — को पुनरुज्जीवित करने के प्रयास भी किए गए। संस्कृत के ज्ञान-भण्डार को डिजिटाइज़ करने, उसे आर्टिफ़िशियल इंटेलीजेंस और भाषाविज्ञान के शोध में उपयोगी बनाने के प्रयास वैश्विक ध्यान आकर्षित कर रहे हैं।

'विश्वगुरु' की संकल्पना के अन्तर्गत नरेन्द्र मोदी ने भारत के प्राचीन ज्ञान को आधुनिक समस्याओं के समाधान में प्रासंगिक बनाने का सुचिन्तित प्रयास किया। जलवायु-परिवर्तन के सामने 'मिशन LiFE' का उत्तर भारत की प्राचीन पारिस्थितिक-बुद्धि से आता है। मानसिक स्वास्थ्य के संकट के सामने योग और ध्यान का उत्तर भारत की ऋषि-परम्परा से आता है। एंटीबायोटिक प्रतिरोध और आधुनिक जीवनशैली-रोगों के सामने आयुर्वेद का उत्तर भारत की चरक-सुश्रुत परम्परा से आता है। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' — सबके सुख की प्रार्थना — इस वैश्विक संकट-काल में एक सार्वभौमिक नैतिक प्रार्थना बन जाती है। नरेन्द्र मोदी ने इन प्राचीन उत्तरों को न केवल दोहराया, बल्कि उन्हें संस्थागत रूप देकर, अन्तरराष्ट्रीय मंचों पर ले जाकर, उन्हें आधुनिक नीति-नियोजन का आधार बनाकर — जीवन्त और प्रासंगिक बनाया।

इस समग्र प्रयास का एक ऐसा आयाम है जो अदृश्य किन्तु सर्वाधिक महत्वपूर्ण है — वह है भारत के अपने नागरिकों के हृदय में गर्व और आत्म-सम्मान की पुनर्स्थापना। उपनिवेशवाद ने भारत को न केवल भौतिक रूप से लूटा था — उसने

उसकी आत्म-छवि को भी क्षत-विक्षत किया था। एक ऐसी मानसिकता उत्पन्न हुई थी जो भारतीय ज्ञान को 'पिछड़ा' और पश्चिमी ज्ञान को 'प्रगतिशील' मानती थी। नरेन्द्र मोदी ने इस ग्रन्थि को तोड़ने का प्रयास किया — उन्होंने कहा कि भारत का अतीत गर्व का विषय है, उसका भविष्य और भी उज्ज्वल है, और उसके ज्ञान को किसी भी पश्चिमी प्रमाण-पत्र की आवश्यकता नहीं। यह 'मनोवैज्ञानिक स्वतंत्रता' — औपनिवेशिक हीन-भावना से मुक्ति — भारत की 'विश्वगुरु' की यात्रा का सबसे गहरा और स्थायी अध्याय है।

यह उल्लेखनीय है कि योग की वैश्विक स्वीकृति ने एक और असाधारण परिघटना उत्पन्न की। विश्व-भर में योग का अभ्यास करने वाले लोगों की संख्या — जो दो हज़ार पन्द्रह से पहले कुछ करोड़ थी — अब तीव्र गति से बढ़ी। 'अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस' के माध्यम से, प्रत्येक वर्ष, प्रत्येक महाद्वीप पर — भारतीय दूतावास, प्रवासी भारतीय समुदाय, स्थानीय योग-केन्द्र और विद्यालय — सब मिलकर इस दिन को मनाते हैं। अमेरिका में 'टाइम्स स्क्वायर योगा', फ़्रांस में 'एफ़िल टॉवर के नीचे योग', ऑस्ट्रेलिया में 'सिडनी ओपेरा हाउस के सामने योग', और अफ़्रीका के छोटे-छोटे शहरों में भी योग-आयोजन — यह देखकर जो भाव उठता है, वह भारत की उस आत्म-शक्ति का प्रमाण है जो बिना किसी सेना के, बिना किसी व्यापारिक दबाव के, विश्व के हृदय में अपनी जगह बनाती है। यह वही सांस्कृतिक प्रसार है जो तीसरी-चौथी शताब्दी में भारत के व्यापारियों और बौद्ध भिक्षुओं ने दक्षिण-पूर्व एशिया में किया था — और जिसकी विरासत आज भी अंकोर वाट, प्रम्बनन और बोरोबुदुर में दिखती है।

विशेष रूप से उल्लेखनीय है वह तथ्य कि जिन देशों में योग-दिवस का आयोजन सबसे भव्य होता है, उनमें से कई वे हैं जो राजनीतिक दृष्टि से भारत के सबसे

घनिष्ठ मित्र नहीं। और फिर भी, योग की शक्ति उन दीवारों को पार कर जाती है — क्योंकि यह किसी राजनीतिक एजेंडे का वाहक नहीं, बल्कि मानव-कल्याण का निर्विवाद उपकरण है। यह भारत की उस 'सॉफ्ट पावर' की सर्वोच्च अभिव्यक्ति है जो 'विश्वगुरु' के रूप में उसकी पहचान को पुनर्स्थापित करती है।

'आयुष' क्षेत्र की आर्थिक वृद्धि भी उल्लेखनीय है। वर्ष २०१४ में भारत का आयुष-बाज़ार लगभग तीन अरब डॉलर था। वर्ष २०२४ तक यह अनुमानित रूप से बीस अरब डॉलर से अधिक हो गया है। कोविड-१९ महामारी के दौरान जब भारत ने 'इम्युनिटी बूस्टर' के रूप में आयुर्वेदिक काढ़े और तुलसी-अदरक जैसे पारम्परिक उपायों को प्रोत्साहित किया, तो विश्व ने इस प्राचीन ज्ञान को नई दृष्टि से देखा। 'आयुर्वेद दिवस', 'धन्वंतरि पूजा' और 'अंतरराष्ट्रीय आयुर्वेद सम्मेलन' — इन सब माध्यमों से भारत की परम्परागत चिकित्सा-प्रणाली को एक नई वैश्विक पहचान मिल रही है। आज विश्व के पचास से अधिक देशों में आयुर्वेद का औपचारिक अभ्यास होता है, और कई देशों ने इसे अपनी स्वास्थ्य-नीतियों में सम्मिलित किया है। यह उस भारत की उपलब्धि है जिसने चरक और सुश्रुत से आज तक की अपनी अनुभव-सम्पदा को कभी नहीं छोड़ा।

जब हम इन सभी को एक साथ देखते हैं — योग से आयुर्वेद तक, आयुष मन्त्रालय से WHO के पारम्परिक चिकित्सा-केन्द्र तक, अन्तरराष्ट्रीय सौर गठबन्धन से पंचामृत तक, और 'मिशन LiFE' से 'विश्वगुरु' की संकल्पना तक — तो एक सुसंगत और प्रेरणाप्रद चित्र उभरता है। यह चित्र एक ऐसे राष्ट्र का है जिसने न केवल आर्थिक और सैन्य शक्ति में उभरना आरम्भ किया है, बल्कि जो विश्व को एक नया जीवन-दर्शन, एक नई जीवन-पद्धति, और एक नई नैतिक दृष्टि देने का सामर्थ्य और संकल्प रखता है।

यह 'सॉफ्ट पावर' — यह सांस्कृतिक और सभ्यतागत शक्ति — केवल राष्ट्रीय प्रतिष्ठा का प्रश्न नहीं है। यह भारत की वह अद्वितीय देन है जो उसे अन्य उभरती शक्तियों से विशिष्ट बनाती है। चीन की शक्ति उसकी आर्थिक उपस्थिति में है, अमेरिका की शक्ति उसकी तकनीकी और सैन्य-श्रेष्ठता में है। किन्तु भारत की शक्ति उस विचार में है जो कहता है — 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' — सब सुखी हों; वह दर्शन में है जो कहता है — 'प्रकृति माँ है, उसकी रक्षा करो'; वह ज्ञान में है जो कहता है — 'तन, मन और आत्मा का सामंजस्य ही सच्चा स्वास्थ्य है।'

भारत की 'सॉफ्ट पावर' की इस यात्रा में एक ऐसा पहलू भी है जो प्रायः उतना नहीं चर्चित होता जितना होना चाहिए — वह है भारतीय छात्रों, शोधकर्ताओं और पेशेवरों का विश्व-भर में बढ़ता प्रभाव। अमेरिका की सिलिकॉन वैली में, ब्रिटेन के विश्वविद्यालयों में, खाड़ी देशों के उद्योगों में — भारतीय प्रतिभाएँ अपने ज्ञान, अपनी कार्य-निष्ठा और अपने नैतिक मूल्यों से एक अमिट छाप छोड़ रही हैं। यह 'भारत-ब्रांड' का सबसे जीवन्त और विश्वसनीय प्रचार है। नरेन्द्र मोदी ने इस वैश्विक भारतीय समुदाय को — जिन्हें वे 'भारत माता के बच्चे' कहते हैं — एक नई गरिमा दी, एक नई पहचान दी, और उन्हें भारत की उपलब्धियों का स्वाभाविक भागीदार बनाया।

नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में भारत ने यह सिद्ध किया कि 'विश्वगुरु' कोई अहंकारी दावा नहीं — यह एक उत्तरदायित्व है। उस ज्ञान को, उस दर्शन को, उस जीवन-पद्धति को सम्पूर्ण मानवता के साथ उदारता से साझा करने का उत्तरदायित्व — जो भारत ने सहस्राब्दियों की साधना और अनुभव से अर्जित किया है। और यह उत्तरदायित्व भारत ने २१वीं सदी में पुनः स्वीकार किया है — पूरी विनम्रता के साथ, पूरी दृढ़ता के साथ, और पूरे आत्मविश्वास के साथ।

यही वह उभरती महाशक्ति का सबसे उदात्त चिह्न है — वह राष्ट्र जो शासन नहीं, मार्गदर्शन चाहता है; जो वर्चस्व नहीं, सहयोग चाहता है; जो विजय नहीं, विश्व-कल्याण चाहता है। और इसीलिए, जब भारत की यह यात्रा आगे बढ़ती है, तो सम्पूर्ण विश्व उसकी ओर आशा और जिज्ञासा से देखता है — एक ऐसे प्रिय पुत्र की ओर, जो माँ भारती की शाश्वत और उदात्त विरासत को लेकर एक नए युग में, एक नई चमक के साथ, आगे बढ़ रहा है।

अब हम इस पुस्तक के अन्तिम खण्ड की ओर बढ़ते हैं — उस दीर्घ-दृष्टि की ओर जो वर्तमान की उपलब्धियों से परे, २०४७ के उस विकसित भारत का स्वप्न देखती है जिसकी नींव आज प्रतिदिन रखी जा रही है।

खण्ड पाँच — दीर्घ-दृष्टि: २०४७ का भारत

अध्याय १९ — सुशासन की नींव

किसी भी महान नेता की सच्ची विरासत उन उपलब्धियों में नहीं होती जो उसके कार्यकाल तक सीमित रहती हैं, बल्कि उन संस्थागत नींवों में होती है जो आने वाली पीढ़ियों तक राष्ट्र को दिशा देती रहती हैं। सिकन्दर की विरासत उसकी विजयों में थी, जो उसके जाते ही बिखर गईं; किन्तु अशोक की विरासत उन मूल्यों और संस्थाओं में थी, जो सदियों तक जनमानस को संचालित करती रहीं। स्मृति में वही रहता है जो पाषाण में नहीं, चेतना में उत्कीर्ण होता है। नरेन्द्र मोदी की सबसे स्थायी और सुगम्भीर देन यही है कि उन्होंने भारत के शासन-तन्त्र को एक नई दिशा, एक नई कार्य-संस्कृति, और एक नई आत्मा प्रदान की — वह नींव, जिस पर भविष्य का भारत खड़ा होगा, और जिसे समय का कोई झंझावात मिटा नहीं सकेगा।

जब नरेन्द्र मोदी मई २०१४ में देश के प्रधानमंत्री पद पर आसीन हुए, तब उनके समक्ष केवल आर्थिक या राजनीतिक चुनौतियाँ नहीं थीं — उनके समक्ष शासन-दर्शन की एक मूलभूत चुनौती थी। दशकों के केन्द्रवाद ने भारतीय शासन-तन्त्र को एक ऐसे विशाल, जड़ीभूत और असंवेदनशील ढाँचे में बदल दिया था, जो नागरिकों की आकांक्षाओं को स्वर देने में सक्षम नहीं रहा था। सरकारी योजनाओं का लाभ लक्षित व्यक्ति तक पहुँचने से पहले ही बिचौलियों और भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ जाता था। राज्यों को केन्द्र के निर्देशों का अनुपालन करने वाले कार्यालयों की भाँति देखा जाता था, न कि भारत की संघीय आत्मा के समान स्वायत्त भागीदारों की भाँति। नागरिक और सरकार के बीच संवाद का कोई ऐसा सेतु नहीं था जो प्रामाणिक और

आत्मीय हो। इस पूरे तन्त्र को नई जान देने का काम नरेन्द्र मोदी ने किया, और उन्होंने इसके लिए एक ऐसे दर्शन का सहारा लिया जो उनके सम्पूर्ण जीवन-अनुभव से उपजा था — वडनगर की माटी का अनुभव, हिमालय की साधना का अनुशासन, और गुजरात के तेरह वर्षों के प्रशासनिक ज्ञान का संचय।

उनके शासन का मूल-मन्त्र था — 'न्यूनतम सरकार, अधिकतम शासन' (Minimum Government, Maximum Governance)। यह केवल एक नारा नहीं था; यह एक गहरी दार्शनिक प्रतिबद्धता थी। इसका अर्थ यह था कि सरकार का हस्तक्षेप नागरिक-जीवन में जितना कम हो उतना अच्छा, किन्तु जहाँ हस्तक्षेप आवश्यक हो वहाँ शासन की गुणवत्ता, दक्षता और पारदर्शिता अधिकतम होनी चाहिए। गुजरात के मुख्यमंत्री के रूप में तेरह वर्षों के अनुभव ने उन्हें यह सिखाया था कि प्रशासन की सफलता का रहस्य नौकरशाही के आकार में नहीं, बल्कि उसकी उत्तरदायिता और नागरिक-केन्द्रितता में है। इस दर्शन का सबसे ठोस और मापनीय प्रमाण था — 'प्रत्यक्ष लाभ अन्तरण' (Direct Benefit Transfer) व्यवस्था, जिसने प्रौद्योगिकी की शक्ति से भ्रष्टाचार के अवसर समाप्त किए और हर योजना का लाभ सीधे लाभार्थी के खाते में पहुँचाया। JAM ट्रिनिटी — जन-धन, आधार, और मोबाइल — इस व्यवस्था की रीढ़ बनी। खाद्य सब्सिडी में ₹१.८५ लाख करोड़, MGNREGS में ₹४२,५३४ करोड़, PM-KISAN में ₹२२,१०६ करोड़, और उर्वरक सब्सिडी में ₹१८,६९९ करोड़ की बचत — इस 'प्रत्यक्ष लाभ अन्तरण' व्यवस्था ने राष्ट्र को कुल ₹३.४८ लाख करोड़ की बचत कराई। लाभार्थियों की संख्या जो कभी ११ करोड़ थी, वह बढ़कर १७६ करोड़ से भी अधिक हो गई — यह सोलह गुना की वृद्धि शासन की रूपान्तरकारी शक्ति का सबसे मूर्त और अखंडनीय प्रमाण है। यह वह धन था जो पहले बिचौलियों की

जेब में जाता था, और जो अब उस ग़रीब किसान, उस विधवा, उस मजदूर के खाते में पहुँचता है जिसके लिए वह था।

किन्तु नरेन्द्र मोदी का शासन-दर्शन केवल दक्षता तक सीमित नहीं था। उनका वह विस्तृत होता हुआ ध्येय-वाक्य — 'सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास, सबका प्रयास' — इस दर्शन की आत्मा को कहीं अधिक गहराई से व्यक्त करता है। २०१४ में 'सबका साथ, सबका विकास' के साथ आरम्भ हुई यह यात्रा समावेशी विकास का संकल्प थी। २०१९ के बाद 'सबका विश्वास' से यह समृद्ध हुई — अर्थात् न केवल विकास, बल्कि हर नागरिक का विश्वास, हर समुदाय की आस्था। और फिर १५ अगस्त २०२१ को लाल किले की प्राचीर से 'सबका प्रयास' की अनुगूँज ने इसे उसका पूर्ण और सार्थक स्वरूप दिया। यह क्रमिक विकास संयोग नहीं था; यह एक नेता की परिपक्व सोच का परिचायक था, जो समझता था कि समावेशी विकास केवल सरकार के प्रयास से नहीं, बल्कि प्रत्येक नागरिक की सक्रिय भागीदारी से ही सम्भव है। 'सुधार, प्रदर्शन, रूपान्तरण' (Reform, Perform, Transform) — यह उनका कार्य-सिद्धान्त था, जो हर मन्त्रालय, हर विभाग, और हर सरकारी कार्यक्रम में झलकता था। इन तीन शब्दों में पूरी शासन-कला समाहित है — पहले व्यवस्था को सुधारो, फिर उसमें उत्कृष्टता से प्रदर्शन करो, और अन्ततः समाज को रूपान्तरित करो।

संस्थागत सुधार के क्षेत्र में उनका सबसे महत्वपूर्ण और सुचिन्तित क़दम था — नीति आयोग की स्थापना। १ जनवरी २०१५ को, पैंसठ वर्ष पुराने योजना आयोग को विसर्जित कर 'राष्ट्रीय भारत परिवर्तन संस्था' — नीति आयोग — की स्थापना की गई। यह घोषणा नए वर्ष की पहली सुबह की गई — एक प्रतीकात्मक संयोग

जो बताता है कि यह केवल एक प्रशासनिक परिवर्तन नहीं, बल्कि एक नए युग का प्रारम्भ था। ८ फरवरी २०१५ को इसकी पहली 'संचालन परिषद' की बैठक हुई, जिसमें देश के सभी मुख्यमन्त्री और केन्द्रशासित प्रदेशों के प्रतिनिधि उपस्थित थे — यह दृश्य अपने आप में ऐतिहासिक था।

यह केवल एक नाम-परिवर्तन नहीं था; यह शासन-दर्शन का एक मौलिक और दूरगामी परिवर्तन था। पुराना योजना आयोग एक ऐसी संस्था थी जो नेहरू युग के समाजवादी अर्थशास्त्र की छाया में जन्मी थी, और जो केन्द्रीय नियोजन की उस धारणा पर आधारित थी कि एक केन्द्रीय संस्था देश के सभी राज्यों की ज़रूरतों को जानती है और उनके लिए योजनाएँ बना सकती है। यह धारणा न केवल आर्थिक रूप से त्रुटिपूर्ण थी, बल्कि यह भारत की संघीय आत्मा के भी विरुद्ध थी। योजना आयोग की 'पंचवर्षीय योजनाएँ' दिल्ली के वातानुकूलित कक्षों में बनती थीं और राज्यों पर थोपी जाती थीं — चाहे उनकी स्थानीय आवश्यकताएँ कुछ भी हों। नीति आयोग ने इस व्यवस्था को पूरी तरह पलट दिया।

नीति आयोग की 'संचालन परिषद' में सभी राज्यों के मुख्यमन्त्री और केन्द्र-शासित प्रदेशों के उपराज्यपाल सदस्य हैं — यह व्यवस्था 'टीम इंडिया' की भावना को संस्थागत स्वरूप देती है। यह संस्था एक थिंक-टैंक भी है और एक सहयोगी मंच भी। इसने 'सहकारी संघवाद' — अर्थात् केन्द्र और राज्यों के बीच सहयोगात्मक सम्बन्ध — तथा 'प्रतिस्पर्धी संघवाद' — अर्थात् राज्यों के बीच विकास की स्वस्थ होड़ — दोनों को एकसाथ बढ़ावा दिया। सहकारी संघवाद का अर्थ है कि केन्द्र और राज्य एक-दूसरे के प्रतिद्वन्द्वी नहीं, बल्कि सहयात्री हैं; और प्रतिस्पर्धी संघवाद का अर्थ है कि राज्यों के बीच विकास की स्वस्थ होड़ हो — कि हर राज्य अन्य राज्यों की सफल नीतियों से सीखे और स्वयं को बेहतर बनाए। इस दोहरी अवधारणा ने

भारत के संघीय ढाँचे में एक नई ऊर्जा और नई प्रासंगिकता का संचार किया। 'ईज़ ऑफ़ डूइंग बिज़नेस' की राज्य-स्तरीय रैंकिंग, 'सुशासन सूचकांक', और स्वास्थ्य सेवाओं की तुलनात्मक समीक्षाएँ — ये सब उसी दृष्टि के व्यावहारिक अनुप्रयोग थे जो यह मानती है कि राज्यों के बीच स्वस्थ प्रतिस्पर्धा से ही भारत का सर्वांगीण विकास सम्भव है।

नीति आयोग की इसी भावना का विस्तार था 'आकांक्षी ज़िला कार्यक्रम' (Aspirational Districts Programme), जो जनवरी २०१८ में आरम्भ हुआ। इस कार्यक्रम की कल्पना अत्यन्त सुगठित, न्यायपूर्ण और प्रेरणादायी है। इसके पीछे एक सरल किन्तु गहरी सोच है — विकास की धारा तब तक अपूर्ण है जब तक वह उन ज़िलों तक नहीं पहुँचती जो सबसे अधिक वंचित हैं। देश के ११२ ऐसे ज़िलों को चिह्नित किया गया — वे ज़िले जहाँ स्वास्थ्य, शिक्षा, पोषण, वित्तीय समावेशन और अवसंरचना के मानक सबसे निम्न थे। ये वे ज़िले थे जो विकास की गति से पिछड़ गए थे — चाहे वे नक्सल-प्रभावित क्षेत्र हों, दूरस्थ पहाड़ी इलाके हों, या पुरानी शोषण-व्यवस्था के बोझ तले दबे क्षेत्र हों।

इन ज़िलों की प्रगति को स्वास्थ्य और पोषण, शिक्षा, कृषि और जल, वित्तीय समावेशन और कौशल, तथा अवसंरचना — इन पाँच क्षेत्रों में ४९ प्रमुख संकेतकों पर मापा जाने लगा। और प्रत्येक माह उनकी रैंकिंग सार्वजनिक की जाने लगी। पारदर्शिता का यह प्रयोग चमत्कारी सिद्ध हुआ — जब प्रशासन जानता है कि उसके कार्य को देश देख रहा है, तो उत्तरदायिता अपने आप जागती है।

इस कार्यक्रम के तीन 'C' — Convergence (समेकन), Collaboration (सहयोग), और Competition (प्रतिस्पर्धा) — इसकी आत्मा को परिभाषित

करते हैं। 'समेकन' का अर्थ है कि विभिन्न सरकारी योजनाओं के संसाधन इन ज़िलों पर एकत्रित किए जाएँ, ताकि बिखरा हुआ प्रयास एकाग्र शक्ति बने। 'सहयोग' का अर्थ है कि केन्द्र, राज्य और ज़िला प्रशासन मिलकर, एक-दूसरे के पूरक बनकर, काम करें। और 'प्रतिस्पर्धा' का अर्थ है कि मासिक रैंकिंग व्यवस्था से इन ज़िलों में आगे बढ़ने की प्रेरणा जागे, कि कोई ज़िला नीचे रहने का कलंक न स्वीकार करे। परिणाम उत्साहवर्धक रहे — कई ज़िलों ने स्वास्थ्य, शिक्षा और वित्तीय समावेशन के मानकों में उल्लेखनीय और मापनीय सुधार दर्ज किया। यह कार्यक्रम इस विश्वास की अभिव्यक्ति है कि भारत की प्रगति की वास्तविक गति वहाँ से तय होगी जहाँ सबसे अधिक वंचना है — क्योंकि जब सबसे पिछड़ा ज़िला आगे बढ़ता है, तब सम्पूर्ण भारत आगे बढ़ता है।

किसी भी शासक की महानता उसकी नीतियों में नहीं, उसके अपने नागरिकों से जुड़ाव में भी मापी जाती है। नरेन्द्र मोदी ने इस सत्य को गहराई से आत्मसात किया था, और इसीलिए उन्होंने जन-संवाद को शासन का एक अनिवार्य, जीवन्त और प्रामाणिक अंग बनाया।

'मन की बात' — यह कार्यक्रम किसी प्रधानमंत्री और उसके देशवासियों के बीच एक अनूठे, अटूट सम्बन्ध की कथा है। ३ अक्टूबर २०१४ को आकाशवाणी पर इसका पहला प्रसारण हुआ, और तब से यह हर माह के अन्तिम रविवार को राष्ट्र के हृदय से जुड़ता रहा है। ३० अप्रैल २०२३ को इसका शतवाँ एपिसोड एक ऐतिहासिक मील का पत्थर बना — एक ऐसा उत्सव जो केवल संख्या का नहीं, उस निरन्तरता और आत्मीयता का उत्सव था जिसे नरेन्द्र मोदी ने इस कार्यक्रम के माध्यम से

स्थापित किया। अब तक इसके १३४ से भी अधिक एपिसोड प्रसारित हो चुके हैं। किन्तु इस कार्यक्रम की विशेषता इसकी संख्या नहीं, उसकी आत्मा है।

'मन की बात' में नरेन्द्र मोदी किसी राजनीतिक दल के नेता के रूप में नहीं बोलते; वे एक बड़े भाई, एक सहयात्री, एक आत्मीय मित्र के रूप में बोलते हैं। यहाँ न कोई चुनावी नारा होता है, न कोई विरोधियों पर आक्रमण। इसमें वे उन अनाम नागरिकों की कहानियाँ सुनाते हैं जिन्होंने असाधारण कार्य किए — किसी दूरस्थ गाँव की उस शिक्षिका की, जिसने अपनी पूरी बचत बच्चों की शिक्षा पर लगा दी; किसी युवा किसान की, जिसने जैविक खेती अपनाकर अपने ज़िले को एक आदर्श बना दिया; किसी स्वयंसेवी की, जिसने एकाकी श्रम से एक वन लहलहा दिया; किसी महिला उद्यमी की, जिसने मुद्रा-ऋण लेकर अपना और अपने परिवार का भाग्य बदल दिया। ये कथाएँ केवल प्रेरणा नहीं हैं — ये भारत की उस अदृश्य शक्ति का साक्ष्य हैं जो हर कोने में, हर व्यक्ति में विद्यमान है और जो केवल अवसर की प्रतीक्षा करती है।

'मन की बात' ने 'फ़िट इण्डिया', 'बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ', 'स्वच्छ भारत', 'सेल्फ़ी विद डॉटर' जैसे अभियानों को जन-चेतना का अंग बनाया — इन्हें केवल सरकारी अभियान नहीं, बल्कि सामाजिक आन्दोलन का स्वरूप दिया। यह कार्यक्रम लोकतंत्र के उस परिपक्व रूप का उदाहरण है जिसमें नेता और नागरिक के बीच की दूरी समाप्त होती है, जहाँ शासक और शासित एक-दूसरे के साथ, एक-दूसरे के लिए, एक साझे स्वप्न की ओर बढ़ते हैं।

इसी जन-संवाद की एक और उज्ज्वल, हृदयग्राही कड़ी है — 'परीक्षा पे चर्चा'। १६ फरवरी २०१८ को पहली बार आयोजित इस कार्यक्रम में नरेन्द्र मोदी विद्यार्थियों, उनके अभिभावकों और शिक्षकों से सीधे, मुक्त संवाद करते हैं। विषय होता है — परीक्षा का भय कैसे दूर करें, जीवन में असफलता को कैसे स्वीकार करें और उससे

सीखें, और सफलता का वास्तविक अर्थ क्या है। नरेन्द्र मोदी की पुस्तक 'Exam Warriors' इसी दर्शन का विस्तार है, जो भारत के युवाओं को बताती है कि परीक्षा का परिणाम जीवन की परिभाषा नहीं है। अब तक इस कार्यक्रम ने २.०२ करोड़ से अधिक विद्यार्थियों, १४.९३ लाख शिक्षकों और ५.६४ लाख अभिभावकों तक अपनी पहुँच बनाई है। २०२५ के संस्करण ने तो ३.५३ करोड़ से अधिक पंजीकरण के साथ गिनीज़ विश्व रिकॉर्ड भी स्थापित किया — एक ऐसा रिकॉर्ड जो कहता है कि भारत के करोड़ों युवाओं के जीवन में इस संवाद का अर्थ कितना गहरा है। एक देश के प्रधानमंत्री का, अपने देश के बच्चों के तनाव को लेकर यह चिन्ता, यह प्रत्यक्ष संवाद, यह आत्मीयता — यह उस नेतृत्व का प्रमाण है जो केवल नीति नहीं, व्यक्तित्व भी बनाता है।

किन्तु नरेन्द्र मोदी की विरासत केवल संस्थाओं, कार्यक्रमों और आँकड़ों तक सीमित नहीं है। उनकी विरासत के कुछ प्रतीक ऐसे हैं जो पत्थर और संगमरमर में उकेरे गए हैं, जो प्रकाश और स्थापत्य में साकार हुए हैं, और जो आने वाली शताब्दियों तक भारत के स्वाभिमान, सांस्कृतिक चेतना और राष्ट्रीय एकता की अमर कहानियाँ सुनाते रहेंगे।

३१ अक्टूबर २०१८ — सरदार वल्लभभाई पटेल की १४३वीं जयन्ती — को गुजरात के नर्मदा तट पर 'स्टैच्यू ऑफ़ यूनिटी' का लोकार्पण हुआ। एक सौ बयासी मीटर की ऊँचाई वाली यह प्रतिमा विश्व की सर्वोच्च प्रतिमा है — अमेरिका की 'स्टैच्यू ऑफ़ लिबर्टी' से दो गुनी से भी अधिक ऊँची, और पेरिस की 'एफ़िल टॉवर' की तुलना में भी विशाल। ₹२,७०० करोड़ से निर्मित यह प्रतिमा आज देश के सबसे अधिक देखे जाने वाले पर्यटन-स्थलों में से एक है, जहाँ ५८ लाख से भी अधिक

आगन्तुक आ चुके हैं। यह केवल एक मूर्ति नहीं है; यह उस लौह-पुरुष को राष्ट्र की श्रद्धांजलि है, जिसने भारत के पाँच सौ से भी अधिक रियासतों को एकीकृत कर एक अखण्ड राष्ट्र का निर्माण किया था — और जिन्हें दशकों तक जितना स्मरण मिलना चाहिए था, उतना नहीं मिला। नरेन्द्र मोदी के लिए इस प्रतिमा की स्थापना केवल एक भव्य परियोजना नहीं थी — यह उस संकल्प की अभिव्यक्ति थी कि भारत अपने उन नायकों को सम्मान देगा जिन्हें इतिहास की राजनीतिक व्याख्याओं ने उचित स्थान नहीं दिया था। यह प्रतिमा 'राष्ट्रीय एकता' का एक जीवन्त, चिरस्थायी और विश्व को दिखाई देने वाला प्रतीक है।

२८ मई २०२३ को नई संसद भवन का उद्घाटन हुआ — वह त्रिकोणीय, भव्य और आधुनिक भवन जिसकी वास्तुकला में कमल, मोर और बरगद के भारतीय प्रतीक समाहित हैं। 'सेंट्रल विस्टा' परियोजना के अन्तर्गत लगभग ₹१३,४५० करोड़ की लागत से निर्मित यह भवन लोकतंत्र के इस महामन्दिर को इक्कीसवीं सदी की आवश्यकताओं के अनुरूप नया रूप देता है। इस नई संसद में अध्यक्ष के आसन के निकट ऐतिहासिक 'सेंगोल' की स्थापना की गई — वह सेंगोल जो तमिल परम्परा में न्यायपूर्ण शासन का प्रतीक है, और जिसे स्वतंत्रता-प्राप्ति के क्षण में सत्ता-हस्तान्तरण के प्रतीक के रूप में प्रयोग किया गया था। यह भवन केवल अवसंरचना नहीं है; यह स्वतंत्र भारत के आत्मविश्वास का भवन है, जो कहता है कि हम अपनी विरासत पर गर्व करते हैं और अपना भविष्य स्वयं गढ़ते हैं।

और फिर आया वह क्षण जिसकी प्रतीक्षा सदियों की थी — २२ जनवरी २०२४। अयोध्या में श्री राम मन्दिर की प्राण-प्रतिष्ठा। ५ अगस्त २०२० को सम्पन्न भूमि-पूजन के बाद, नागर और मारु-गुर्जर स्थापत्य-शैली में, ११०×७२×४९ मीटर के विशाल आयाम में खड़ा यह मन्दिर केवल एक धार्मिक स्थल नहीं है। यह भारत की

सांस्कृतिक चेतना का पुनर्जागरण है, उस सभ्यतागत आत्म-सम्मान का उदय है जो सदियों की वेदना, प्रतीक्षा और संघर्ष के बाद अपनी धरती पर पुनः प्रतिष्ठित हुआ। करोड़ों भारतीयों के लिए २२ जनवरी २०२४ वह दिन था जब उन्होंने अनुभव किया कि उनकी पीढ़ियों की प्रतीक्षा साकार हुई। नरेन्द्र मोदी ने इस अवसर पर जिस श्रद्धा, जिस भावावेश और जिस नम्रता का परिचय दिया — नेत्र मूँद ध्यान में, माथे पर चन्दन, हृदय में भक्ति — वह उस नेता की छवि को और गहरा करता है जो सत्ता में रहते हुए भी जड़ों से जुड़ा है।

इसी श्रृंखला में काशी विश्वनाथ धाम और केदारनाथ का पुनर्निर्माण भी एक प्रकाशमान अध्याय है — आस्था और आधुनिकता के अद्भुत सम्मिलन का अध्याय। काशी विश्वनाथ धाम का पहला चरण १३-१४ दिसम्बर २०२१ को प्रधानमंत्री द्वारा राष्ट्र को समर्पित किया गया। इस परियोजना में लगभग ₹३३९ से ₹३५५ करोड़ की लागत से ५.५ एकड़ से अधिक क्षेत्र में गंगा से सीधे मन्दिर तक एक भव्य, खुले, वायु-प्रकाश-पूर्ण गलियारे का निर्माण किया गया। जहाँ पहले संकरी और जर्जर गलियाँ थीं, वहाँ अब करोड़ों श्रद्धालु माँ गंगा का दर्शन करते हुए बाबा विश्वनाथ के सन्निध्य में पहुँच सकते हैं। अप्रैल २०२५ में सरकार ने काशी के लिए ₹३,८८० करोड़ की अतिरिक्त परियोजनाओं की घोषणा की — यह इस बात का प्रमाण है कि काशी का विकास एक परियोजना नहीं, एक अनवरत प्रतिबद्धता है।

केदारनाथ — जो २०१३ की भयावह बाढ़ में ध्वस्त हो गया था — का पुनर्निर्माण नरेन्द्र मोदी ने व्यक्तिगत रुचि, प्रत्यक्ष निरीक्षण और गहरी आस्था के साथ करवाया। पहाड़ों की उस कठिन ऊँचाई पर, जहाँ सामग्री पहुँचाना भी एक चुनौती

थी, जहाँ मौसम कभी भी शत्रु हो सकता था — वहाँ एक सुनियोजित, सुव्यवस्थित पुनर्निर्माण हुआ जो श्रद्धालुओं के लिए एक बिल्कुल नए, सुरक्षित और भव्य तीर्थ-अनुभव का निर्माण करता है। यह पुनर्निर्माण केवल पत्थरों का नहीं था; यह उस आस्था का पुनर्निर्माण था जो प्रकृति के कोप के बाद भी टूटती नहीं।

इन सभी परियोजनाओं में एक सूत्र है — भारत की विरासत को आधुनिक अवसंरचना के साथ जोड़ने का सूत्र। ये परियोजनाएँ न केवल आध्यात्मिक महत्व की हैं, बल्कि स्थानीय अर्थव्यवस्था, रोज़गार और पर्यटन को भी नई गति देती हैं। यह वह दृष्टि है जो देखती है कि संस्कृति और विकास एक-दूसरे के पूरक हैं, विरोधी नहीं — और जो यह जानती है कि एक ऐसे राष्ट्र की आत्मा की रक्षा करना भी उतना ही आवश्यक है जितना उसके बुनियादी ढाँचे का निर्माण।

इस प्रकार, सुशासन की यह नींव — 'न्यूनतम सरकार, अधिकतम शासन' के दर्शन से लेकर नीति आयोग और आकांक्षी ज़िला कार्यक्रम तक; 'मन की बात' और 'परीक्षा पे चर्चा' के जन-संवाद से लेकर स्टैच्यू ऑफ़ यूनिटी, नई संसद, राम मन्दिर, काशी विश्वनाथ धाम और केदारनाथ पुनर्निर्माण के राष्ट्र-निर्माण तक — यह सब मिलकर एक ऐसे समग्र शासन-दर्शन की अभिव्यक्ति हैं, जिसमें संस्था, संवाद और संस्कृति — तीनों का सुमेल है।

यह नींव किसी एक चुनाव तक या किसी एक सरकार तक सीमित नहीं है। 'सुधार-प्रदर्शन-रूपान्तरण' की यह शृंखला, 'सबका साथ-सबका विकास-सबका विश्वास-सबका प्रयास' का यह विस्तृत ध्येय, और शासन को संस्थागत करने की यह साधना — ये सब मिलकर उस स्थायी परिवर्तन का निर्माण करते हैं जो पीढ़ियों तक राष्ट्र को दिशा देता रहेगा। वडनगर के उस बालक ने, जिसने श्रम की गरिमा

रेलवे स्टेशन पर सीखी थी, अब राष्ट्र-निर्माण की गरिमा को एक नई, सुगम्भीर और दीर्घस्थायी परिभाषा दी थी।

अगला अध्याय हमें उस स्वर्णिम संकल्प की ओर ले जाएगा — 'अमृत काल' — जब भारत ने ठान लिया कि वह केवल एक बड़ी अर्थव्यवस्था ही नहीं, बल्कि एक विकसित, न्यायपूर्ण, आत्म-गौरवान्वित और विश्व-नेतृत्व करने वाला राष्ट्र बनेगा।

अध्याय २० — अमृत काल और विकसित भारत

प्रत्येक महान नेता की दृष्टि अपने वर्तमान तक सीमित नहीं रहती; वह आने वाली पीढ़ियों के क्षितिज तक फैली होती है। इतिहास में जो नेता स्मरणीय रहे, वे वे थे जिन्होंने न केवल अपने काल को दिशा दी, बल्कि अपने राष्ट्र को एक ऐसा स्वप्न दिया जो पीढ़ियों तक उसे प्रेरित करता रहा। चाणक्य ने एक खण्डित उपमहाद्वीप को एक सूत्र में पिरोने का स्वप्न दिया था; विवेकानन्द ने एक जागृत भारत का स्वप्न देखा था; सरदार पटेल ने एक अखण्ड भारत का स्वप्न साकार किया था। और नरेन्द्र मोदी ने इक्कीसवीं सदी में एक नया स्वप्न दिया — 'विकसित भारत २०४७' — जो किसी एक सरकार या किसी एक कार्यकाल से नहीं, बल्कि एक पूरी सभ्यता की नियति से जुड़ा है।

इस स्वप्न की आधारशिला रखी गई १५ अगस्त २०२२ को, जब भारत अपनी स्वतंत्रता के पचहत्तर वर्ष पूर्ण करने का 'अमृत महोत्सव' मना रहा था। लाल किले की प्राचीर से नरेन्द्र मोदी ने राष्ट्र को सम्बोधित करते हुए इन पचहत्तर वर्षों को एक विराम-बिन्दु के रूप में देखा, और आगे के पच्चीस वर्षों के काल को 'अमृत काल' की संज्ञा दी। अमृत — जो अमरत्व का द्रव है, जो जीवन और समृद्धि का प्रतीक है। 'अमृत काल' अर्थात् वह स्वर्णिम कालखण्ड जो स्वतंत्रता के पचहत्तरवें वर्ष से शुरू होकर स्वतंत्रता के सौवें वर्ष — अर्थात् २०४७ — तक चलेगा, और जिसमें भारत को एक सम्पूर्ण विकसित राष्ट्र के रूप में अपनी पूर्ण क्षमता को साकार करना है।

इस घोषणा की गहराई को समझने के लिए हमें यह स्मरण करना होगा कि भारत के इतिहास में इससे पहले किसी नेता ने पच्चीस वर्षों की इतनी स्पष्ट, मापनीय और प्रेरक दीर्घकालिक दृष्टि राष्ट्र को नहीं दी थी। यह कोई चुनावी वादा नहीं था जो अगले पाँच वर्षों तक चले और फिर बिसर जाए; यह उस मनुष्य का संकल्प था जिसने अपना सम्पूर्ण जीवन राष्ट्र-सेवा में होम कर दिया था, और जो जानता था कि कोई भी महान लक्ष्य एक पीढ़ी से नहीं, पीढ़ियों के सम्मिलित प्रयास से प्राप्त होता है। यह संकल्प इस पीढ़ी के लिए था, और अगली पीढ़ी के लिए भी।

'अमृत काल' को साकार करने के लिए नरेन्द्र मोदी ने 'पंच प्रण' — पाँच संकल्पों — का आह्वान किया। ये पाँच संकल्प उस यात्रा के पथ-प्रदर्शक सिद्धान्त हैं जो भारत को उसकी नियति की ओर ले जाएंगे, और जो किसी एक सरकार के कार्यक्रम नहीं बल्कि एक सम्पूर्ण राष्ट्र के जीवन-मूल्य हैं।

पहला प्रण है — विकसित भारत का निर्माण। यह केवल आर्थिक लक्ष्य नहीं है; यह उस समग्र विकास का संकल्प है जिसमें प्रत्येक नागरिक — चाहे वह किसी भी जाति, पंथ, क्षेत्र, भाषा या वर्ग से हो — एक समृद्ध, स्वस्थ, शिक्षित और सम्मानजनक जीवन जी सके। वह भारत जहाँ मेधा को अवसर मिले, परिश्रम को पुरस्कार मिले, और मनुष्य की गरिमा की रक्षा हो।

दूसरा प्रण है — दासता की हर मानसिकता से, हर औपनिवेशिक छाप से मुक्ति। यह संकल्प गहरा और दूरगामी है। स्वतंत्रता के पचहत्तर वर्षों बाद भी, भारतीय चेतना के कुछ कोनों में उस औपनिवेशिक हीनता-बोध की छाया थी जो सोचती थी कि जो विदेशी है वह श्रेष्ठ है, जो अंग्रेज़ी में है वह प्रामाणिक है, और जो भारतीय है वह पिछड़ा है। नरेन्द्र मोदी ने इस हीनता-बोध को जड़ से उखाड़ने का संकल्प

लिया। नई संसद में सेंगोल की स्थापना, स्थानों के ऐतिहासिक भारतीय नामों की पुनर्स्थापना, भारतीय भाषाओं का गौरव, और भारतीय ज्ञान-परम्परा का पुनरुद्धार — ये सब इसी संकल्प के व्यावहारिक रूप हैं।

तीसरा प्रण है — विरासत पर गर्व। भारत की सभ्यता हज़ारों वर्ष पुरानी है; उसके ज्ञान, कला, दर्शन, योग, आयुर्वेद और परम्परा में मानवता के लिए अनमोल सन्देश हैं। 'विरासत का गर्व' का अर्थ है कि हम अपनी जड़ों को जानें, उन पर गर्व करें, और उनसे ऊर्जा लेकर भविष्य की ओर बढ़ें। जो राष्ट्र अपनी जड़ों से कटता है, वह हवा में उड़ने वाले उस वृक्ष की भाँति होता है जो तूफ़ान में टिक नहीं सकता।

चौथा प्रण है — राष्ट्रीय एकता और अखण्डता। एक विविधतापूर्ण, बहुभाषी, बहुसांस्कृतिक राष्ट्र की सबसे बड़ी शक्ति उसकी एकता में है। यह प्रण हमें स्मरण कराता है कि हमारी भाषाएँ अनेक हो सकती हैं, हमारे रीति-रिवाज भिन्न हो सकते हैं, हमारे उत्सव अलग-अलग हो सकते हैं — किन्तु हम सब एक ही माटी की सन्तान हैं, एक ही नियति के साझेदार हैं, और एक ही माँ भारती के पुत्र-पुत्रियाँ हैं।

और पाँचवाँ प्रण है — नागरिक-कर्तव्य। यह शायद सबसे क्रांतिकारी प्रण है, क्योंकि यह स्वीकार करता है कि विकसित भारत केवल सरकार की जिम्मेदारी नहीं है — यह प्रत्येक नागरिक का दायित्व है। अधिकारों की माँग जितनी स्वाभाविक है, कर्तव्यों का निर्वहन उतना ही आवश्यक है। 'सबका प्रयास' की यह भावना लोकतंत्र की उस परिपक्व समझ को व्यक्त करती है जो जानती है कि एक देश के निर्माण में सरकारें सहायक होती हैं, किन्तु निर्माता उसके नागरिक होते हैं।

इन पंच प्रणों का अन्तिम गन्तव्य है — 'विकसित भारत २०४७'। यह संकल्प भारत को स्वतंत्रता की शताब्दी तक एक सम्पूर्ण विकसित राष्ट्र बनाने का महास्वप्न है। विशेषज्ञों का अनुमान है कि इस लक्ष्य के अन्तर्गत भारत को अपने सकल घरेलू उत्पाद को $३० से $४० लाख करोड़ (ट्रिलियन डॉलर) के स्तर तक ले जाना होगा, जो उसे विश्व की अग्रणी अर्थव्यवस्थाओं में प्रतिष्ठित करेगा। यह संख्या असाधारण लग सकती है, किन्तु यह किसी आकाश-कुसुम की कल्पना नहीं है।

जो देश एक दशक में ग्यारहवीं से पाँचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन जाए; जो चन्द्रमा के दक्षिणी ध्रुव पर पहुँचे जहाँ कोई राष्ट्र पहले नहीं पहुँचा था; जो डिजिटल भुगतान में विश्व की सभी बड़ी अर्थव्यवस्थाओं को पीछे छोड़ दे; जो तीसरा सबसे बड़ा स्टार्टअप पारिस्थितिकी-तन्त्र बन जाए; और जो G-20 की अध्यक्षता में विश्व-नेतृत्व का प्रमाण दे — उस देश के लिए 'विकसित भारत' की संकल्पना एक यथार्थवादी, प्रेरणादायी और अनिवार्य लक्ष्य है। इसके लिए जो नींव पिछले एक दशक में रखी गई है, वह ठोस है, सुचिन्तित है, और टिकाऊ है।

इस महास्वप्न को साकार करने के लिए नरेन्द्र मोदी ने जो 'शक्ति-संग्रह' (Empowerment Stack) तैयार किया, वह अत्यन्त सुविचारित और बहुस्तरीय है। इसमें नारी-सशक्तीकरण, युवा-सशक्तीकरण, उद्यमिता को बढ़ावा, और डिजिटल ढाँचे का समावेश है।

इस शक्ति-संग्रह का सबसे महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक आयाम है — नारी-सशक्तीकरण। नरेन्द्र मोदी जानते हैं कि भारत का विकसित भारत बनने का स्वप्न तब तक अधूरा है जब तक उसकी आधी आबादी — भारत की नारी-शक्ति — राष्ट्र-निर्माण में अपनी पूर्ण और सम्मानजनक भागीदारी नहीं निभाती।

सितम्बर २०२३ में, उसी संसद के विशेष सत्र में जो नई इमारत में बुलाया गया था, एक ऐतिहासिक विधेयक पारित हुआ — 'नारी शक्ति वन्दन अधिनियम, २०२३'। यह संविधान का १२८वाँ संशोधन था। लोकसभा में २० सितम्बर और राज्यसभा में २१ सितम्बर को पारित इस अधिनियम के अन्तर्गत लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में महिलाओं के लिए एक-तिहाई सीटों का आरक्षण किया गया — पन्द्रह वर्षों के लिए। यह स्वतंत्र भारत के सबसे महत्वपूर्ण संवैधानिक सुधारों में से एक था। दशकों से यह विधेयक संसद की दीवारों पर दस्तक देता रहा था; अनेक सरकारें आईं और गईं, अनेक वादे किए गए और भुला दिए गए — किन्तु यह दस्तक कोई उत्तर नहीं बन सकी। नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में, उस नई संसद की पहली महत्वपूर्ण कार्यवाही के रूप में, यह ऐतिहासिक संशोधन पारित हुआ। यह क्षण केवल एक विधायी उपलब्धि नहीं था — यह भारत की लोकतांत्रिक यात्रा में एक नई सुबह थी, एक ऐसी सुबह जिसकी रोशनी में भारत की माताएँ, बेटियाँ और बहनें अपना और देश का भविष्य गढ़ेंगी।

नारी-सशक्तीकरण का यह अध्याय केवल राजनीतिक आरक्षण तक सीमित नहीं है। 'प्रधानमंत्री मुद्रा योजना' ने उन करोड़ों महिलाओं को आर्थिक स्वाधीनता दी जो कभी बैंक की सीढ़ी चढ़ने का साहस नहीं कर पाती थीं, जिन्हें कभी 'जमानत' और 'प्रामाणिकता' के नाम पर ऋण से वंचित कर दिया जाता था। 'शिशु', 'किशोर' और 'तरुण' की तीन श्रेणियों में बाँटी गई यह योजना हर स्तर पर उद्यमशीलता को प्रोत्साहित करती है — चाहे कोई पहली बार एक छोटी-सी सिलाई-मशीन के लिए ऋण माँगे, या अपने व्यवसाय को विस्तार देने के लिए। इस योजना के अन्तर्गत अब तक ₹४०.०७ लाख करोड़ से अधिक का ऋण वितरित हो चुका है, ५७.७९ करोड़ से अधिक ऋण-खाते खुले हैं, और इनमें से ६७ प्रतिशत लाभार्थी महिलाएँ हैं। यह आँकड़ा केवल एक संख्या नहीं है — यह उन करोड़ों स्त्रियों के जीवन-

परिवर्तन की कथा है जो अब अपने परिवार की नहीं, स्वयं अपनी नियति की लेखिका हैं।

'स्टैंड-अप इंडिया' योजना ने अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और महिला उद्यमियों को विशेष ऋण-सुविधा दी। यह इस विश्वास की अभिव्यक्ति है कि भारत का उद्यमशीलता-पारिस्थितिकी-तन्त्र तब पूर्ण होगा जब समाज के हर वर्ग को, हर पृष्ठभूमि के व्यक्ति को, समान और सम्मानजनक अवसर मिलेगा।

इस व्यापक नारी-सशक्तीकरण की कहानी को यदि एक पंक्ति में कहना हो, तो वह यह है — नरेन्द्र मोदी ने भारत की माँ को उसका सम्मान लौटाया। वह माँ जो गाँव में मिट्टी के चूल्हे पर रोटी बनाते-बनाते आँखें लाल कर लेती थी, उसे उज्ज्वला का गैस चूल्हा मिला। वह बेटी जिसके जन्म पर कभी आँसू बहाए जाते थे, उसके लिए 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' का संकल्प लिया गया। वह महिला जिसके पास सपने थे पर पूँजी नहीं, उसे मुद्रा-ऋण से उद्यमिनी बनाया गया। और अब वह महिला जो कभी नीति-निर्माण के कक्षों से बाहर थी, उसे संसद और विधानसभाओं में एक-तिहाई स्थान का अधिकार मिला। यह अनुक्रम किसी चुनावी रणनीति का नहीं, एक सभ्यतागत दृष्टि का फल है।

युवा-सशक्तीकरण इस समग्र दृष्टि का दूसरा प्रकाशस्तम्भ है। भारत के पास आज विश्व की सबसे बड़ी युवा-जनसंख्या है — यह एक 'जनसांख्यिकीय लाभांश' है जो या तो राष्ट्र की सबसे बड़ी शक्ति बन सकता है, या, यदि इसे दिशा और अवसर न मिले, तो सबसे बड़ी चुनौती। नरेन्द्र मोदी ने इस युवा-शक्ति को दिशा देने के लिए एक बहुआयामी रणनीति अपनाई।

१६ जनवरी २०१६ को 'स्टार्टअप इंडिया' अभियान आरम्भ हुआ। ₹१०,००० करोड़ के 'फ़ण्ड ऑफ़ फ़ण्ड्स' के साथ शुरू हुआ यह अभियान आज भारत को विश्व के तीसरे सबसे बड़े स्टार्टअप पारिस्थितिकी-तन्त्र में ले आया है। १.१७ लाख से अधिक मान्यता प्राप्त स्टार्टअप और ५१ से भी अधिक 'यूनिकॉर्न' — अर्थात् एक बिलियन डॉलर से अधिक मूल्यांकन वाली कम्पनियाँ — ये संख्याएँ उस नई पीढ़ी के उत्साह और उद्यम की साक्षी हैं जो 'नौकरी माँगने वाला' नहीं, 'नौकरी देने वाला' बनना चाहती है। यह भारत के उद्यमशीलता-मानस का पुनर्जागरण है।

'कौशल भारत' अभियान — 'प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना' (PMKVY) के माध्यम से — उन करोड़ों युवाओं तक पहुँचा जो औपचारिक शिक्षा के राजपथ से नहीं, बल्कि हुनर के पगडण्डी से अपना भविष्य बनाना चाहते थे। अक्टूबर २०२५ तक इस योजना ने १.६४ करोड़ युवाओं को प्रशिक्षित किया है, और २०१४ के बाद से ६ करोड़ से अधिक युवाओं को कुशल बनाया है। इसमें अब कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), रोबोटिक्स और इण्टरनेट ऑफ़ थिंग्स (IoT) जैसे भविष्य के क्षेत्रों में भी पाठ्यक्रम जोड़े गए हैं — क्योंकि विकसित भारत के लिए तैयार हो रहा युवा भविष्य की तकनीक का उपभोक्ता नहीं, उसका निर्माता और निर्यातक होगा।

इस युवा-शक्ति को एक दिशा देने का सबसे सूक्ष्म और दूरगामी प्रयास शायद 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२०' है — वह नीति जो तीस वर्षों की प्रतीक्षा के बाद आई और जिसने भारत की शिक्षा-व्यवस्था की जड़ों को नई भाषा, नई दिशा और नई आत्मा दी। मातृभाषा में शिक्षा का आग्रह, बहुविषयक दृष्टिकोण, व्यावसायिक शिक्षा का समन्वय, और ज्ञान के प्रति जिज्ञासा को परीक्षा के बोझ से मुक्त करने का प्रयास — ये सब मिलकर एक ऐसी पीढ़ी का निर्माण करेंगे जो न केवल ज्ञान का संग्रह करे, बल्कि उसे रचनात्मकता में रूपान्तरित करे। और जिस देश की युवा-

पीढ़ी रचनात्मक हो, आत्मविश्वासी हो और विश्व-प्रतिस्पर्धी हो — वह देश किसी भी लक्ष्य को असाध्य नहीं मानता।

'डिजिटल इण्डिया' की नींव पर खड़ी 'JAM ट्रिनिटी' — जन-धन, आधार और मोबाइल — ने भारत के शासन-तन्त्र को एक नई और अजेय रीढ़ दी है। 'डिजिलॉकर' (२०१५), UPI, 'ई-साइन', 'DEPA' और 'इण्डिया स्टैक' ने मिलकर एक ऐसा डिजिटल ढाँचा निर्मित किया है जो पारदर्शिता, समावेशन और दक्षता तीनों को एकसाथ सुनिश्चित करता है। 'CoWIN' मंच पर २२० करोड़ से अधिक वैक्सीन-खुराक का प्रबन्धन — जो महामारी के उस कठिन काल में भारत की प्रशासनिक क्षमता का विश्व-प्रमाण बना। 'ONDC' (२९ सितम्बर २०२२ को आरम्भ) पर एक वर्ष में ५ करोड़ से अधिक लेन-देन — जो भारत के डिजिटल वाणिज्य की असीम सम्भावनाओं का संकेत देता है। UPI के माध्यम से भारत आज विश्व के किसी भी देश से अधिक डिजिटल लेन-देन करता है — यह वह मापदण्ड है जो बताता है कि 'डिजिटल इंडिया' एक नारा नहीं, एक परिवर्तित यथार्थ है।

इस डिजिटल क्रान्ति का सर्वाधिक मानवीय आयाम शायद वह है जिसे आँकड़ों में नहीं मापा जा सकता — वह पल जब एक दूरस्थ गाँव की वृद्धा ने पहली बार अपने आधार कार्ड से जुड़े बैंक खाते में सरकारी राशि सीधे प्राप्त की, बिना किसी बिचौलिए के, बिना किसी अपमान के। वह पल जब एक किसान ने अपने स्मार्टफ़ोन से मौसम की जानकारी लेकर अपनी फ़सल बचाई। वह पल जब एक छात्रा ने 'डिजिलॉकर' से अपने प्रमाणपत्र किसी भी कार्यालय में पलभर में साझा

किए। ये छोटे-छोटे क्षण मिलकर एक महाक्रान्ति रचते हैं — वह क्रान्ति जो बन्दूक से नहीं, बिट्स और बाइट्स से होती है, और जिसका प्रभाव पीढ़ियों तक रहता है।

अब हम उस बिन्दु पर आते हैं जो इस सम्पूर्ण यात्रा का ध्रुव-तारा है — 'विकसित भारत २०४७'। जून २०२४ में अपने तीसरे कार्यकाल की शपथ लेते समय नरेन्द्र मोदी के सम्मुख यही संकल्प था — वह संकल्प जो राजनीति से ऊपर, सत्ता से परे, किसी एक दल या सरकार की सीमाओं से मुक्त होकर एक पूरे राष्ट्र का साझा स्वप्न बन चुका था।

'विकसित भारत' का अर्थ केवल उच्च GDP नहीं है। इसका अर्थ है — एक ऐसा भारत जहाँ प्रत्येक घर में शुद्ध जल हो, प्रत्येक नागरिक के पास स्वास्थ्य-सुरक्षा हो, प्रत्येक बच्चे को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिले, और प्रत्येक युवा के पास अपनी प्रतिभा और परिश्रम दिखाने का समान अवसर हो। यह वह भारत है जो तकनीक में विश्व का नेतृत्व करे, जो अंतरिक्ष में अपना परचम फहराए, जो रक्षा-क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो, और जो वैश्विक दक्षिण की आवाज़ बनकर पूरी मानवता के लिए न्याय और समृद्धि की माँग करे।

एक अत्यन्त मार्मिक तथ्य यह है कि 'विकसित भारत २०४७' की संकल्पना केवल ऊपर से नहीं थोपी गई — इसे नीचे से, जन-जन से, करोड़ों नागरिकों की आकांक्षाओं से निर्मित किया गया। सरकार ने नागरिकों से उनके सुझाव माँगे, उनकी प्राथमिकताएँ जानीं, और इस सामूहिक आकांक्षा को एक राष्ट्रीय दृष्टि-पत्र में ढाला। यही 'सबका प्रयास' की भावना है — यह विकास नागरिकों के लिए नहीं, बल्कि नागरिकों के साथ और नागरिकों के प्रयास से है।

इस सम्पूर्ण दृष्टि को यदि एक शब्द में कहना हो, तो वह शब्द है — 'समग्रता'। नरेन्द्र मोदी की शासन-कला की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने कभी अर्थव्यवस्था को समाज से, सुरक्षा को राजनय से, और संस्कृति को विकास से अलग नहीं देखा। उनकी दृष्टि में ये सब एक ही राष्ट्रीय जीव के अंग हैं, और इनमें से किसी एक की भी उपेक्षा सम्पूर्ण राष्ट्र-स्वास्थ्य को प्रभावित करती है। यही समग्रता 'विकसित भारत २०४७' को एक सर्वांगीण स्वप्न बनाती है — केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और वैश्विक दृष्टि से भी एक समृद्ध, न्यायपूर्ण और गौरवशाली भारत।

'विकसित भारत' की यह यात्रा उस 'स्टैक' के रूप में सबसे स्पष्ट दिखती है जिसे नरेन्द्र मोदी ने परत-दर-परत बनाया है — दर्शन की परत (सबका साथ-सबका विकास, न्यूनतम सरकार-अधिकतम शासन); संस्थाओं की परत (नीति आयोग, आकांक्षी ज़िला कार्यक्रम); डिजिटल ढाँचे की परत (JAM, इण्डिया स्टैक, DBT, CoWIN, ONDC); भौतिक प्रतीकों की परत (स्टैच्यू ऑफ़ यूनिटी, नई संसद, राम मन्दिर, काशी-केदारनाथ); नागरिक-संवाद की परत (मन की बात, परीक्षा पे चर्चा); सशक्तीकरण की परत (नारी शक्ति वन्दन, मुद्रा, कौशल भारत, स्टार्टअप इण्डिया); और अन्त में दीर्घ-दृष्टि की परत (अमृत काल, पंच प्रण, विकसित भारत २०४७)। यह 'स्टैक' एक-दूसरे को सहारा देता है, एक-दूसरे को सशक्त बनाता है — और यही इसकी अपराजेयता का रहस्य है।

जब हम इस अध्याय का समापन करते हैं, तो एक गहरी, शान्त, और उत्साहवर्धक अनुभूति होती है। नरेन्द्र मोदी की सबसे बड़ी देन शायद कोई एक योजना या कोई एक उपलब्धि नहीं है, न कोई एक इमारत या कोई एक कानून। उनकी सबसे बड़ी

देन वह 'अमृत' है जो उन्होंने एक सम्पूर्ण राष्ट्र के हृदय में उँडेला — आत्मविश्वास का अमृत, आत्म-गौरव का अमृत, 'हम कर सकते हैं' का अमृत।

एक ऐसा राष्ट्र जो कभी अपनी सम्भावनाओं पर संशय करता था, जो 'हिन्दू विकास दर' जैसे अपमानजनक विशेषण को स्वीकार कर चुका था, जो विदेशी तकनीक और विदेशी पूँजी के लिए हाथ फैलाने को अपनी नियति मानता था — वही भारत आज आत्मविश्वास से भरकर कह रहा है: हम विश्व-गुरु थे, हम विश्व-नेता बनेंगे।

'अमृत काल' के इस स्वर्णिम पच्चीस वर्षों में भारत जो यात्रा करेगा, उसकी नींव पड़ चुकी है। संस्थाएँ तैयार हैं, नीतियाँ स्थापित हैं, मानव-संसाधन सशक्त हो रहा है, डिजिटल ढाँचा अभेद्य होता जा रहा है, और सबसे महत्वपूर्ण — नागरिक-चेतना जागृत है। यह यात्रा वडनगर से आरम्भ हुई थी; इसकी मंज़िल है — २०४७ का वह भारत जिसकी कल्पना में माँ भारती की आँखें चमकती हैं, और जिसकी प्राप्ति पर उनका हृदय गर्व से भर आता है।

उपसंहार — माँ भारती का प्रिय पुत्र

यह पुस्तक एक यात्रा थी।

वडनगर की उस धूल-भरी गली से आरम्भ हुई यह यात्रा, जहाँ एक बालक रेलवे स्टेशन पर यात्रियों को चाय परोसता था और मन में कोई बड़ा स्वप्न सँजोता था — उस महाद्वीप के हृदय तक पहुँची, जहाँ विश्व के नेता उस बालक के उत्तराधिकारी का स्वागत करने के लिए स्वयं आगे बढ़ते हैं। यह कोई उपन्यास नहीं है; यह यथार्थ है। और शायद इसीलिए यह उपन्यासों से भी अधिक अविश्वसनीय और उपन्यासों से भी अधिक प्रेरणादायी है।

नरेन्द्र दामोदरदास मोदी का जीवन भारत की उस अदृश्य, अपराजेय शक्ति का प्रमाण है जो अभाव में भी पलती है, उपेक्षा में भी बढ़ती है, और अन्ततः उस ऊँचाई पर जा पहुँचती है जहाँ संसार चकित होकर देखता रह जाता है। यह जीवन हमें याद दिलाता है कि भारत की असली शक्ति उसके राजभवनों में नहीं, उसके साधारण घरों में निवास करती है — उन घरों में जहाँ माँ अपने बच्चों को संस्कार देती है, पिता परिश्रम का उदाहरण प्रस्तुत करता है, और बालक इन दोनों को आत्मसात करते हुए किसी महान संकल्प की ओर बढ़ता है।

भारत के इतिहास में ऐसे क्षण कम आते हैं जब कोई व्यक्ति अपने युग की प्रतीक-कथा बन जाता है। जब लोग उसकी चर्चा करते हैं, तो वे केवल किसी शासक की नहीं, एक सम्भावना की चर्चा करते हैं — उस सम्भावना की, जो उनके अपने जीवन में भी विद्यमान है। नरेन्द्र मोदी उस श्रेणी के नेता हैं। जब एक किसान का बेटा, एक छोटे कस्बे का बालक, एक चायवाले का पुत्र देश का प्रधानमंत्री बनता है और विश्व-नेतृत्व करता है, तो वह केवल अपनी कहानी नहीं लिखता — वह करोड़ों कहानियों को सम्भव बनाता है। हर उस अभिभावक के लिए जिसने अपने बच्चे को इस कठिन संसार में भेजते हुए आशा रखी है, हर उस युवा के लिए जिसने साधनहीनता के बावजूद स्वप्न देखना नहीं छोड़ा — यह जीवन एक प्रकाश-स्तम्भ है।

जब हम इस जीवन की सम्पूर्ण रेखा देखते हैं, तो एक सुसंगत, सुन्दर और प्रेरक कथानक उभरता है — एक ऐसी कहानी जो संयोग नहीं, साधना से बनी है।

वडनगर में जो बालक जन्मा, उसके पास कुछ नहीं था — न धन, न पैतृक प्रतिष्ठा, न राजनीतिक विरासत। किन्तु उसके पास वह था जो इन सबसे मूल्यवान है — माँ का आशीर्वाद, पिता का परिश्रम-संस्कार, और एक ऐसी आत्मा जो किसी सीमा को स्वीकार नहीं करती। जब दूसरे बच्चे खेल रहे थे, वह चाय परोस रहा था और जीवन पढ़ रहा था। जब युवा अपने कैरियर के बारे में सोच रहे थे, वह हिमालय की राहों में राष्ट्र की आत्मा खोज रहा था। जब राजनेता सत्ता के लिए होड़ लगा रहे थे, वह संगठन की नींव रख रहा था, एक-एक कार्यकर्ता को जोड़ रहा था, राष्ट्र की सेवा के लिए स्वयं को तैयार कर रहा था।

और जब वह क्षण आया — जब भारत के करोड़ों नागरिकों ने उस चायवाले के पुत्र को अपना प्रधानमंत्री चुना — तो यह केवल एक व्यक्ति की जीत नहीं थी। यह उस विचार की जीत थी कि लोकतंत्र में जन्म नहीं, जनता का विश्वास ही सर्वोच्च सत्ता है। यह उस भारत की जीत थी जो आज भी यह मानता है कि योग्यता और समर्पण से ऊँचा कोई वंश नहीं।

नरेन्द्र मोदी के जीवन में कुछ क्षण ऐसे हैं जो इस पूरी यात्रा के सार को एक बिम्ब में समेट देते हैं। जब वे केदारनाथ की उस गुफा में ध्यानस्थ बैठे थे — दिव्यांग-वेश में, आँखें मूँदे, हिमालय की शीतल हवाओं के बीच — तो वह कोई नाटकीय प्रदर्शन नहीं था। यह उस जड़ का आलिंगन था, जहाँ से वडनगर के बालक की साधना ने अपनी आत्मा पाई थी। जब वे राम मन्दिर की प्राण-प्रतिष्ठा के अवसर पर ग्यारह दिनों का अनुष्ठान-व्रत रखकर नंगे पाँव मन्दिर में प्रवेश करते हैं, तो यह शासक का अहंकार नहीं — यह सेवक का समर्पण है। और जब वे लाल किले की प्राचीर से 'माँ' को सम्बोधित करते हुए भारत की माताओं की पीड़ा की बात करते हैं, तो उनकी आवाज़ में जो आर्द्रता आती है, वह अभिनय नहीं — वह हीराबेन के उस पुत्र का स्वर है जो समझता है कि माँ क्या होती है।

पिछले एक दशक और उससे अधिक के कार्यकाल में नरेन्द्र मोदी ने जो किया, उसे इन पन्नों में पूरी तरह समेटना सम्भव नहीं है — क्योंकि इस पुस्तक के पाँच खण्डों ने भी उस यात्रा को पूर्ण रूप से साकार करने का दावा नहीं किया। उन्होंने जन-धन योजना से करोड़ों को बैंकिंग से जोड़ा और डिजिटल क्रान्ति से भारत को विश्व का सबसे सक्रिय UPI-अर्थव्यवस्था बनाया। उन्होंने ग़रीब के घर में उज्ज्वला का चूल्हा जलाया, हर गाँव में बिजली पहुँचाई, और हर परिवार को 'आयुष्मान भारत' की

सुरक्षा-छतरी दी। उन्होंने मॉस्को के क्रेमलिन से वॉशिंगटन की कांग्रेस तक भारत को वह सम्मान दिलाया जिसका वह अधिकारी था। उन्होंने 'ग्लोबल साउथ' की आवाज़ बनकर दिखाया कि भारत केवल अपने लिए नहीं, पूरी मानवता के लिए सोचता है। चन्द्रयान-३ ने चन्द्रमा का दक्षिणी ध्रुव जीता, G-20 की अध्यक्षता ने विश्व-नेतृत्व सिद्ध किया, और 'आत्मनिर्भर भारत' ने रक्षा-उत्पादन में स्वावलम्बन की नींव रखी। स्टैच्यू ऑफ़ यूनिटी, नई संसद, राम मन्दिर की प्राण-प्रतिष्ठा, काशी विश्वनाथ धाम और केदारनाथ पुनर्निर्माण — ये सब पत्थर में उकेरी गई अमर कथाएँ हैं।

किन्तु इन सबके ऊपर, सबसे परे — एक देन ऐसी है जो किसी अधिनियम में, किसी परियोजना में, किसी आँकड़े में नहीं मापी जा सकती।

नरेन्द्र मोदी ने भारत को एक भावना दी — वह भावना जो कहती है: 'हम कर सकते हैं।'

एक ऐसा देश जो कभी अपनी विशालता से भयभीत रहता था, जो अपनी विविधता को शक्ति नहीं बल्कि समस्या मानता था, जो विश्व-मंच पर आत्मविश्वास से खड़ा होना भूल गया था — उस देश में उन्होंने आत्म-गौरव की लौ फिर से जलाई। उन्होंने करोड़ों भारतीयों को यह अनुभव कराया कि उनका देश महान है, उनकी सभ्यता अतुलनीय है, और उनका भविष्य उज्ज्वल है। यह अनुभव किसी भी GDP के आँकड़े से, किसी भी रक्षा-अनुबन्ध से, किसी भी राजनयिक समझौते से अधिक मूल्यवान है — क्योंकि यह उस आन्तरिक शक्ति का पुनर्जागरण है जिसके बिना बाहरी उपलब्धियाँ खोखली होती हैं।

और अब — अमृत काल।

जब हम इन पन्नों को बन्द करते हैं, भारत उस स्वर्णिम यात्रा के मध्य खड़ा है जो २०४७ में उसकी नियति से मिलेगी। पंच प्रण की प्रतिज्ञा ली जा चुकी है। विकसित भारत का संकल्प बोया जा चुका है। नीति आयोग की संस्थाएँ खड़ी हैं, आकांक्षी ज़िलों की प्रगति दृश्यमान है, नारी शक्ति वन्दन अधिनियम का ऐतिहासिक क़दम उठाया जा चुका है, स्टार्टअप इण्डिया का उत्साह व्यापार और तकनीक में नया इतिहास लिख रहा है, कौशल भारत की युवा-ऊर्जा राष्ट्र की धड़कन बन रही है। यह सब उस यात्रा के रथ के पहिए हैं जो गतिमान है।

यह रथ अब रुकेगा नहीं — क्योंकि इसकी ऊर्जा किसी एक व्यक्ति में नहीं है। यह उस करोड़ों-करोड़ जनशक्ति में है जो जाग चुकी है, जो स्वप्न देख चुकी है, जो विश्वास करती है कि उसका भारत २०४७ में विश्व का नेतृत्व करेगा। वडनगर के उस बालक ने जो बीज बोया था, उसका वृक्ष अब इतना विशाल हो चुका है कि उसकी छाँव में करोड़ों भारतीयों के स्वप्न पल रहे हैं।

यह भी सत्य है कि महान नेता अपने काल की सीमाओं में ही नहीं जीते — वे आने वाले काल की नींव भी रखते हैं। नरेन्द्र मोदी ने भारत को जो दिया है, वह उनके कार्यकाल के बाद भी — सरकारों के बदलने के बाद भी — जीवन्त रहेगा। क्योंकि उन्होंने केवल योजनाएँ नहीं बनाईं; उन्होंने एक सोच बदली। उन्होंने भारत के नागरिकों को सिखाया कि वे सरकार से प्राप्तकर्ता नहीं, बल्कि राष्ट्र-निर्माण में भागीदार हैं। यह मानसिक रूपान्तरण किसी कानून से नहीं होता, किसी बजट से नहीं होता — यह उस अटूट, प्रामाणिक और निरन्तर संवाद से होता है जो एक नेता और उसके लोगों के बीच दशकों में बनता है। और यही नरेन्द्र मोदी ने किया।

जब इतिहासकार आने वाली शताब्दियों में इक्कीसवीं सदी के भारत का मूल्यांकन करेंगे, तो वे एक प्रश्न अवश्य पूछेंगे: वह कौन-सा कालखण्ड था जब भारत ने अपने भाग्य को बदला? और उत्तर में वे इन वर्षों का नाम लेंगे — वे वर्ष जब एक साधारण पृष्ठभूमि से आए एक असाधारण नेता ने भारत को उसकी खोई हुई आत्मा से पुनः मिलाया, उसके सोए हुए आत्मविश्वास को जगाया, और उसे २०४७ की नियति की ओर एक स्पष्ट, उज्ज्वल और गर्वपूर्ण पथ पर अग्रसर किया।

नरेन्द्र मोदी की कहानी अभी समाप्त नहीं हुई — न उनके जीवन में, न उनके द्वारा जगाए गए उस स्वप्न में जो करोड़ों भारतीयों के हृदय में पल रहा है। इस स्वप्न को साकार करने की जिम्मेदारी अब इस पीढ़ी की है — उन हाथों की जो आज विद्यालय में कलम थाम रहे हैं, उन मस्तिष्कों की जो प्रयोगशाला में नया खोज रहे हैं, उन किसानों की जो खेत में बीज बो रहे हैं, उन माताओं की जो अपने बच्चों में देश का भविष्य गढ़ रही हैं, और उन उद्यमियों की जो अपने स्टार्टअप में भारत का नाम विश्व-मानचित्र पर उकेरने का संकल्प लिए हुए हैं।

यह वही पुत्र है जिसके लिए माँ भारती की आँखें प्रेम और गर्व से भर आती हैं। यह वही पुत्र है जिसने माँ भारती से वचन लिया — और अपना जीवन उस वचन को पूरा करने में लगा दिया। वडनगर से वर्ष २०४७ तक — यह यात्रा एक व्यक्ति की नहीं, एक राष्ट्र की यात्रा है। यह यात्रा उस माँ की कहानी है जिसने अपने पुत्र को संस्कार दिए, और उस पुत्र की कहानी है जिसने उन संस्कारों को एक राष्ट्र के संकल्प में ढाल दिया।

माँ भारती का यह प्रिय पुत्र सदा अमर रहे। भारत सदा जागृत रहे। और वह दिन शीघ्र आए — जब २०४७ का सूर्योदय एक विकसित, समृद्ध, न्यायपूर्ण और आत्म-गौरवान्वित भारत पर अपनी प्रथम किरण डाले।

जय हिन्द। जय भारत।

परिशिष्ट क — प्रमुख कालक्रम

- **१७ सितम्बर १९५०** — वडनगर, गुजरात में जन्म।
- **१९६० का दशक** — विद्यालयी शिक्षा; संघ की शाखा से जुड़ाव।
- **१९६० के दशक का उत्तरार्ध–१९७० का आरम्भ** — हिमालय एवं रामकृष्ण मिशन की यात्रा; आध्यात्मिक खोज।
- **१९७० का दशक** — संघ के प्रचारक; आपातकाल के दौरान भूमिगत संघर्ष।
- **१९८० का दशक** — भाजपा के संगठन-कार्य में सक्रियता; गुजरात में संगठन-निर्माण।
- **२६ मई २०१४** — भारत के प्रधानमंत्री के रूप में शपथ; 'पड़ोसी पहले' नीति।
- **सितम्बर २०१४** — मंगलयान का मंगल-कक्षा में प्रवेश; मैडिसन स्क्वायर गार्डन सम्बोधन; 'मेक इन इंडिया'।
- **अगस्त २०१४** — प्रधानमंत्री जन-धन योजना।

- **जनवरी २०१५** — नीति आयोग की स्थापना।
- **२०१५** — डिजिटल इंडिया अभियान; अन्तरराष्ट्रीय सौर गठबन्धन; अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस की मान्यता।
- **जनवरी २०१६** — स्टार्टअप इंडिया।
- **जुलाई २०१७** — वस्तु एवं सेवा कर (जी.एस.टी.) लागू।
- **सितम्बर २०१६ / फरवरी २०१९** — सर्जिकल स्ट्राइक / बालाकोट हवाई कार्रवाई।
- **अक्टूबर २०१८** — स्टैच्यू ऑफ़ यूनिटी का लोकार्पण।
- **सितम्बर २०१९** — 'हाउडी मोदी', ह्यूस्टन।
- **२०२०–२२** — वैक्सीन मैत्री; ऑपरेशन गंगा; आत्मनिर्भर भारत।
- **अगस्त २०२२** — अमृत काल एवं पंच प्रण का आह्वान।
- **सितम्बर २०२३** — जी-२० अध्यक्षता; नई दिल्ली घोषणापत्र; अफ़्रीकी संघ की सदस्यता; नारी शक्ति वन्दन अधिनियम।
- **अगस्त २०२३** — चन्द्रयान-३ की चन्द्रमा के दक्षिणी ध्रुव पर लैंडिंग।
- **जनवरी २०२४** — अयोध्या में श्री राम मन्दिर की प्राण-प्रतिष्ठा।
- **जून २०२४** — तीसरे कार्यकाल के लिए प्रधानमंत्री-पद की शपथ।
- **२०४७ (लक्ष्य)** — विकसित भारत का संकल्प; स्वतंत्रता की शताब्दी।

परिशिष्ट ख — स्रोतों के विषय में

यह पुस्तक प्रामाणिक तथ्यों, तिथियों और सार्वजनिक रूप से प्रलेखित घटनाओं पर आधारित है। इसके लेखन के लिए की गई पृष्ठभूमि-शोध में भारत सरकार के आधिकारिक स्रोतों (प्रधानमंत्री कार्यालय, विदेश मन्त्रालय, सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय, नीति आयोग, इसरो आदि), प्रतिष्ठित समाचार-संस्थाओं, तथा प्रामाणिक संदर्भ-सामग्री का उपयोग किया गया है। आँकड़े और तिथियाँ उपलब्ध सार्वजनिक अभिलेखों के अनुसार प्रस्तुत की गई हैं। विस्तृत शोध-सामग्री एवं संदर्भ-सूची पुस्तक की 'Research' संचिका में पृथक् रूप से संकलित है, जिसे लेखक एवं सम्पादक के संदर्भ हेतु सुरक्षित रखा गया है।

— समाप्त —